भगवान् के दशो अवतारों में से नृसिंहावतार के भक्तों के उपकार के लिये श्रीव्यासजी ने इस नृसिंहपुराण को रचा है और यों तो इसमें उन्हों ने सर्ग, प्रतिसर्ग, मन्वन्तर तथा भगवान् के सब अवतारों की कथा और अनेक भक्तोंके चरित्र वर्णन किये हैं पर विशेष करके नृसिंह भगवान् के चरित्रों का अति विस्तारपूर्वक वर्णन है। इसके सिवाय सूर्य तथा सोमवंशी प्रधान समराहों के चरित्र ऐसे ढंगसे वर्णन किये हैं कि जिनके पढ़ने सुनने से मनुष्य के हृदय में एक अति अपूर्व प्रकाश होकर अवश्यही भक्ति उत्पन्न होती है। भगवान् अपने भक्तों की रक्षा में कैसे तत्पर हैं और कैसे सहाय करते हैं यह बात इसके पठन से अच्छी प्रकार दृष्टित होती है नृसिंहचौदश आदि व्रतोंका विधान और पूजनकी युक्ति भी इसमें वर्णितहै॥

वास्तविक इस पुराण के भाषानुवाद से सर्व साधारण और विशेषकर भगवान् नृसिंह के भक्तों का बड़ा उपकार हुआ क्योंकि योंतो सभी पुराणों में नृसिंहावतार का थोड़ा बहुत वर्णन है पर इसमें विधिपूर्वक सबवृत्तान्त वर्णन किया गया है और भाषा होजाने से सबलोग पढ़कर उसके आशय को समझसक्ते हैं॥

आशा है कि सर्व साधारण इसे आदरपूर्वक ग्रहण करेंगे॥

द० मैनेजर अवध अख़बार
लखनऊ मुहल्ला हज़रतगंज

अथ नरसिंहपुराण भाषा का सूचीपत्र ॥

नरसिंहपुराण भाषा का सूचीपत्र।

इति ॥



नरसिंहपुराण भाषा ॥

पहिला अध्याय ॥

श्लोक ॥

लक्ष्मीनृसिंहो कुरुते प्रणम्य भाषान्तरं विप्रमहेशदत्तः ।
होती व अन्तभी कैसे होता सुतामल्पधियां मनोज्ञम् ॥१॥
है व चतुर्युगी किसे कहते हैं १९ इन ...
षता कौन सी है व कलियुग में और युगों की अपेक्षा
कौन विशेषता है मनुष्यों को छोड़ और लोग नृसिंह
भगवान् की ... कैसे करते हैं २० तीर्थ कौन ...
बहुत ... सर्वज्ञ ज्ञानरूपी ... ...रारहित है ...
जनको मुक्ति की इच्छा होती वे लक्ष्मीके पाने की इच्छा के
करते ... अपना ... सत्ययुग तीनसे गुणने
...दिकोंने सबके संग अखण्ड व एकसे गुणानेसे कलि-
खण्ड क्रम २ से बढ़कर जन्य वर्षोंके हजाराको आगेके
... बढ़ते २ बहुत बड़ा है हैं इन सब युगों में अपने २
... की विष्णु का ... अनुसार संध्या होती है १२ व
...ध्यांश भी सबका ही उतना होता है जितनी २ सन्ध्या

प्रज्वलित अग्नि के तुल्य नेत्रवाले व वज्र से भी अधिक नखों से स्पर्श करनेहारे दिव्यसिंह तुम्हारे नमस्कार है १ क्षेत्ररूपी हिरण्यकशिपु दैत्य की छाती के रुधिररूप कीचड़ के लगजानेसे लाल नृसिंहजी के हलरूप नखों के अग्रभाग आपलोगों की रक्षाकरें २ वेद के पारगामी त्रिकालदर्शी महात्मा हिमवान् पर्वतपरके वासी व नैमिषारण्यके रहनेवाले मुनिलोग ३ और जो अर्बुद नाम वन के निवासी पुष्करारण्यवासी महेन्द्रपर्वत के रहनेवाले व विन्ध्याचलपरके निवासी ४ धर्मारण्य के रहनेवाले दण्डकारण्य के बसनेवाले श्रीपर्वत परके वासी व कुरुक्षेत्रके निवासी ५ कौमारपर्वतपरके निवासी व पम्पासरके तीरके रहनेहारे ये व और भी बड़ेशुद्ध मुनिलोग अपने२शिष्योंसहित ... में स्नान करने के लि... जपादि ...

इति॥

लोमहर्षणजी से सबमुनियों के आगे बैठेहुये भरद्वाजजी ने पूछा १३ कि हे सूत! शौनक के महायज्ञ में पूर्व समय इन मुनियोंसहित हमने वाराहसंहिता तुमसे सुनी थी १४ अब इससमय तुमसे नारसिंहपुराणसंहिता सुनाचाहते हैं व ये सब मुनिलोगभी सुननेहीकी इच्छासे यहां बैठे हैं १५ इससे हम तुमसे यह प्रश्न इन सब महात्मा महातेजस्वी बहुत कुछ जाननेवाले मुनियोंके आगे करते हैं १६ यह संसार कहांसे उत्पन्न होता है व इसकी पालना कौन करता व यह चराचर जगत् अन्त में लीन किसमें होता है १७ पृथ्वी का प्रमाण कितना है व नृसिंह देवदेव किससे प्रसन्न होते हे महाभाग! यह सब हमसे वर्णन करो १८ सृष्टि की आदि कैसे होती व अन्तभी कैसे होता युगों की गणना कैसे होती है व चतुर्युगी किसे कहते हैं १९ इन सबयुगों में विशेषता कौन सी है व कलियुग में और युगों की अपेक्षा कौन विशेषता है मनुष्यों को छोड़ और लोग नृसिंह भगवान् की [illegible] कैसे करते हैं २० तीर्थ कौन [illegible] बहुत [illegible] सर्वज्ञ ज्ञानरूपी [illegible] [illegible]राहित है व [illegible] [illegible]नको मुक्ति की इच्छा होती व उसीके पाने की इच्छा के [illegible]रते हैं २ [illegible] अपना [illegible] सत्ययुग तीनसे गुणने [illegible]दिकोंने सबकेसंग अण्डके व एकसे गुणनेसे कलि[illegible]ण्ड क्रम २ से बढ़कर जल [illegible] वर्षोंके हजारोंको आगेके [illegible] बढ़ते २ बहुत बड़ा है हैं इन सब युगों में अपने २ [illegible] की विष्णु का [illegible] अनुसार संध्या होती है १२ व [illegible]ध्यांश भी सबका ही उतना होता है जितनी २ सन्ध्या

हम सब पुराण जानते हैं अब उन्हीं के प्रणाम कर
नरसिंहपुराण आपलोगों से कहते हैं २४ पराशरमुनि
के पुत्र परमपुरुष जगत् व देवताओंके उत्पन्न करनेके
स्थान सब विद्यावान् बड़ीमति देनेवाले वेद व वेदाङ्गोंसे
जाननेकेयोग्य निरन्तर शान्तचित्त विषयवासना को
निवृत्तकियेहुये शुद्धतेज से प्रकाशित सबपापरहित
श्रीवेदव्यासजी के सबप्रकार से हम नमस्कार करते
हैं २५ व जिनके प्रसाद से इस वासुदेवजी की कथा को
हम कहेंगे उन अमिततेजस्वी भगवान् व्यासजी के
नमस्कार करते हैं २६ हे भरद्वाजजी! जो प्रश्न आपने
बहुत निर्णयकरके किया है वह बड़ाभारी है विना
श्रीविष्णु भगवान् के प्रसादसे कोई भी इसका उत्तर
नहीं देसक्ता २७ तथापि नृसिंहजीहीके प्रसाद से इस
[illegible]मय महापुण्यदायक पुराण कहेंगे भरद्वाजजी हमसे
श्रवणकरो २८ व हे सबमुनिलोगो! आप लोगभी अ-
पने २ शिष्यों के साथ बैठेहुये नृसिंहपुराण सुनो हम
जैसा का तैसा वर्णनकरते हैं २९

इति ॥

वंशानुचरित येही पुराणोंके पांच लक्षण हैं अर्थात् जिस में सृष्टि सृष्टि के नानाप्रकारके भेद वंश मन्वन्तरोंकी कथा व सूर्य चन्द्रवंशी राजाओं व सब अवतारों की कथा हो उसे पुराण कहते हैं ३३ इसलिये प्रथम महत्तत्त्वादि आदि सृष्टिका वर्णन फिर अनुसर्ग इन्द्रिय सहित देव विराट्की उत्पत्ति फिर वंशों का वर्णन फिर मन्वन्तरों की कथा तदनन्तर सूर्य चन्द्रवंश्यादि राजा आदिकों की व अवतारोंकी कथा कहते हैं ३४ हे ब्राह्मणो! प्रथम महदादि आदि सृष्टि कहते हैं क्योंकि २ उसीसे लेकर देवताओं व राजाओंके चरित होते हैं ३५ सृष्टिके प्रथम व प्रलय के पीछे कुछभी नहीं रहताहै केवल अपने एकान्तस्थलमें सनातन परब्रह्म परमात्मा रहता है ३६ वह ब्रह्म कहाता है व एकही रहता दूसरा कोई नहीं केवल प्रकाशमात्र रहता व सबके प्रकाश होनेका कारण वही होता वह नित्य है निरञ्जन कुछ करता धरता नहीं शान्तरूप रजोगुण सत्त्वगुण तमोगुणसे रहित रहता व नित्य निर्मल शुद्ध है ३७ फिर वह ब्रह्म आनन्दसागर स्वच्छ सर्वज्ञ ज्ञानरूपी अज नाशरहित है ३१
जिनको मुक्ति की इच्छा होती वे उसीके पाने की इच्छा के
करते हैं २ ...र्तन ... अपना अ... सत्ययुग तीनसे गुणाने
...दिकोंने सबके संग अण्डके व एकसे गुणानेसे कलि-
अण्ड क्रम २ से बढ़कर जद्ध वर्षोंके हजारोंको आगेके
... बढ़ते २ बहुत बड़ा हो हैं इन सब युगों में अपने२
...ओं की विष्णु का ...अनुसार संध्या होती है १२ व
...ध्यांश भी सबका ही उतना होता है जितनी२ सन्ध्या

में समर्थ श्रीविष्णु भगवान् अप्रकटरूप होकर ६१ जोकि ब्रह्मस्वरूपी आप है जब पैठा तो वह अण्ड फूटा उसके गर्भ के जल से सब समुद्र होगये ६२ व उसी अण्ड में से पर्वत, द्वीप, समुद्र प्रकाश व सब देवता, असुर, मनुष्यादि उत्पन्न होगये ६३ व श्री विष्णु भगवान् का एक रजोगुणी स्वरूप ब्रह्मा के नाम से प्रसिद्ध होकर जगत्‌की सृष्टि करनेमें उद्यत हुआ ६४ व जो २ सृष्टि फिर उन विष्णुरूपी ब्रह्माजी ने की उसकी रक्षा श्रीभगवान् विष्णुजी नृसिंहादिरूप धारण करके करनेलगे ये परमेश्वर विष्णु के रूप प्रत्येक कल्प के किसी २ युग में होते हैं फिर अन्त में वही विष्णु रुद्रका रूप धर संहार करते हैं ६५ वे परमेश्वर पुराण-पुरुष विष्णु ब्रह्मा के रूप से सृष्टि करते व पालन की इच्छा से श्रीरामचन्द्रादिरूप धारणकर पालते व रुद्र-रूप हैं संहार करते हैं ॥ ६६ ॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेसृष्टिकथनेप्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

दूसरा अध्याय ॥

...ध्यायमहँ, सृष्टिप्रलयसविधान ।
...पतजी, मुनिसोंसहितबखान ॥ १ ॥

...गजादि मुनियों से बोले कि ...स प्रकार जगत् की सृष्टि क... ...ने कहतेहैं भरद्वाज म... ...वान् ब्रह्मा ... ...पन्न कर...

उत्पन्न ... रस है ४६ । ... दित करलेता है ... रस गन्धसे यह ...

वास्तवमें वे नित्य हैं यह उत्पन्न होना केवल कथनमात्र है २ पर जैसा कैसा उत्पन्न होना हो जब ब्रह्मा उत्पन्नहोते तो उनकी आयुष् उनके वर्षोंके प्रमाण से सौवर्ष की होती है वह आयुषकाल बीतते २ परिणामको प्राप्त होती है ३ अब अन्य चर वा अचर पृथ्वी पर्वत समुद्र वृक्षादिकोंकी आयु बताते हैं सुनिये ४ उनमें प्रथम मनुष्यों के काल की संख्या तुम से कहते हैं अठारह निमेष की एक काष्ठा होती है ५ व तीसकाष्ठा की एक कला तीसकलाका एक मुहूर्त्त व तीसमुहूर्त्तोंका मनुष्यों का एक रात्रिदिन होता है व तीस रात्रिदिनका एक मास होता है और एक मास में दो पक्ष होते हैं ६ छ मासों का एक अयन होता व उत्तरायण व दक्षिणायन के भेदसे दो होते हैं दक्षिणायन देवताओं की रात्रि है व उत्तरायण दिन कहाता है ७। ८ दो अयनों का मनुष्यों का वर्ष होता है व मनुष्यों के एकमास में पितरों का रात्रिदिन होता है ९ व वस्वादिकों के रात्रि दिन में मनुष्यों का एक वर्ष होता है देवताओं के १२००० वर्ष में सत्ययुगादि सब युग होते हैं १० उन चारोंयुगों के जानने की रीति हमसे सुनो देवताओं के १२००० को चारसे गुणाकरनेसे सत्ययुग तीनसे गुणाने से त्रेता दोसे गुणानेसे द्वापर व एकसे गुणानेसे कलियुग होता है ११ बस दिव्य वर्षोंके हजारोंको आगेके बुद्धिमानोंने चार युग कहे हैं इन सब युगों में अपने २ भों की संख्या के अनुसार संध्या होती है १२ व न्ध्यांश भी उतनाही उतना होता है जितनी २ सन्ध्या

होती है इससन्ध्या व सन्ध्यांश के बीचमें जितना काल होता है १३ उसीको सत्ययुग, त्रेता, द्वापरादिकाल कहते हैं उनका क्रम सत्य त्रेता द्वापर व कलियुग यह है १४ जब ये चारोंयुग हजारबार बीतते हैं तो ब्रह्माजी का एकदिन होता है व हे ब्रह्मन्! ब्रह्माजी के एकदिन में चौदह मन्वन्तर बीतते हैं १५ अब कालका किया हुआ मन्वन्तरोंका प्रमाण हमसे सुनो प्रत्येक मन्वन्तर में सप्तर्षि इन्द्र मनु मनुके पुत्र १६ ये सब एकही समय में उत्पन्न कियेजाते व एकही समय में नष्ट कियेजाते हैं इकहत्तर चौयुगी का एक मन्वन्तर होता है १७ यही समय उसके मनु व इन्द्रादिकों का होता है यह स्पष्टतापूर्व्वक यों है कि देवताओंके बारहहजार वर्षों में सत्ययुग त्रेता द्वापर कलियुग चारोयुग बीतजाते हैं१८उनमें देवताओं के चारहजार वर्ष अर्थात् मनुष्यों के १७२८००० वर्षोंका सत्ययुग होता है व देवताओं के तीन हजार वर्ष अर्थात् मनुष्योंके १२९६००० वर्षों का त्रेतायुग होता है १९ व देवताओं के दोसहस्र वर्ष अर्थात् मानुषों के ८६४००० वर्षोंका द्वापरयुग होता है इसीप्रकार देवताओं के एक सहस्र अर्थात् मनुष्यों के ४३२००० वर्ष का कलियुग होता है २० व जो युग देवताओं के जितने हजार वर्षों का होता है उतनेही सौवर्षों की सन्ध्या युग के आदि में होती है व उतनाही सन्ध्यांश युग के अन्त में होता है २१ जैसे कि देवताओं के चार हजार वर्षोंका सत्ययुग हो सु तो उसमें ४०० वर्षों की सन्ध्या व ४०० वा स

सन्ध्यांश सब ८०० में पैठगये तब ब्रह्माजी ने अपने
त्रेता में ६०० वर्ष व द्वार और पुरुष उत्पन्नकिया ७
२०० वर्ष मिले होते हैं हे मुस्कर बायेंहाथ के अँगूठे
व सन्ध्यांश के बीच में जितना व ने उस स्त्री में स्वा-
क्रा वह युग कहाता है २३ व सत्य, अत्सवजीसे फिर
के नाम से प्रसिद्ध रहता है इन्हीं सत्यादि ब्रह्माजी
की एकचौयुगी कहाती है जब हजार चौयुगी व्या
जाती हैं तो ब्रह्मा का एक दिन होता है २४ प्रत्येक मन्व
न्तर में मनुष्यों के वर्षों के प्रमाण से ३०६७२००००
तीस किरोड़ सतसठ लाख बीस हजार वर्ष होते हैं
व इन्हीं तीस किरोड़ आदि के चौदह गुने अर्थात्
४२९४०८०००० चार अर्ब उन्तीस किरोड़ चालीस
लाख अस्सीहजार मनुष्यों के वर्षों का ब्रह्म
एक दिन होता है-२५ इतनेही वर्षों के पीछे ब्रह्मा
का नैमित्तिक प्रलय होता है इसमें सब सृष्टि को अपने
में करके हरि भगवान् सो रहते हैं २६ फिर जब रात्रि
वीतजाती है व ब्रह्माजी जागते हैं तो देवता, पितृ, ग-
न्धर्व, विद्याधर, राक्षस, यक्ष, दैत्य, गुह्यक, मनुष्यादिकों
की सृष्टि करते हैं २७ ऐसेही फिर दिनके अन्त में
सोरहते इस प्रकार जब ब्रह्माजी सौवर्ष जीते हैं उसमें
प्रत्येक दिन में सृष्टि करते व रात्रि में सोते हैं २८ ब्रह्मा
की आयुष् के पीछे महाप्रलय होता है इसको ब्रह्मकल्प
कहते हैं इसीमें मत्स्यजी का अवतार हुआ था २९
इस कल्प के पीछे वाराहकल्प हुआ जिसमें श्रीविष्णु
भगवान् ने अपने मन से वाराहावतार धारणकिया ३०

होती है इससन्ध्या व सन्ध्यांश के बीच आनेके लिये हुआ
होता है १३ उसीको सत्ययुग स्तुति की ३१ इसमें भी
कहते हैं उनका क्रम सत्य में ब्रह्माजी के प्रलय के पीछे
है १४ जब ये चारोंयुग हैं उदर के भीतरकर नारायण भग-
का एकदिन होता शेषजी के ऊपर शयनकर रहते हैं ॥ ३२ ॥
में चौदह मन्नरसिंहपुराणेसर्गरचनायां द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥
हुआ मन्
ने स्

तीसरा अध्याय ॥

दो० पुनि तृतीय अध्याय महँ, सृष्टिहि केर बखान ।
कीन सूत मुनिसों बहुत, विधिसों सहित विधान ॥ १ ॥

सूतजी बोले कि, हे महाभाग ! उस महाप्रलय के जलमें शेषनाग के ऊपर सोते हुये श्रीनारायण भगवान् की नाभीसे कमल जामा उससे वेदवेदाङ्गों के पारगामी ब्रह्माजी उत्पन्नहुये १ उनसे उन्होंने कहा कि, हे महामतिवाले ! सृष्टिकरो ऐसा कहकर नारायण प्रभु अन्तर्द्धान होगये २ अच्छा हम सृष्टि करेंगे यह कह ब्रह्माजी उन्हीं विष्णु भगवान् की चिन्तना करनेलगे परन्तु उन्हें जगत् के उत्पन्नकरने का कुछ बीज न मिला कि उससे सृष्टि करते ३ तब इस बातपर ब्रह्माजी के बड़ा क्रोध उत्पन्न हुआ उस क्रोधसे उत्पन्नहोकर उनकी गोदमें आकर एक बालक बैठगया ४ व रोदन करनेलगा ब्रह्माजी ने रोंका भी पर उसने नहीं माना कहा कि मेरानाम क्या है तो ब्रह्माजीने कहा तुम्हारा रुद्रनाम है ५ पर तुम सृष्टि करो ब्रह्माजी के ऐसा कहनेपर उन्होंने सृष्टि करना चाहा पर कर न सके उसीजल में स्नानकर तपकरने

लगे ६ जब रुद्र उस जल में पैठगये तब ब्रह्माजी ने अपने दहिने हाथ के अँगूठेसे एक और पुरुष उत्पन्नकिया ७ उस पुरुष का दक्षनाम धराया फिर बायेंहाथ के अँगूठे से उनकी स्त्री को उत्पन्नकिया दक्ष ने उस स्त्री में स्वायम्भुव मनु को उत्पन्न किया ८ उन स्वायम्भुवजीसे फिर सृष्टि हुई इसप्रकार सृष्टि की इच्छा कियेहुये ब्रह्माजी से सृष्टि होतीहै वह तुमसे हमने कही अब और क्या सुना चाहते हो ९ यह सुनकर भरद्वाज मुनिने पूछा कि हे लोमहर्षण तुमने यह सृष्टि हम से संक्षपरीति से कही अब विस्तारपूर्वक वर्णनकरो १० सूतजी बोले कि इसप्रकार जब ब्रह्माजी कल्प के पीछे सोकर उठे तो उन बड़े बलवान् ब्रह्माजी ने सबलोक शून्य देखा ११ ये ब्रह्माजी नारायण भगवान् की ही मूर्त्ति हैं इससे अचिन्त्य व सब से प्रथम हैं न इनका आदि है न अन्त है १२ क्योंकि नारायण भगवान् के विषय में यह श्लोक पढ़ाजाता है जिनकी मूर्त्ति ब्रह्माजी हैं व आप ब्रह्म हैं इसजगत् के उत्पन्नहोने व नाश के कारण हैं १३ जलों को नार कहते हैं व नर के पुत्रों को जल कहते हैं व जल पूर्वसमय में उनका (अयन) स्थान था इस से वे नारायण कहाते हैं १४ जब ब्रह्माजीने पूर्वसमय के अनुसार सृष्टिकरने की इच्छा की तो अकस्मात् उनके शरीर से तम उत्पन्नहुआ १५ उस तमके पाँच नाम हैं तम, मोह, महामोह, तामिस्र, अन्धतामिस्र ये पाँच अविद्या की गाँठें हैं बस उन्हीं ब्रह्माजी से इस अविद्या की उत्पत्तिहुई १६ इन्हीं अविद्यारूप पाँचों

तमोंसे यह सृष्टि सब ओरसे आच्छादित रहती है सृष्टि
जाननेवाले पण्डितोंने इन्हीं को मुख्य सृष्टि कहाहै १७
जिससे कि दूसरी वार ध्यानकरनेसे ये पाँच प्रकारके
अन्धकार उत्पन्नहुयेथे इसीसे इनको तिर्य्यक्स्रोत क-
हते हैं व इनसे जो सृष्टि होती वह तिर्य्यग्योनि कहाती
है १८ ये सब पशुगण व कुमार्गगामी लोग इसी तिर्य-
ग्योनि में हैं इस सृष्टिकोभी असाधक मान चारमुख-
वाले ब्रह्माजी ने १९ ऊर्ध्वस्रोतनाम तीसरी सृष्टि बनाई
उससे प्रसन्न होकर उन्होंने अन्य सृष्टिके रचने की इच्छा
की २० इच्छाकरतेही उनकी सृष्टि की बड़ी वृद्धि हुई
उस सृष्टि का अर्वाक्स्रोत नाम हुआ मनुष्य सब प्रकार
के इसी सृष्टि में हैं ये सब सब कार्यों के साधक हैं २१
इनमें नव प्रकार हैं व सब मनुष्य तमोगुण और रजो-
गुण को धारणकरते हैं इसीसे ये कर्मकरने में दुःखभी
पातेरहते हैं पर फिर २ वैसेही कर्म कियाकरते हैं २२
हे मुनिसत्तम! यह बहुत प्रकार की सृष्टि तुमसे हमने
कही पहिली तो महत्तत्त्वादिकों की सृष्टि है दूसरी उन
के गुणों की २३ तीसरी उनके विकारों की जो कि
इन्द्रियों की सृष्टि कहाती है व चौथी स्थावरों की सृष्टि
है यह मुख्य सृष्टि कहाती है २४ व जो तिर्य्यक्स्रोत
कहाती है वह तिर्य्यग्योनि पशुओंकी सृष्टिहै यह पांचईं
सृष्टि हुई इसके पीछे ऊर्ध्वस्रोतस्सृष्टि जो देवसृष्टि
कहाती है यह छठी है २५ इसके पीछे अर्वाक्स्रोतः
मनुष्यों की सृष्टि हुई यह सातईं है आठईं अनुग्रह
सृष्टि जो सात्विकी सृष्टि कहाती है २६ नवईं रुद्रसृष्टि

इस नव प्रकार की सृष्टि में पांच तो वैकृत कहाती हैं जो महदादिकों के विकारों से होती हैं व तीन प्राकृत हैं जो प्रकृति से उत्पन्न होती हैं व एक जानो सबसे प्रथम परमेश्वर की इच्छाहैहीहै २७ येही प्राकृत व वैकृत दोनोंप्रकार की सृष्टियां जगत् का मूलकारण हैं जो सब ब्रह्माजी के सृष्टिकरने के समय उत्पन्नहुई जिनका वर्णन हमने आपसे किया २८ इन सब प्रत्येक विकारों की सृष्टि वह अनन्त भगवान् परम परेश नारायण अपनी मायामें स्थित होकर करता है जब कि वह अपनी इच्छा से प्रेरित होताहै व उसमें सम्पूर्ण विद्या विद्यमान हैं॥ २९ ॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेसृष्टिरचनानामतृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

चौथा अध्याय ॥

दो० चौथे महँ पुनि सृष्टिकर, वर्णन कीन्ह्यो सूत।
जासु सुने नर होत है, सृष्टि ज्ञान मज़बूत ॥ १ ॥

भरद्वाजजी ने पूछा कि आपने कहा कि अप्रकट जन्मवाले ब्रह्माजी से नव प्रकार की सृष्टि हुई सो वह कैसे बढ़ी यह हमसे कहिये १ सूतजी बोले कि प्रथम ब्रह्माजी ने मरीच्यादि मुनियों की सृष्टि की उनके नाम ये हैं मरीचि, अत्रि, अङ्गिरा, पुलह, क्रतु २ पुलस्त्य, प्रचेता, भृगु, नारद व वसिष्ठ ३ फिर सनकादिकों की सृष्टि हुई ये लोग निवृत्तिमार्ग में युक्तहुये व मरीच्यादि प्रवृत्तिमार्गपर आरूढ़हुये उन लोगों के विवाह व पुत्रादिभी हुये पर नारदजी मुक्तिमार्गके अधिकारी

हुये ४ और जो दक्षप्रजापति ब्रह्माजी के अङ्गसे उत्पन्न हुये उनकी कन्याओं की सन्तान से सब जगत् भर-गया ५ देवता दानव गन्धर्व सर्प पशुपक्ष्यादि सब ये परम धार्मिक दक्षजी की कन्याओंसेही उत्पन्नहुये ६ चार प्रकार के चर अचर प्राणी उन्हीं दक्षजी की सृष्टि में उत्पन्न हुये व सब वृद्धि को पहुँचे ७ ये मरीचि से लेकर वसिष्ठ पर्यन्त सब ऋषिलोग जोकि ब्रह्माजी के मानसी पुत्र थे सब के सब अनुसर्ग के करनेवाले हुये ८ सृष्टिमें सब प्राणियों को व बुद्धि इन्द्रियों को वेही महात्मा श्रीनारायणजी उत्पन्न करते हैं फिर वेही ब्रह्मा व ऋषियों की मूर्त्ति धारणकर सब प्राणियों को उत्पन्न करते हैं ॥ ९ ॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेचतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

पांचवां अध्याय ॥

दो० पँचयें महँ पुनि गुनि कही, सृष्टि अनेक प्रकार ।
जामहँ कश्यप युवति की, सन्ततिकर विस्तार ॥ १ ॥

भरद्वाजमुनि ने फिर प्रश्न किया कि हे सूतजी ! अब प्रथम हमसे रुद्रसर्ग की उत्पत्ति कहिये फिर मरी-च्यादिकों ने जिस प्रकार सृष्टि की उसका वर्णन कीजिये १ व इसका भी वर्णन कीजिये कि प्रथम ब्रह्माजी के मन से उत्पन्न वसिष्ठजी मित्रावरुण के पुत्र कैसे होगये २ यह सुनकर सूतजी बोले कि रुद्र की सृष्टि व उनके प्रतिसर्ग व मुनियों के भी प्रतिसर्ग कहते हैं सुनो ३ जब प्रलय के पीछे ब्रह्माजी हुये तो उन्होंने अपने

समान पुत्र होने का ध्यानकिया इतने में उनकी गोद में नील व अरुणरङ्ग का एक बालक उत्पन्न होकर आबैठा ४ उस बालक के शरीर में आधे अङ्ग तो स्त्री के थे व आधे पुरुष के पर अतिप्रचण्ड शरीर धारण किये अपने तेज से सब दिशाओं व विदिशाओं को प्रकाशित कराता था ५ उस बालक को तेज से प्रकाशित देख ब्रह्माजी बोले कि हे महामतिवाले! हमारे कहनेसे अब तुम अपने को अलग २ बांटदो ६ हे ब्राह्मणदेव! जब ब्रह्माजी ने ऐसा कहा तो रुद्ररूपी उस बालक ने अपने रूप को दो ठिकाने कर दिया उससे एक स्त्री का स्वरूप दूसरा पुरुष का होगया ७ फिर उस पुरुष में दश और होगये इसलिये ग्यारह स्वरूप होगये उन ग्यारहों के नाम कहते हैं हे मुनिसत्तम! सुनो ८ अजेकपात्, अहिर्बुध्न, कपाली, रुद्र, हर, बहुरूप, त्र्यम्बक, अपराजित ९ वृषाकपि, शम्भु, कपर्दी व रैवत ये ग्यारह रुद्र कहाये जो सब भुवनों के स्वामी हैं १० फिर रुद्रजी ने उस स्त्री में भी दश और स्त्रियां करदीं जिससे वे भी ग्यारह होगईं परन्तु उन सबों का नाम एक उमा यही रहा वेही बहुतरूपों से सब मूर्त्तियों को प्राप्तहोती रहीं ११ फिर उन महाउग्र तेजस्वी रुद्रजी ने जल में बहुत दिनोंतक अतिघोर तपकिया तप करने के पीछे उन प्रतापी रुद्रजी ने बड़ी सृष्टि की १२ पर तपोबल से विविधप्रकार की उनकी सृष्टि हुई किसी के तो पिशाचों के से मुख हुये किसी २ के सिंहों के समान किसी २ के ऊंटों के किसी २ के मकरों के समान

मुख हुये १३ भूत, प्रेत, पिशाच, डाकिनी, ब्रह्मराक्षस विनायकादि साढ़े तीस किरोड़ अति भयंकर उग्रस्वभाव प्राणी उत्पन्नहुये १४ फिर अन्यकार्य के लिये स्कन्दजी को उत्पन्नकिया इसप्रकार हमने तुमसे रुद्र की सृष्टि कही १५ अब मरीच्यादिकों से जो अनुसष्टि हुई उसे कहते हैं सुनो देवताओंसे लेकर पर्वत वृक्षादि स्थावर पर्यन्त सब प्रजाओं को ब्रह्माजी ने उत्पन्नकिया १६ परन्तु जब ऐसी सृष्टिकरने से उनकी प्रजा न बढ़ीं तो उन्होंने मरीच्यादि पुत्रों को मन से उत्पन्नकिया १७ उनके नाम ये हैं मरीचि, अत्रि, अङ्गिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, प्रचेता, वसिष्ठ व भृगु १८ ये नव ब्रह्माजी के मानसीपुत्र पुराणों में निश्चित हैं अग्नि व पितर लोग ये भी दोनों ब्रह्माजी के मानसीही पुत्र हैं १९ जब सृष्टि का समय आया तो ब्रह्माजी से स्वायम्भुव राजा उत्पन्नहुये फिर शतरूपा नाम कन्या उत्पन्नकर स्वायम्भुव को ब्रह्माजीने स्त्री बनाने के लिये दिया २० उन स्वायम्भुव महाराज से शतरूपाजी ने प्रियव्रत व उत्तानपाद दो पुत्र व प्रसूतिनाम कन्या उत्पन्न किया २१ स्वायम्भुवजी ने उस अपनी प्रसूति कन्या को दक्षजी को दिया प्रसूति में दक्षजी ने २४ कन्या उत्पन्न कीं २२ उन दक्ष की २४ कन्याओं के नाम हमसे सुनिये श्रद्धा, प्रीति, धृति, तुष्टि, पुष्टि, मेधा, क्रिया २३ बुद्धि, लज्जा, वपु, शान्ति, सिद्धि व कीर्त्ति इन तेरहों को धर्मजीने अपनी स्त्रियां बनाने के लिये ग्रहणकिया २४ उन श्रद्धादि स्त्रियोंमें कामादि पुत्र धर्म से उत्पन्नहुये इससे

उनके पुत्र पौत्रादिकों से धर्म का वंश बढ़ा २५ उन
तेरहों के पीछे जो छोटी ११ और कन्याहुईं उनके नाम
हमसे सुनो सम्भूति, अनसूया, स्मृति, प्रीति, क्षमा २६
सन्नति, सत्या, तुर्य्या, ख्याति-ख्याति के मातरिश्वा व
सत्यवान् दो पुत्र हुये २७ फिर उनमें दशईं स्वाहा नाम
कन्याहुई व ग्यारहईं स्वधा इनसबोंको दक्षजीने मरी-
च्यादि ऋषियों [illegible] २८ मरीच्यादिकों के जो पुत्र
हुये उनको हम [illegible] कहते हैं सुनो सम्भूति नाम
मरीचि की स्त्री [illegible] मुनि को उत्पन्नकिया २९ व
अङ्गिराजी की स्मृतनाम स्त्री ने सिनीबाली, कुहू, राका
व अनुमति इन चार कन्याओं को उत्पन्नकिया ३० व
अत्रि की स्त्री अनसूया ने पापरहित चन्द्रमा दुर्वासा व
योगिराज दत्तात्रेयनाम तीन पुत्र उत्पन्नकिये ३१ व जो
अग्नि अभिमानी पुत्र ब्रह्माजीके मानसी हुयेथे उनसे
उनकी स्वाहानाम स्त्री में तीन पुत्र हुये ३२ एक पावक
दूसरा पवमान तीसरा शुचि इनके फिर अग्नि हुये ३३
इनमें पिता पुत्र पौत्र सब मिले हुये हैं सब ४९ अग्नि
कहाते हैं रूप भी सबों का एकही प्रकार का है ३४ व
ब्रह्माजीने जो पितरों को उत्पन्न किया था जिनको
हमने तुमसे कहा था उनसे उनकी स्वाहानाम स्त्री में
मेना व वैधारिणी दो कन्या उत्पन्नहुईं ३५ ब्रह्माजी ने
पूर्वकाल में दक्षजी से प्रजा उत्पन्न करने के लिये
आज्ञा दी थी जैसे उन्होंने प्रजाओं की उत्पत्ति की हम
कहते हैं सुनो ३६ दक्षजी ने प्रथम मनहीसे देवता,
ऋषि, गन्धर्व, असुर व नागादिकों को उत्पन्नकिया ३७

जब उनके मन से उत्पन्न देवता असुरादि न बढ़े तो उन्होंने सृष्टि के हेतु बड़ा विचारकरके ३८ मैथुन धर्म से विविधप्रकार की प्रजाओं को उत्पन्नकिया उसका क्रम यह है कि प्रथम उन्होंने वीरणप्रजापति की कन्या असिक्नी के संग अपना विवाहकिया ३९ उसमें उन्होंने साठ कन्या उत्पन्न कीं यह बात हमने सुनी है उनमें दश तो धर्मको दीं व तेरह कश्यपजी को ४० सत्ताईस चन्द्रमा को चार अरिष्टनेमि को दो बहुपुत्र को दो अङ्गिरा को ४१ दो बड़े पण्डित कृशाश्व को अब इन सबोंके पुत्रकन्यादि हमसे सुनो विश्वासे विश्वेदेव उत्पन्नहुये व साध्या ने साध्यों को उत्पन्नकिया ४२ मरुत्वती में मरुत्वान् हुये वसुनाम में वसुलोग भानुनाम में सब भानुलोग हुये व मुहूर्त्तामें मुहूर्त्तज सब देवता हुये ४३ लम्बा में घोषादिअहीरोंके ग्राम उत्पन्नहुये व जामि में नागवीथी उत्पन्नहुईं व अन्य सब पृथ्वी के विषय मरुत्वती में उत्पन्नहुये ४४ संकल्पाके संकल्प नाम पुत्र हुआ व जो एकही बल प्राण के बहुतसे देवगण हैं उनकी संख्या व नाम सुनो ४५ जैसे कि वसु ८ हैं उनके नाम ये हैं आप, ध्रुव, सोम, धर्म, अनिल, अनल ४६ प्रत्यूष व प्रभास यही आठ वसु हैं इनके पुत्र व पौत्रादि सैकड़ों हजारों हैं ४७ साध्यगण बहुत हैं उनके पुत्र सहस्रों हैं अदिति, दिति, दनु, अरिष्टा, सुरसा, स्वसा ४८ सुरभि, विनता, क्रोधवशा, इरा, कद्रू, मुनि, धर्मज्ञा ये कश्यपजीकी स्त्रियां हैं इनके पुत्रों नाम हमसे सुनो ४९ कश्यपजीसे अदिति में आ

सुन्दर बारहपुत्र उत्पन्नहुये उनके नाम हम तुमसे कहते हैं सुनो ५० भग, अंशु, अर्यमा, मित्र, वरुण, सविता, धाता, विवस्वान् ५१ त्वष्टा, पूषा, इन्द्र व विष्णु और कश्यप से दिति नाम स्त्री में दो पुत्र हुये यह बात हमने सुनीहै ५२ एक महाशरीरवान् हिरण्याक्ष जिसको भगवान् वाराहजी ने मारा व एक हिरण्यकशिपु जिसे श्रीभगवान् नृसिंहजी ने मारा ५३ औरभी बहुत दिति के पुत्र दैत्य हुये हैं व दनुनाम स्त्री के सब दानव हुये व कश्यपजीसे अरिष्टा में सब गन्धर्व उत्पन्नहुये ५४ सुरसा में सब विद्याधरों के बहुतसे गण उत्पन्नहुये व कश्यपजी ने सुरभिनाम स्त्री में सब गाय बैल उत्पन्न किये ५५ कश्यपजी की विनतानाम स्त्री में अतिविख्यात गरुड़ व अरुण दो पुत्र हुये उनमें गरुड़ देवताओं के देव अमिततेजस्वी श्रीविष्णुभगवान् के ५६ बाहन हुये व अरुण सूर्यनारायण के सारथि स्वसा जिसका ताम्रा भी नाम है उसमें कश्यप से ६ पुत्र हुये ५७ अश्व, उष्ट्र, गर्दभ, हस्ती, गवय, मृग और क्रोधानाम स्त्री में वे लोग उत्पन्नहुये जो पृथ्वी में दुष्टजाति हैं ५८ इराने वृक्ष, वल्ली, शण आदि सब वृक्षभेद उत्पन्न किये व स्वसा के यक्ष राक्षस भी हुये और मुनिनाम स्त्री में अप्सरा हुईं ५९ और कद्रू के सब महाविषधर उल्बण स्वभाववाले सर्प उत्पन्नहुये व जो २७ सोम की स्त्रियां कहीथीं उनके ६० बड़े पराक्रमी बुध आदि पुत्र हुये और अरिष्टनेमी की स्त्रियों में सोलह सन्तान हुये ६१ व बहुपुत्र विद्वान् के विद्युत्आदि चार कन्या हुईं

और प्रत्यङ्गिरके सब ऋषिलोग पुत्र हुये जोकि जाति से ऋषि कहाते हैं यों तो कर्मोंसे बहुत ऋषि होजाते हैं ६२ व कृशाश्व देवर्षि के देवता व ऋषि दो प्रकार के पुत्र हुये ये सब सहस्रयुगों के पीछे फिर २ उत्पन्न हुआ करते हैं ६३ इतने स्थावर जङ्गम कश्यपमुनि के सन्तान हमने कहे ये सब स्थिति में टिकेहुये नृसिंहदेव के धर्ममें टिके रहते हैं ६४ हे विप्र ! इतनी विभूतियां हमने तुमसे कहीं व दक्षकी कन्याओं की सब सन्तति सुनाई ६५ जो कोई श्रद्धापूर्वक इनका कीर्त्तन करता है वह अवश्य सन्तानवान् होताहै व उसके वंशका नाश नहीं होता है ॥ ६६ ॥

दो० सर्ग और अनुसर्ग सब, कहा सहित विस्तार ।
जोहरिपर नर पढ़हिंगे, पैहहिं विमल अचार ॥१॥६७ ॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेसृष्टिकथनेपञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

छठवां अध्याय ॥

दो० उर्वशिलखि मित्रावरुण, वीर्य्यपतन भो तासु ।
मुनिवसिष्ठ पुनिभे वही, छठयें माहिं प्रकासु ॥ १ ॥

सूतजी भरद्वाजादि मुनियों से बोले कि हे ब्राह्मण-श्रेष्ठो ! हमने श्रीविष्णुभगवान् के इस जगत् की सृष्टि तुम लोगों से जैसे कि उन महात्मा से देव, दानव, यक्षादि उत्पन्न हुये १ जिस सृष्टि में तुमने हमसे पूछा था कि वसिष्ठमुनि तो ब्रह्मा के पुत्र थे फिर मित्रावरुण के पुत्र कैसे हुये २ सो अब वह पुराना पुण्यदायक इतिहास तुमसे कहते हैं चित्तसावधान करके सुनिये ३ सब धर्म

अर्थोंके निश्चय जाननेवाले सब वेदवादियों में श्रेष्ठ व सब विद्याओं के पारगन्ता दक्षनाम प्रजापति हुये ४ उन्होंने सब शुभलक्षणसम्पन्न व कमलनयनी अपनी तेरह कन्या कश्यपमुनि को ब्याह दीं ५ उनके नाम कहते हैं हमसे सुनो अदिति, दिति, दनु, काष्ठा, मुहूर्त्ता, सिंहिका, मुनि ६ इरा, क्रोधा, सुरभि, विनता, सुरसा, स्वसा, कद्रू, सरमा जिसे देवशुनी भी कहते हैं ७ ये सब दक्ष की कन्या हैं इन सबको उन्होंने कश्यपजी को दीं उन सबों में ज्येष्ठ व अतिश्रेष्ठ अदिति नाम स्त्री है ८ अदिति ने अग्निसमान प्रकाशित बारहपुत्र उत्पन्नकिये उनके नाम हमसे सुनो ९ जिनके कारण ये सब रात्रिदिन बार २ हुआ करते हैं भग, अंशु, अर्यमा, मित्र, वरुण १० सविता, धाता, विव-स्वान्, त्वष्टा, पूषा, इन्द्र व विष्णु इनमें विष्णु बारहवें पुत्र हैं ११ ये बारहपुत्र अपनी २ पारीपर तपतेरहते हैं व वर्षा भी कराते हैं उनमें मध्यमपुत्र का वरुणनाम है १२ वे लोकपाल कहाते हैं व वारुणीदिशा में सदा रहाकरते हैं ये पश्चिमसमुद्र के भी पश्चिमदिशा में सदा विराजते रहते हैं १३ वहां सुवर्ण का एक श्रीमान् नाम पर्वत है उसके सबशृङ्ग रत्नोंसे बने हैं व नाना प्रकार के धातुओं झरनों से भी शोभित हैं १४ वह सबका सब पर्वत रत्नमय है उसकी बड़ी २ गुहाओंमें सिंह शार्दूल व्याघ्रादि जन्तु रहते हैं १५ व बहुतप्रकार के एकान्तस्थल बने हैं जिनमें सिद्ध व गन्धर्व लोग सदा रहते हैं जब सूर्य वहां पहुँचते हैं तो इस ओर

अन्धकार होजाता है १६ उस पर्वत के एक शृङ्गपर महादिव्य सुवर्ण से बनीहुई अति रमणीय मणियों के खम्भों से विश्वकर्मा की बनाईहुई १७ सब भोग विलास के पदार्थों से भरीपुरी विश्वावती नाम पुरी है उस में अपने तेज से दीप्यमान वरुणनाम आदित्य १८ ब्रह्माजी की आज्ञा से इन सबलोकों की रक्षा किया करते हैं व गन्धर्व अप्सरादि उनकी उपासना किया करते हैं १६ एक समय दिव्यगन्ध अङ्गों में लगाये व दिव्यभूषणों से भूषित वरुणजी मित्र के संग बन को गये २० जाते २ कुरुक्षेत्र में पहुँचे जो कि अतिरमणीय ब्रह्मर्षियों से सेवित नाना प्रकार के पुष्प, फलों से युक्त व नाना प्रकार के तीर्थों से युक्त था २१ जिस में सैकड़ों स्थान ऊर्द्ध्वरेता मुनियों के थे ऐसे बहुत पुष्प, फल, जल युक्त उत्तम तीर्थ में जाकर २२ चीर व मृगचर्म धारण कर दोनों जन तप करने लगे वहां एक बड़े सुन्दर बन के एकान्त स्थल में विमल जलसहित एक अतिमनोहर तड़ाग था २३ उसके किनारे २ नाना प्रकार के वृक्ष वल्ली गुल्मादि विद्यमान थे उनपर व जल के किनारे भी नाना जाति के पक्षी बोलरहे थे नाना प्रकार के वृक्षों से चारों ओर से घिरा हुआ था कमल भी बहुत तरह के उसमें फूलरहे थे २४ उस तड़ाग का पौण्डरीक नाम था नानाजाति की मछलियां व कछुये उसमें भरे थे उस तड़ाग पर मित्र व वरुण दोनों भाई घूमते २ पहुँचे २५ व दोनों जनों ने उस सरोवर में बहुतसी और अप्सराओं के

संग स्नान करती व मधुरस्वर से गाती हुई उर्वशी अप्सरा को देखा २६ जिसका अतिगौर तो स्वरूप था मानों दूसरी लक्ष्मीही थी व शिर के केश अतिकाले व चिकने थे २७ कमल के पत्रों के समान विशाल नेत्र थे ओष्ठ ऐसे अरुण थे कि पके हुये कुँदुरूको भी लजवाते थे बोल अतिही मृदु था सुननेवाले के कानों में मानों अमृत ही पिलाता था २८ दांतों की अतिघनी पङ्क्ति शंख कुन्द व चन्द्रमा की उजलाई से भी अधिक दिखाई देती थी भौंहें बहुत अच्छी नासिका अति उत्तम मुख सुन्दर सुन्दर माथा व अति मनस्वी स्वभाव था २९ और सिंह के समान पतली कमर नाभि के नीचे का भाग जांघें व छाती बहुत मोटी मधुर वचन बोलने में चतुर कटि बहुत सुन्दर हँसना अति मनोहर ३० अरुण कमल के समान हाथ अतिसूक्ष्म अङ्ग पद बहुत ही मनोहर विनय से युक्त पूर्णमासी के चन्द्रमा की सी देह की चमक मतवाले हाथी की सी चाल ३१ ऐसी उर्वशी का रूप देखकर वे दोनों मित्र व वरुण मोहित होगये क्योंकि उसका हँसना कटाक्ष करना मुसुकराना ३२ मृदुपवन जोकि शीतल, मन्द, सुगन्ध बहता था मत्तभ्रमरों का गुञ्जारना कोकिलों का शब्द करना ३३ सुन्दर स्वरसहित गाना इन सबों से युक्त उर्वशी ने जैसे ही कटाक्षपूर्वक दोनों महाशयों की ओर देखा कि दोनों का वीर्य स्खलित होगया ३४ वह कुछ जल में कुछ स्थल में व कुछ कमल में जा गिरा उस में जो वीर्य कमल में गिरा उस से तो निमिके शाप से अपना

शरीर छोड़ वसिष्ठजी उत्पन्न हुये ३५ व जो स्थल में अर्थात् एक कुम्भ में गिरा था उस से अगस्त्यजी उत्पन्नहुये व जो जल में गिरा था उस से एक बड़ी भारी मछली उत्पन्न हुई बस जब इन दोनों महात्माओं का वीर्य इसरीति से पतित हुआ तब उर्वशी अपने स्वर्ग लोकको चलीगई ३६।३७ व वे दोनों देवता फिर उन दोनों ऋषियों के निकट आकर अच्छीतरह देखकर अपने आश्रमपर तपस्या करनेलगे ३८ उन दोनों की इच्छाथी कि हम तपकरके परंज्योतिस्सनातन ब्रह्म को पहुँचजावें तप करते हुये उनदोनों के पास आकर ब्रह्माजी यह बोले कि ३९ हे मित्रा वरुण देवो! तुम दोनोंजने पुत्रवान् हुये व वैष्णवी सिद्धि तुम दोनों जनोंको होगी ४० अब इससमय दोनों जाकर अपने अधिकार पर टिको इतनाकह ब्रह्माजी तो अन्तर्धान होगये और वे दोनों अपने अधिकारपर जाकर स्थित हुये ४१ हे विप्र! इस प्रकार महात्मा वसिष्ठ व अगस्त्य जिसप्रकार मित्रावरुण के पुत्र हुये वह हमने तुमसे वर्णनकिया ४२ यह वरुणजी का पुंसवन आख्यान बड़े २ पापों का नाशक है पुत्र की कामना कियेहुये जो पुरुष पवित्र होकर इसे सुनते हैं ४३ वे बहुतही शीघ्रपुत्र पाते हैं इसमें कुछ संशय नहीं है व जो कोई ब्राह्मण इसे देवता व पितरोंके यज्ञमें पढ़ते हैं ४४ उनके देवता व पितर दोनों तृप्त होकर परम सुख पाते हैं व जो कोई पुरुष नित्य प्रातःकाल उठकर इसे सुनेगा ४५ वह जबतक इसलोक में रहेगा मग्न होगा

अन्तकाल में विष्णुलोक को जायगा इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है ॥ ४६ ॥

दो० वेदवेदिवर्णित बहुरि, ममसुखगत इतिहास।
जो यहपढ़िहि सुनिहिउभय, पैहहिंहरिपुरबास ॥ १४७॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेपुंसवनोपाख्यानेषष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

सातवां अध्याय ॥

दो० कहब सप्तमाध्यायमहँ, जिमि मार्कण्ड मुनीश।
तपसों जीत्यहु मृत्युकहँ, बहुरि सुमिरि जगदीश ॥ १ ॥

इतनी कथा सुन भरद्वाजमुनिने पूछा कि हे सूतजी! तुमने पूर्वकाल में सूचित कियाथा कि मार्कण्डेय मुनि ने मृत्यु को जीतलिया सो कैसे जीता यह इतिहास हमसे वर्णन कीजिये १ सूतजी बोले कि यह बड़ाभारी आख्यानहै हम कहते हैं भरद्वाजजी तुम व सब ऋषि लोग चित्त लगाकर सुनो २ महापुण्य कुरुक्षेत्र तीर्थमें अतिश्रेष्ठ व्यासजी के आश्रममें बैठहुये मुनियोंमें श्रेष्ठ स्नान जप किये वेदवेदार्थ के निश्चय जाननेवाले सब शास्त्रोंमें विशारद मुनिशिष्यों के मध्यमें विराजमान श्रीकृष्ण द्वैपायन व्यासजी से प्रणामकरके परम धर्मात्मा उनके पुत्र शुकाचार्यजी ने यही अर्थ पूछाथा जो कि तुमलोगों ने हमसे पूछा है ३। ५ सो हम जिस प्रकार उन्होंने पूछा सब तुमसे कहते हैं क्योंकि नृसिंह जी के भक्त तुमने इन सब मुनियों के सामने हमसे पूछाहै ६ श्रीशुकाचार्यजी व्यासजी से बोले कि हे तात! मार्कण्डेय मुनि ने मृत्यु को कैसे जीतलिया यह

आख्यान हम आपसे सुनना चाहते हैं कहिये ७ यह सुन व्यासजी बोले कि मार्कण्डेयमुनिने जिसप्रकार मृत्यु को पराजित किया वह सब हे वत्स! कहते हैं सुनो ८ व हे मुनिलोगो! तुमभी यह हमारा कहा हुआ इतिहास सुनो व हमारे शिष्यलोग भी इस महा अद्भुत आख्यान को सुनें ९ भृगुमुनि से ख्यातिनाम स्त्री में मृकण्डुनाम पुत्र उत्पन्न हुआ उन महात्मा मृकण्डु की स्त्री का सुमित्रा नाम था १० वह सुमित्रा बड़ी धर्मज्ञ धर्ममें निरत व पति की शुश्रूषामें सदा निरत रहती उसमें मृकण्डुजीसे महामुनि मार्कण्डेयजी उत्पन्न हुये ११ ये भृगुजी के पौत्र महाभाग्यवान् मार्कण्डेयजी बड़े बुद्धिमान् हुये व बाल्यावस्थाही में बुद्धिमान् होने के कारण अपने पिता को बहुत प्रियहुये इससे पिता ने सब संस्कार बड़े प्रेमसे किये १२ मार्कण्डेयजी बालकही थे कि एक ज्योतिर्विद् पण्डित ने आकर कहा कि बारहवें वर्ष में इस लड़के की मृत्यु होजायगी १३ यह बात सुनकर उनके माता पिता बहुत दुःखित हुये जब उनको देखते तभी उनका हृदय कांपने लगता था १४ यद्यपि उनका हृदय सन्तप्त ही बनारहता पर मुण्डन यज्ञोपवीतादि कर्म उन्होंने वेदविधि से किये कराये १५ फिर गुरु के यहां वेद पढ़ने को भेजा वहां गुरुशुश्रूषा करतेहुये उन्होंने साङ्गोपाङ्ग सबवेद पढ़े व सबशास्त्र भी पढ़े पीछे फिर अपनेघर में आये १६ व अपने पिता माता के प्रणामकर विनय पूर्वक महामति मार्कण्डेयजी घर में रहनेलगे १७ परन्तु उन महाबुद्धि

मान् व नम्र महात्मा पुत्र को देख २ उनके पिता माता बहुत दुःखित हुये १८ तब अत्यन्त दुःखित अपने पिता माता को देखकर मार्कण्डेय मुनि बोले कि आप लोगों को ऐसा दुःख क्यों है १९ हे माताजी! पिता जी सहित तुम सदा ऐसा दुःख कियाकरती हो इसका कारण पूछतेहुये हमसे अवश्य कहो २० जब इस प्रकार पुत्र ने पूछा तो उनकी माता ने जैसा वह ज्योतिर्विद् कहगया था सब वृत्तान्त कहा २१ सो सुनकर मार्कण्डेयजीने अपनी माता व पितासे कहा कि आप दोनों इस विषय में कुछभी शोच न करें २२ हम तपस्या से मृत्यु को दूरकरदेंगे व जैसे चिरजीवी होंगे वैसा तप करेंगे आपलोग सन्देह न करें २३ इसप्रकार पिता माता को आशा भरोसा देकर नाना ऋषिगणोंसे सेवित वल्लीवटनाम बड़ेभारी वनको तपकरने को चलेगये २४ वहां बहुत से ऋषियोंके संग बैठेहुये अपने पितामह महात्मा परम तपस्वी भृगु मुनि को देखा २५ व यथोचित उनके व सब ऋषियोंके प्रणाम कर परमधार्मिक मार्कण्डेयजी हाथ जोड़कर खड़ेहुये २६ तब आयुष्हीन अपने पौत्र को देख महामतिमान् भृगुजी मार्कण्डेय नाम बालक से बोले २७ हे वत्स! यहां क्यों आये तुम्हारे पिता कुशलपूर्वक हैं व तुम्हारी माता व बन्धु वर्ग सब अच्छे हैं यहां आनेका क्या कारणहै कहो २८ जब भृगुजी ने ऐसापूछा तो महामति मार्कण्डेयमुनि ने सब उस ज्योतिर्विद् का वचन उनसे कहा २९ पौत्र का वचन सुनकर भृगुमुनि फिर बोले कि हे महा

बुद्धिवाले ! यदि ऐसाहै तो फिर तुम कौन कर्म करना चाहते हो ३० मार्कण्डेयजी बोले कि, हम सबप्राणियों के हरनेवाली मृत्यु को जीतनाचाहते हैं इससे आप के शरण में आये हैं इस विषय में हमसे कुछ उपाय बताइये ३१ भृगुजी बोले कि, हे पुत्र ! बड़ीभारी तपस्यासे विना नारायण की आराधना किये मृत्यु को कौन जीतसक्ता है इससे तुम तपसे उनकी पूजाकरो ३२ उन अनन्त अज अच्युत पुरुषोत्तम भक्तप्रिय सुरश्रेष्ठ विष्णुजी के शरण में भक्ति से प्राप्तहोओ ३३ हे वत्स ! उन्हीं अनामय नारायण के शरण में पूर्वसमय बड़ी भारी तपस्या से नारदमुनि गये थे ३४ हे महाभाग ! उन्हीं नारायणजी के प्रसाद से ब्रह्माजी के पुत्र नारद मुनि शीघ्र ही वृद्धता व मृत्युको जीतकर अब सुख पूर्वक विचरते हैं ३५ इससे हे वत्स ! उन पुण्डरीकाक्ष जनार्दन नरसिंह भगवान्को छोड़ और कोई मनुष्य कौन मृत्यु के पराक्रम का निवारण करसक्ता है ३६ बस तुम उन्हीं अनन्त अज विष्णु कृष्ण जिष्णु श्रीपति गोविन्द गोपति देवके शरण में जाओ ३७ हे वत्स ! जो तुम निरन्तर महादेव नृसिंह भगवान् की पूजा करोगे तो अवश्य मृत्यु को जीत लोगे इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है ३८ व्यासजी शुक्राचार्य से बोले कि जब उनके पितामहने ऐसा कहा तो महातेजस्वी मार्कण्डेयजी विनयपूर्वक अपने पितामह भृगुजीसे फिर बोले ३९ हे तात ! आपने यह तो बताया कि विश्वेश्वर प्रभु श्रीविष्णु भगवान् आराधना करने के

योग्यहैं पर यह तो बताइये कि कहां व किस प्रकारसे उनकी आराधना हम करें ४० कि जिससे सन्तुष्ट होकर वे हमारी मृत्यु को तुरन्त दूरकरदें व चिरजीवी बनादें ४१ भृगुजी बोले कि सह्यपर्वत पर जो तुङ्गभद्रा नदी है वहां एक भद्रवट नाम स्थान है वहां जाकर केशव भगवान् का स्थापनकर ४२ पुष्प धूपादिकों से जगन्नाथ भगवान् की पूजाकरो इन्द्रियों को मन के अधीन करलेना व मनको तत्त्व से संयमन करना ४३ शंख, चक्र, गदा धारण कियेहुये देवदेवेश नारायणजी के हृदय कमल में स्थापित कर एक मन से ध्यान करते हुये "ॐ नमो भगवते वासुदेवाय" इस द्वादशाक्षर मन्त्र को जपना ४४ क्योंकि देवदेव श्रीविष्णु भगवान् जी का जो कोई यह मन्त्र जपता है उसके ऊपर प्रसन्न होकर विश्वात्मा श्रीभगवान् मृत्यु को दूरकरदेते हैं ४५ व्यासजी शुक्राचार्य से बोले कि जब भृगुजी ने ऐसा कहा तो उनके प्रणाम करके मार्कण्डेय तपोवनको चले गये यह तपोवन सह्य पर्वत के पादसे बहतीहुई तुङ्गभद्रा नदीके तटपर है जोकि नानाप्रकार के वृक्षों व लताओं से युक्त व नाना प्रकार के पुष्पों से शोभित ४६ छोटी २ झाड़ों बांसों व विशेष लताओं से घना था वहां विष्णु भगवान् को स्थापन करके क्रम से गन्ध, पुष्प, धूप, दीपादिकों से ४७ देवदेवेश विष्णु की पूजा महामुनि मार्कण्डेयने की व वहां हरि की पूजा करके अति दुष्कर तप करनेलगे ४८ उसमें एक वर्षतक तो निद्रा आलस्य छोड़कर मुनि निराहार रहे फिर जब उनकी माता का

बताया हुआ काल सन्निकट आगया ४९ तो उस दिन महामति मार्कण्डेयजी ने स्नानकरके व विधिपूर्वक श्रीविष्णु का पूजन करके व विशुद्धमन होकर मनमें सब इन्द्रियों को कर ५० स्वस्तिक आसन बांधकर प्राणायाम करके ॐकार के उच्चारण से हृदयकमल को विकाशितकराते हुये बुद्धिमान् मुनिने ५१ उसके मध्य में यथाक्रम सूर्य सोम व अग्नि के मण्डलों को स्थापितकर फिर श्रीहरि के सिंहासन को बनाया उसपर सनातन ५२ पीताम्बर धारणकिये शंख, चक्र, गदा लिये श्यामस्वरूप ब्रह्मरूपहरि को भावपुष्पों से पूजकर उसीपर स्थापितकरके ध्यानकरते हुये "ॐनमो भगवते वासुदेवाय" इस मन्त्र का उच्चारणकिया ५३ व्यासजी बोले कि, इसप्रकार धीमान्मार्कण्डेयजी का ध्यान करते २ देवदेव जगत्पति में मनलगगया ५४ उसी समय में यमराज की आज्ञा से यमराज के दूत पाश हाथों में लिये उन मुनि के लेने को आये परन्तु विष्णु भगवान् के दूतों ने उनको मारा ५५ । ५६ जब वे बेचारे यमदूत शूलों से मारेगये तो ब्राह्मण को छोड़ हमलोग तो लौटे जाते हैं अब मृत्यु आप आवेगी ऐसा कहकर चलेगये ५७ इतना सुनकर विष्णु भगवान् के दूत बोले कि जहां हमलोगों के स्वामी सब लोकों के नाथ श्री विष्णु भगवान् का नाम उच्चारण होता है वहां यमराज मृत्यु व सब गिननेवालों में श्रेष्ठ काल कौन होता है ५८ व्यासजी शुकजी से बोले कि दूत तो चलेहीगये थे मृत्यु आई व महात्मा मार्कण्डेयजी

से बोलकर विष्णुके दूतों की शङ्कासे इधर उधर घूमने लगी ५९ व विष्णु के दूतभी बहुत शीघ्र मुशलों को उठाकर विष्णु की आज्ञा से आज मृत्यु को मारडालेंगे यह विचारकरके खड़े होगये ६० व तब श्रीविष्णु में मन अर्पित करके महामतिमान् मार्कण्डेयजी नम्र होकर जनार्दन भगवान् की स्तुतिकरनेलगे ६१ उनको विष्णुजीनेही कानों में जो स्तोत्र सुना दिया उसी से सुवचन से व सुन्दर मन से माधवजी की स्तुति करने लगे ६२ मार्कण्डेयजी बोले ॥

दो० नारायण कजनाभ हरि, केशपुरातन जौन।
सहसनयन प्रणवों सुमम, मृत्यु करे कृतिकौन॥ १। ६३॥
अजअव्ययगोविन्द अरु, कमलनयनभगवन्त।
प्रणवों ममकाकरिहिकहु, मृत्युसुनमतअनन्त॥ २। ६४॥
वासुदेव जगयोनिरवि, वर्ण अतीन्द्रियतोरि।
विनयकरत दामोदरहु, मृत्युकरे का मोरि॥ ३।६५॥
शंख चक्र धर देव अ, व्यय अरुब्रह्मस्वरूप।
प्रणवों मृत्यु हमार का, करिहै ह्वैहै चूप॥ ४। ६६॥
विष्णुवराहनृसिंह अरु, वामन माधव राम।
करहुँप्रणाम जनार्दनहि, मृत्युकरिहि का वाम॥ ५। ६७॥
पुण्यपुरुष पुष्कर जगत, पतिक्षमक अरु बीज।
लोकनाथत्वहिं नमतमम, मृत्यु करिहिकाखीज॥ ६। ६८॥
विश्वरूप जगयोनि विन, योनि महात्मा आप।
भूतात्मा विनवों सदा, मृत्युकरिहि कापाप॥ ७। ६९॥
सहसशीर्षवरदेव अरु, व्यक्ताव्यक्त पुरान।
महायोग विनती करत, करुका मृत्युअयान॥ ८। ७०॥

इस प्रकार महात्मा मार्कण्डेयजीको विष्णुभगवान् का स्तोत्र पढ़तेहुये सुनकर विष्णुके दूतों से ताड़ित मृत्यु वहां से भागगई ७१ इस रीति से उन बुद्धिमान् मार्कण्डेयजी ने मृत्यु को जीत लिया सो क्यों न जीतैं नृसिंह भगवान् के प्रसन्न होनेपर कौन पदार्थ दुर्लभ होता है ७२ मृत्यु के नाश करनेवाला शुभ व पुण्यदायक यह मृत्युञ्जयनाम स्तोत्र मार्कण्डेय के हितके लिये श्रीविष्णुजी ने अपने मुखारविंद से कहा था ७३ जो पुरुष यह स्तोत्र नित्य त्रिकाल पढ़ता है अच्युत में चित्त लगायेहुये उस पुरुष की अकाल में मृत्यु कभी नहीं होती है ॥ ७४ ॥

हरिगीतिका ॥

मनकमलमहँ शाश्वत अनादि पुराणपूरुष ध्यायके।
ज्यहिनाम नारायण परायण जनन पालत आयके॥
त्यहिनित्य सूर्यहुसों प्रकाशित मृत्युकहँ सो जीतिकै।
मुनिराज भार्गववंशभूषण भयहु निर्भय प्रीतिकै॥१।७५॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेमार्कण्डेयमृत्युञ्जयोनामसप्तमोऽध्यायः ७

आठवां अध्याय ॥

दो० अठयेंमहँ निज पुरुषके, वचन श्रवणकरि सौरि।
बहुविधहरिमाहात्म्य कह, नरकविनाशन चौरि ॥ १ ॥

श्रीव्यासजी शुकाचार्यजी से बोले कि श्रीविष्णु भगवान् के दूतों से पीड़ित होकर मृत्यु व यमदूत अपने राजा के समीप जाकर बड़ा रोदन व पुकारकरके बोले १ हे राजन्! जो हमलोग आपके आगे कहते हैं उसे

सुनिये आप की आज्ञा से हमलोग जाकर मृत्यु को दूर स्थापित करके २ किसी देवदेव को एकाग्र मनसे ध्यान करतेहुये भृगुजी के पौत्र ब्राह्मणश्रेष्ठ मार्कण्डेय के समीप गये ३ पर हम सब उसके समीप न जासके व जब तक जाने का विचारकरें २ तबतक कुछ बड़े २ शरीर के पुरुषों ने मुशलोंसे हमलोगों को पीटडाला ४ हमलोग तो फिर वहां से लौटआये पीछे वहां मृत्यु गई हमलोगों को अति भयभीत कराते हुये उन लोगों ने मृत्यु को भी मुशलोंसे मारा ५ इससे मृत्युसहित हमलोग उस तपस्वी ब्राह्मण को यहां लेआने में असमर्थ हैं ६ सो हे महाभाग ! हमलोग अब आपसे सह पूछते हैं कि उस ब्राह्मण में ऐसा तेज कहां से आया व वह किसका ध्यान करता था व जिनलोगोंने हमलोगों को ताड़ित किया वे कौन थे ७ व्यासजी शुकजी से बोले कि इसप्रकार यमराजजी से जब उनके दूतों ने व मृत्युने कहा तो कुछ देरतक विचारांश व ध्यान करके यमराज बोले ८ अये हमारे सब दूतो ! व मृत्यु तुम सब हमारा सत्य वचन सुनो जोकि हम ज्ञान से कहते हैं ९ भृगु के पौत्र महाभाग्यवान् व [illegible] मार्कण्डेय मुनि आज अपनी मृत्यु होना जान मृत्यु के जीतने की इच्छा से वनको गये १० [illegible] भृगुके बताये हुये मार्ग के अनुसार बहुत तप [illegible] किया उसमें हरि की आराधना व ध्यान करते [illegible] विष्णु भगवान् का द्वादशाक्षर मन्त्र जपतेरहे ११ एकाग्र मन से श्रीहरि का ध्यान करते रहे हे किंकरो ! वे मुनि-

राज निरन्तर योगाभ्यास में युक्तरहे १२ अये हरिके ध्यान करने में चतुर, हमारे दूतो! उस महामुनि का बल और कुछ काल के जीतनेवाला हम नहीं देखते १३ केवल केशव भगवान् का बल देखते हैं क्योंकि भक्तवत्सल हृषीकेश निरन्तर जिसके हृदय में स्थित रहते हैं केशव के शरण को प्राप्त व विष्णुरूप पुरुष को कौन देखसक्ता है १४ इससे वह नारायण भगवान् का दास है व वे उनके दूत हैं जिन्होंने तुमलोगों को मारापीट इससे अब आज से तुमलोग वहां कभी न जाना जहां वैष्णवलोग हों १५ हम इसबात को आश्चर्य नहीं मानते जोकि तुमलोगों की वहां मारहुई किन्तु आश्चर्य इस बातका मानते हैं जोकि उन बड़ी कृपा करने वाले विष्णुदूतों ने तुमलोगों के प्राण नहीं लेलिये १६ भला नारायण के भजन में तत्पर उस ब्राह्मण को कौन देखसक्ता है तुम महापापियों ने श्रीहरि के भक्त मार्कण्डेयजी के लेआने का विचारकिया था यह अच्छा नहीं कियाथा १७ अब हम तुमलोगों को आज्ञा देते हैं कि जो लोग देवताओं के देव श्रीनृसिंहजीकी उपासना करतेहों उनकेपास कभी भूलसेभी न जाना १८ व्यासजी इसी कथा को शुकजी से कहते हैं कि यमराज इसप्रकार अपनेदूतों व मृत्युसे कहकर नरकोंमें पड़ेहुये दुःखित पुरुषों को देखकर उनसे कहनेलगे १९ वह वचन उन्हों ने बड़ी कृपा से कहा था विशेष करके विष्णु भगवान् की भक्ति से व जनोंके ऊपर अनुग्रह करनेके लिये कहते हैं सुनो २० कहा कि अये लोगो! तम मन

नरक में पच्यमान हो तुमलोगों ने क्लेश नाशनेवाले केशव भगवान् का पूजन क्यों नहीं किया २१ भला जो विष्णु भगवान् अन्यपूजा की सामग्री न होने पर जलमात्र से पूजा करने पर प्रसन्न होकर अपना लोक देदेते हैं उनकी पूजा तुमलोगों ने क्यों न की २२ नरसिंह हृषीकेश कमलनयन श्रीनारायण स्मरणमात्र से मनुष्यों को मुक्तिदेते हैं उनका पूजन तुमने क्यों नहीं किया २३ इसप्रकार नरकनिवासियों से कहकर यमराज जी फिर अपने दूतों से विष्णुजीकी भक्ति से युक्त होकर बोले २४ अव्यय विश्वात्मा श्रीविष्णु भगवान् ने एक समय नारदजी से व और भी वैष्णवोंसे कहा है उन सबों के मुख से हमने सुना है २५ वह हरि का वचन प्रीति से तुमलोगों से कहेंगे इससे हरि भगवान् के प्रणाम करके तुमलोग शिक्षा के लिये चित्त लगाकर श्रवण करो २६ वह भगवान्‌जी का वचन यह है कि॥

दो० कृष्ण कृष्ण हे कृष्ण इमि, कहि सुमिरत जो मोहिं।
जल भेदनकरि कमलजिमि, नरकउधारहुँ ओहिं॥१।२७॥
नारसिंह जलजाक्ष सुर, ईशत्रिविक्रम राम।
मैं तव शरण कृपायतन, देहु मोहिं निजधाम॥२।२८॥
देव देव तव शरणहूँ, इमि कहि सुमिरै जोय।
ताहि उधारहुँ क्लेशसों, सकल दुरितदुखखोय॥३।२९

व्यासजी श्री शुकदेवजी से बोले कि इसप्रकार यमराजके मुख से श्रीहरि का वचन सुनकर सब नरक निवासी हे कृष्ण, हे कृष्ण, हे नरसिंह! ऐसा ऊँचेस्वर से पुकारउठे ३० व जैसे २ नरकनिवासियों ने हरि का

नाम कीर्तनकिया वैसेही २ हरि की भक्ति को प्राप्तहो-
कर वे सबके सब ऐसा बोले ॥ ३१ ॥

चौपाई ॥

श्रीभगवान महात्मा केशव। नमोनमो करतेहमहैं तव ॥
जासुनामकीर्तनसों आशू। नरकअनलकरहोतविनाशू १।३२
हरि भक्त प्रिय रक्षक देवा। लोकनाथ हम करत सुसेवा ॥
शान्तचित्त यज्ञेश रमेशा। तुम्हेंनमतहमसहतकलेशा २।३३
अप्रमेय नरसिंह अनन्ता। नारायण गुरु श्रीभगवन्ता ॥
गदाचक्रधरतोहिंनमामी। स्वहिंजानियआपनअनुगामी३।३४
वेदप्रिय विक्रमरु महाना। महिधरवेदअङ्ग भगवाना ॥
श्रीवराह नरसिंह तुम्हारे। करतप्रणाम हरहुदुख सारे ४।३५
वामनदीप्तिमानब्राह्मणतनु। तुम बहुज्ञ वेदान्त वेदमनु ॥
अरु वेदाङ्गनमतप्रभु तोहीं। करतप्रणामउधारहुमोहीं ५।३६
बलिबन्धनमहँ दक्षमुरारी। वेदपाल सुरनाथ खरारी ॥
परमात्माव्यापकभगवाना। विष्णुतुम्हेंप्रणमतकरिध्याना ६।३७
शुद्ध चतुर्भुज शुद्धद्रव्यधर। जामदग्न्यवरपरशु धरेकर ॥
रामक्षत्रिनाशकभगवाना। करतविनयतवयशकरिगाना ७।३८
रावणान्तकारक श्रीरामा। परमपुरुषपूरण सबकामा ॥
यहिदुर्गन्धि नरकसों मोहीं। नाथउबारहु विनवहुँतोहीं ८।३९

श्रीव्यासजी शुकदेवजी से बोले कि, जब नरक निवासियों ने इसप्रकार श्रीविष्णु भगवान् का कीर्तन भक्तिपूर्वक किया तो उन महात्माओं की नारकीपीड़ा जातीरही ४० व सबके सब कृष्णरूप धारणकरनेवाले दिव्यवस्त्रों से विभूषित अङ्गोंमें दिव्य चन्दनादि सुगन्धित वस्तु लगायेहुये व दिव्य भूषणों से भूषित हो

गये ४१ उनको दिव्यविमानों पर चढ़ाकर व यमराज के पुरुषोंको भयभीत करके श्रीहरि के दूत श्रीभगवान् केशवजी के धाम को लेगये ४२ जब इसतरह श्रीविष्णु भगवान् के दूत उन सब नरकवासियों को वैकुण्ठ को लेगये तो यमराजजी ने श्रीहरि के प्रणाम किया ४३ कि जिसके नाम के कीर्तनमात्र से नरक के रहनेवाले तुरन्त वैकुण्ठको पहुँचायेगये उन महागुरु नृसिंहजी के नमस्कार करते हैं ४४ व जो लोग उन नृसिंह भगवान् के प्रणाम करते हैं उनकेभी हम वार २ नमस्कार करते हैं ४५ इस प्रकार श्री भगवान् व उनके प्रणाम करनेवालों के नमस्कार करके व नरक के अग्नि को शान्त देखकर व सब यन्त्रादिकों को विपरीत जानकर यमराजजी ने फिर अपने दूतों के सिखाने का विचारांश किया ॥ ४६ ॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेयमगीतानामाष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

नववां अध्याय ॥

दो० नवयें महँ यम पुनि कह्यो, निजदूतन सों येह।
जहांहोहिं वैष्णव सुनहु, जनिजायहु तिन गेह ॥ १ ॥

श्रीव्यास भगवान् शुकाचार्यजीसे बोले कि फांसी हाथों में लियेहुये अपने पुरुषों को देखकर यमराजजी ने कान के समीप मुख लगाकर यह कहा कि तुमलोग श्रीविष्णु के भक्तों को छोड़दो क्योंकि हम अन्यलोगों के दण्ड देनेमें समर्थ हैं वैष्णवों के शासन करने व नहींहैं १ देवगणोंसे पूजित ब्रह्माजी ने सबलोक सब

हितके व अहित करनेके लिये हमको इस अधिकार पर नियत किया है पर हम श्रीहरि व गुरु से जो लोग विमुख हैं उन्हींको दण्ड देतेहैं और हरिचरणारविन्दों के स्मरण पूजनादि करनेवालों के नमस्कार करते हैं २ व हम भी वासुदेव भगवान् से अपनी सुन्दरगति चाहते हैं इससे भगवद्दासों में व भगवान् के स्मरणादि में मनलगाये रहते हैं व मधुदैत्य के मारनेवाले श्रीहरि के वश में हैं स्वतन्त्र नहीं हैं इससे श्रीकृष्ण भगवान् हमारे मारडालने में समर्थ हैं ३ भगवान्से विमुख पुरुष की सिद्धि कभी नहीं होती जैसे कि विष अमृत कभी नहीं होता है क्योंकि जो सहस्रों वर्षोंतक अग्नि में तपाया क्या गलायाजावे पर लोह सुवर्ण नहीं होता ४ चन्द्रमा में जो पाप की श्यामताका चिह्न है वह कभी नहीं मिटसक्ता न वह सूर्य के समान तापही कभी करसक्ताहै व जो भगवान् अनन्तहीमें चित्त लगाता है और किसी में नहीं लगाता वह पुरुष जो मलिन भी हो तो भी तेजसे प्रकाशित रहता है ५ देखो श्रीविष्णुजी की भक्ति के बल से महादेवजी ने विष भक्षण करलिया व अगस्त्यमुनि ने समुद्र को पीलिया इन्द्र सदा असुरों से पीड़ित रहते हैं परन्तु भक्तिही के बल से बचे रहते हैं व महादेवजी के ऐसे भूत प्रेत पिशाचादि सेवक हैं तथापि भक्ति के बलसे पूज्य हैं ६ इसके विशेष महादेवजी विष भक्षण करते सर्पों को ...में धारण करते व बौद्धमतवालों के आचार्य पांच ...ने शिरमें शिखा रखते हैं व जो कुछ कहते हैं

सब वेद शास्त्रसे विपरीत ही कहते इसी रीति से और २ देवादिकों में भी अगुण विचार करके श्रीनारायण की उपासना को छोड़ और किसी की मुक्तिसिद्धि के देनेवाली नहीं है ७ देवता व गुरुके चरणों में दृढ़ प्रसाद करानेवाले व मोक्षदेने के कारण हरि के चरणारविन्दों का स्मरणकरो क्योंकि सैकड़ों पुण्यों के करने से यह मनुष्य का शरीर मिलता है इसे इन्द्रियों केही अर्थमें लगाना वृथाहै ८ क्योंकि मोक्षमार्ग दिखानेवाला पुरुष औरों के चित्त को रमित कराताहै आप नहीं करता वह भस्म के लिये चन्दन के वृक्ष को जलाताहै ऐसा अनारी है व ऐसे शरीर को पाकर हाथ जोड़ेहुये सुरेन्द्र जिस नारायण के नमस्कार करते हैं मनुष्य देह पाकर उसका भजन नहीं करते वे लोग चन्दन के वृक्ष के तुल्य उत्तममनुष्य देह को राख के लिये जलाते हैं जो सुख अन्ययोनियोंमें भी मिलते हैं उन मैथुनादिकों में लगाते हैं ९ ऐसा कहकर यमराज ने अविहतगति सनातन सब से अग्रज व जगत् में जन्म निवारण करनेवाले परमेश्वर नारायण के नमस्कार है यह अपनी पुरीमें डंका बजवाकर पुकरवा दिया १० जिसको सुनकर चित्रगुप्तादि यमदूतों ने उस दिन से विष्णु भक्तों को यमपुर को लाने से छोड़दिया क्योंकि उन्होंने पाशधारी अपने सब पुरुषों से सबके सुनते में यह कहा कि ११ अरे दूतो! वैष्णवों को छोड़दो क्योंकि हम अन्य लोगोंके स्वामी हैं वैष्णवों के नहीं हैं व हमारा यह अष्टक जो कोई पढ़ेगा वा सुनेगा वह सब

पापों से छूटजावेगा व हरिलोक को जावेगा॥ १२॥

हरिगीतिका॥

हरिभक्तिवर्धन शत्रुमर्दन पुण्य यह यमराज को।
वरवचनहमतुमसनकहा प्रणतार्तिहर गुणभ्राज को॥
अब कहत पुनि भृगुपौत्र गाथा जो पुरातन है सही।
ज्यहिकीन भार्गवतनयमुनिवर जो मुनीशनकी कही॥१३

इति श्रीनरसिंहपुराणेयमाष्टकवर्णनोनामनवमोऽध्यायः॥ ९॥

दशवां अध्याय॥

दो० दशयेंमहँ भृगुपौत्र कर, तपहरिदर्श वरादि।
लाभहोन बहुभांति कह, वेदव्यास श्रुतिवादि॥ १॥

श्रीव्यासजी शुकदेव मुनि से बोले कि इस प्रकार प्रशंसा करने के योग्य व्रत करनेवाले मार्कण्डेयमुनि तपस्या से मृत्यु को जीतकर अपने पिता के स्थानको गये १ व वहां अपने पिता माता को आनन्द करके भृगुजीके कहने से विवाहकरके विधानसहित उस स्त्री में वेदशिरो नाम पुत्रको उत्पन्न किया २ फिर रोगादि रहित निर्विकार श्रीनारायण को यज्ञ से पूजित करके व श्राद्ध करने से पितरों की पूजा करके और अन्नदान से अतिथियों का सत्कार पूजन करके ३ फिर सब तीर्थों के राजा प्रयाग तीर्थ में जाकर महातेजस्वी मार्कण्डेय जी अक्षयवट के नीचे बैठकर तप करनेलगे ४ जिसके प्रसाद से पूर्वसमय में अपनी मृत्यु को जीतलिया था उन्हीं देवदेव नारायण के पूजनके लिये परमतप करने लगे ५ बहुत दिनों तक तो केवल वायु पीकर रहे त्व

से तप करते २ शरीर बनाय दुर्बलहोगया एक समय महातेजस्वी मार्कण्डेयजी ६ चन्दन, पुष्प, धूप, दीपादिकों से माधव भगवान् की पूजाकरके मन से उन्हीं का स्मरण करतेहुये एकाग्र मन से शंख, चक्र, गदा हाथों में लिये श्रीनारायणजीकी स्तुति करनेलगे ७ मार्कण्डेयजी बोले कि ॥

चौपाई ॥

नरनरसिंह प्रलम्बबाहुहरि। अच्युतकमलनयन भवजलतरि॥
श्रीनरनाथविष्णुपुरुषोत्तम। क्षितिपतिनुतपदतुम्हेंकरतनम१।८
जगपति क्षीरपयोधि निवासी। शार्ङ्गपाणि श्रीपतिरिपुनासी॥
मुनिसमूह वन्दितश्रीश्रीधर। ईश्वरईश गुविन्दनमत अर२।९
अजवरेण्य जनदुःख विनाशन। गुरुपुराण पुरुषोत्तमप्रभुसन॥
सहससूर्यद्युतिअच्युतमाधव।हरिनमामिकरिभक्तिममव३।१०
क्षितिपति लोकनाथ जगकारण। प्रजानाथ त्रैलोक्य सुधारण॥
पुण्यवान परगति सब साषी।करत प्रणाम मधुरवच भाषी ४।११
जो अनन्तशय्यापर सोवत। प्रलय पयोधि मध्यश्रमखोवत॥
क्षीरधिकणबीचीसोंसिञ्चित।श्रीनिवासप्रणमतसुरअञ्चित५।१२
नारसिंहतनु मधुकैटभहर। सकल लोकदुखहर सुरगण भर॥
विष्णुहिरण्यगर्भ जगस्वामी।प्रणतपाल तव चरणनमामी६।१३
विभुअनन्तअव्यक्तअतीन्द्रिय।निजनिजरूपविराजविप्रप्रिय॥
योगेश्वरनुततवपदपङ्कज।नमतजनार्दनज्यहिप्रणमतअज७।१४
चिदानन्द आनन्दविरजअज। योगिध्येय शिरधरतचरणरज॥
लघुसोंलघुअक्षयअवृद्धिहरि। प्रणमतत्वहिंनिजमनसुस्थिरकरि॥८।१५॥

श्रीव्यासजी बोले कि, जब महाभाग्यवाले मार्कण्डेयजीने यह स्तोत्र पढ़कर इतनी स्तुति श्रीनारायणजीकी

की तो आकाशवाणीहुई १६ हे ब्रह्मन्! तुम ऐसा क्लेश क्योंकरते हो जिससे माधव के दर्शन नहीं होते जबतक तुम सब तीर्थों में स्नान न करलोगे तब तक भगवान् के दर्शन न होंगे १७ जब इसप्रकार आकाशवाणी सुनी तो मार्कण्डेयजी ने सब तीर्थों में स्नान करने का मन किया परन्तु यह तो विदितही न था कि सब तीर्थ कहां २ हैं इसलिये आकाशवाणी की ओर मुख करके कहा कि हमको सब तीर्थ बताओ तुम जो कोई हो तुम्हारे नमस्कार करते हैं १८ यह सुनकर वाणी फिर बोली कि हे ब्राह्मण! इस स्तोत्र से फिर नारायण प्रभु की स्तुति करो बिना इसके करने से सब तीर्थों का फल न पाओगे १९ आकाशवाणी की ऐसी सुवाणी सुनकर वहां विधिपूर्वक स्नानकर तपस्या में टिककर दर्शन करने की इच्छा से श्रीहरि की आराधना करने लगे २० उसका क्रम ऐसा है कि पुरुषोत्तम पुरी में जाकर स्नान करके देवदेव नारायणजी की स्तुति महातपस्वी मार्कण्डेयमुनि करने लगे २१ जब ये नारायण हरि की तपस्या करने लगे तो और भी ब्राह्मणों के बहुत से बालक वहां सनातनब्रह्म का नाम गाते हुये तप करने लगे २२ और इन्होंने तो गन्ध पुष्पादिकों से पुरुषोत्तमजी की पूजाकरके ऊपर को दोनों हाथ उठाकर उत्तम वाणियों से बड़ी स्तुति की २३ मार्कण्डेयजी बोले कि हे भगवन्! जिस स्तोत्र के पाठ करने से सब तीर्थों का फल मिले वह स्तोत्र भी हम से कहिये २४ यह सुनकर आकाशवाणी फिर हुई कि स्तोत्र यह है॥

दो० जय जय जय केशव रमा, धव जय देव सुरेश।
पद्मपलाशाम्बक विजय, जय वामन अवधेश ॥१।२५॥
पद्मनाभ वैकुण्ठ जय, जय गोपति गोविन्द।
हृषीकेश अच्युत दमो, दर जय पदअरविन्द ॥२।२६॥
जय लोकेश्वर शंखकर, गदापाणि महिधारि।
शूकर कमलापति जया, च्युतजगगुरुरुमुरारि॥३।२७॥
जय यज्ञेश वराह जय, जय भूधर भूमीश।
योगप्रवर्तक योगपति, जय योगेश महीश ॥४।२८॥
धर्मप्रवर्तक योगकर, कृतप्रिय जय यज्ञेश।
जय यज्ञांग मखेश जय, जयजयजय कमलेश ॥५।२९॥
नारद सिद्धिद पुण्यकर, गृहजयजय जगवन्द्य।
वैदिकभाजन देव जय, जयजयजयसुरनन्द्य ॥६।३०॥
चतुर्बाहु जय दैत्यभय, कारक शंकर साधु।
सर्वात्मन् सर्वज्ञ जय, शाश्वतविजयअबाधु॥७।३१॥
जय विष्णो महदेवजय, नित्य अधोक्षज तोहिं।
विनयकरत हम जोरिकर, दीजै दर्शन मोहिं ॥८।३२॥

व्यासजी शुकाचार्यजी से बोले कि जब बुद्धिमान् मार्कण्डेयजी ने इस प्रकार स्तुति की तो पीताम्बर ओढ़े शंख चक्र गदा हाथ में लिये सब भूषणों से भूषित तेज से सब दिशाओं को प्रकाशित कराते हुये सनातन जनार्दन श्रीविष्णु भगवान् वहां प्रकट हुये ३३।३४ बहुत दिनों से जिनके दर्शन की अभिलाषा किये थे उन श्रीविष्णु भगवान्‌जी को देख कर झटपट शिर झुँकाकर पृथ्वी पर गिर भक्ति से बार २ गिरते उठते हुये मार्कण्डेयजी दोनों हाथ जोड़ भगवान्

के खड़े होकर स्तुति करते हुये बोले ॥ ३५ । ३६ ॥

चौपाई ॥

देव देव महदेव महोदय । महाकाय महेन्द्रविनोदय ॥
महाप्राज्ञमह चित्त तुम्हारे । विनय करत भय हरहु हमारे १।३७
रुद्रचन्द्र पूजित पदपंकज । कमलपाणि मर्दित दानवध्वज ॥
करतप्रणाम युगल करजोरे । नाथहरहु सबदुखभयमोरे २।३८
शेषभोगकृतशयन सनातन । सनकसनन्दन आदिभक्तजन ॥
तव पदपंकज लोचनलाये । नमतसदा अतिशयहरपाये३॥
विद्याधर गन्धर्व यक्षगण । किन्नर किम्पूरुपशुभवचभण ॥
गावततवयशसततमुरारी । नमोनमोहमकरतपुकारी ४।३९
नारायण नरसिंहजलेश्वर । गोवर्धनगुहवास महेश्वर ॥
पद्मनाभगोविन्दतुम्हारे । करतप्रणामहरहुदुखसारे ५ । ४०
विद्याधरमायाधरयशधर । त्रिगुणनिवासयोगधरदरहर ॥
त्रेतानलधरत्रितयतत्त्वधर । कीर्तिधराच्युतसोहिंसदाभर ६।४१
त्रयसुपर्णत्रिनिकेतत्रिवेदी । धरतदण्डत्रयहरतसुभेदी ॥
करतविनयहमरमानिवासू । करियकृपाहरियेउरत्रासू ७ । ४२
सजलजलदसमश्यामशरीरा । तड़ितविनिन्दकपीतकचीरा ॥
कटककिरीटकियूरहारमणि।करतप्रकाशित दिशासदागणि८।४३
विश्वमूर्तिमधुसूदनस्वामी । कनकरत्नकुण्डलसुललामी ॥
तासोंमण्डिकपोलसुहावन । देखतहीअघओघनशावन ९।४४
लोकनाथयज्ञेश्वरमखप्रिय । तेजोमयनिजजनप्रियहतभय ॥
वासुदेवपुरुषोत्तमअघहर । करतप्रणामरामदीजैवर ॥१०।४५।

व्यासजी बोले कि, भगवान् जनार्दन देवदेव प्रसन्न होकर इतनी स्तुति सुनकर मार्कण्डेयजीसे बोले ४६ कि हे वत्स! हम तुम्हारे इस बड़ेभारी तपसे व इनस्तोत्रों

से स्तुतिकरने से बहुत सन्तुष्ट हुये अब इससमय तुम्हारे सबपाप नष्टहोगये ४७ हे विप्रेन्द्र ! हम वरदेने के लिये प्राप्तहुये हैं जो चाहो वरमांगो हमारा दर्शन विना तपस्या किसी को नहीं होसक्ता ४८ यह सुन मार्कण्डेयजी बोले कि हे देवदेव ! हम इससमय आपके दर्शन से कृतार्थ हुये हे जगत्पते ! केवल आप अपनी अचलभक्ति हमको दें ४९ और भी हे माधव ! श्रीपतिजी जो आप हमारे ऊपर प्रसन्न हुये हो तो हे हृषीकेश ! हम को बहुत दिन के लिये आयु दीजिये जिसमें बहुत दिनोंतक आपकी पूजाकरें ५० श्रीभगवान् बोले कि मृत्यु तो तुमने पहिलेही जीतली अब चिरजीवी होओ व मुक्तिदायिनी अचला वैष्णवी भक्ति तुम्हारे हो ५१ व हे महाभाग ! यह तीर्थ आजसे तुम्हारे नामसे प्रसिद्ध होगा व फिर तुम हमको क्षीरसागर में शयनकियेहुये देखोगे ५२ व्यासजी बोले कि, इतना कह कर कमलनयन करुणायन श्रीभगवान् वहीं अन्तर्धान होगये व धर्मात्मा मार्कण्डेयजीभी मधुसूदन भगवान्की चिन्तना करते हुये ५३ व देवदेव शुद्धस्वरूप की पूजा करतेहुये व नमस्कार करतेहुये वेदशास्त्र व पुण्य सब पुराण ५४ गाथा इतिहास व पितरों के हितकारी श्राद्धादि के प्रकरण सब मुनियों को सुनाने लगे ५५ बहुत दिनों के पीछे एकसमय परमेश्वर श्रीविष्णुभगवान् के वचन का स्मरण करतेहुये सब शास्त्र जाननेवालों में श्रेष्ठ मार्कण्डेयजी समुद्र में भ्रमतेहुये श्रीजनार्दन भगवान् के दर्शनकरने को गये ५६

परन्तु बहुत दिनोंतक उस समुद्र में भ्रमयुक्त होकर भृगुके पौत्र मार्कण्डेयजी हरिभक्तिको प्राप्तहोकर क्षीर-समुद्र में जाकर शेषशय्यापर शयनाकियेहुये हरि को उन्होंने देखा ॥ ५७ ॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेमार्कण्डेयचरित्रेदशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

ग्यारहवां अध्याय ॥

दो० ग्यारहयें अध्यायमहँ, मुनि मार्कण्ड महान।
बहुबिधिहरिकीस्तुतिकरी, वरलहसहितविधान॥ १ ॥

श्रीव्यासजी बोले कि, चराचरके गुरु जगन्नाथ श्री हरि के प्रणाम करके शेषनागही को शय्याबनाकर उस पर सोते हुये श्रीभगवान् की स्तुति मार्कण्डेयजी करने लगे १ मार्कण्डेयजी बोले कि हे भगवन्, विष्णो, पुरुषोत्तम! प्रसन्नहोओ हे देवदेवेश, हे गरुड़ध्वज! प्रसन्नहोओ २ हे लक्ष्मीश, हे विष्णो, हे धरणीधर! प्रसन्नहोओ हे लोकनाथ, हे परमेश्वर! प्रसन्नहोओ ३ हे सर्वदेवेश, हे कमलनयन! प्रसन्नहोओ हे मन्दरधर, हे मधुसूदन! प्रसन्नहोओ ४ हे शुभगाकान्त, हे भुवनाधिप! प्रसन्नहोओ हे महादेव, हे केशव! आज हमारे ऊपर प्रसन्न होओ ५ हे कृष्ण! हे अचिन्त्य, हे विष्णो, हे अव्यय, हे विश्व, हे अव्यक्त! तुम्हारी जय हो व हे विष्णो! तुम्हारे नमस्कार है ६ देव अजेय सत्य अक्षरकाल ईशान सर्व तुम्हारी जय हो व तुम्हारे नमस्कार है ७ यज्ञपते, नाथ, विश्वपते, भूतपते, सर्वपते, विभो! तुम्हारी जय हो ८ विश्वपते दक्ष पापहर

अनन्त जन्मजरानाशक तुम्हारी जय हो व तुम्हारे नमस्कार है ९ हे भद्रातिभद्रेश! तुम्हारी जय हो व तुम्हारे नमस्कार है हे कामद, हे काकुत्स्थ, हे मानद, हे माधव! तुम्हारी जयहो १० शंकर श्रीश देवेश तुम्हारी जयहो व तुम्हारे नमस्कारहै कुंकुमरक्ताभ, पंकजलोचन! तुम्हारी जय हो ११ हे चन्दनलिप्तांग, श्रीराम! तुम्हारी जयहो व तुम्हारे नमस्कार है हे जगन्नाथ, हे देवकीनन्दन! तुम्हारी जयहो १२ हे सर्वगुरो, हे ज्ञेय! जयहो व तुम्हारे नमस्कार है हेसुन्दर, हे सुन्दरीवल्लभ, हे पद्माभ! जय हो हे सर्वांगसुन्दर, हे वन्द्य! जय हो व तुम्हारे नमस्कार है १३ सर्वद, सर्वेश, शर्मद, शाश्वत भक्तों के मनोरथ देनेवाले, हे प्रभविष्णो! तुम्हारी जय हो व तुम्हारे नमस्कार है १४ कमलनाभ कमलाक्षी लोकनाथ वीरभद्र तुम्हारे नमस्कारहै १५ त्रैलोक्य[illegible] चतुर्मूर्तिधारी जगत्पति देवाधिदेव नाराय[illegible] नमस्कार है १६ वासुदेव पीता[illegible] १७ शार्ङ्ग[illegible] कृष्ण राम [illegible] बार २ नमस्कार है १८ वेदान्तवेद्य अनन्त विष्णु सकलाध्यक्ष श्रीधर अच्युत तुम्हारे नमस्कार है १९ लोकाध्यक्ष जगत्पूज्य परमात्मा तुम्हारे नमस्कारहै तुम सब लोकोंकी माता हो व तुम्हीं जगत् के पिता हो २० दुःखितों के सुहृद् मित्र व प्रिय तुम्हींहो हेप्रपितामह! तुम्हीं सब के गुरु तुम्हीं गति तुम्हीं साक्षी व तुम्हीं पति तुम्हीं सब के परायण हो २१ ध्रुव तुम्हीं हो व वषट्कार करनेवाले तुम्हींहो

हवि व अग्नि तुम्हीं हो शिव, वसु, धाता, ब्रह्मा, सुरेश्वर सब तुम्हीं हो २२ यम, रवि, वायु, जल, कुबेर, मन, दिन, रात्रि, चन्द्रमा, धारणाशक्ति, लक्ष्मीकी शोभा, क्षमा व पर्वत सब तुम्हीं हो २३ सब जगतों के कर्ता व हर्ता मधुसूदन तुम्हींहो व तुम्हीं सब के रक्षक भी हो चर अचर सब तुम्हींहो २४ हे परमेश्वर! करण कारण व कर्ता तुम्हीं हो हे शंख चक्र गदा हाथों में लेनेवाले, माधव! मेरा उद्धारकरो २५ हे प्रिय, हे पद्मपलाशाक्ष, हे शेषपर्यङ्क पर शयन करनेवाले हे पुरुषोत्तम ! भक्ति से निरन्तर तुम्हारे ही प्रणाम करता हूँ २६ हे देव! श्रीवत्स से चिह्नित जगत् के बीजरूप श्याम कमल नयन व कलियुगके भी पापों के नाश करनेवाले तुम्हारे शरीर के नमस्कार करताहूं २७ लक्ष्मी धारण करनेवाले उदार अङ्गवाले दिव्यमाला से विभूषित मनोहर पीठवाले महाबाहु ग्रहण कियेहुये भूषणों से भूषित २८ कमलनाभ विशालनयन कमलपत्र सदृश नेत्रवाले लम्बी व ऊँची नासिकावाले सजल मेघ सम नीलस्वरूप २९ दीर्घबाहु पीनता के कारण गुप्ताङ्ग वाले रत्नों के हारसे शोभित वक्षस्स्थलवाले सुन्दर भौंहवाले ललाटपर मुकुट धारण किये चीकने दांतों वाले सुन्दर नयनवाले ३० मनोहर बाहु अरुणओष्ठ रत्नजटित कुण्डलधारी गोल कण्ठवाले मोटे कन्धेवाले सरसरूप श्रीधर हरि ३१ सुकुमारस्वरूप अज नित्य नीले घुँघुवारे केशोंवाले ऊँचे स्कन्धवाले चौड़ी छाती वाले कर्णपर्यन्त विस्तृत नेत्रवाले ३२ सुवर्णवत्प्रका-

शित कमल सदृश मुखवाले लक्ष्मीजी के बड़ेभारी ईश्वर सब लोकों के विधाता सब पापों के हरनेवाले हरि ३३ सब लक्षणों से सम्पन्न सब प्राणियों के मन के हरनेवाले विष्णु अच्युत ईशान अनन्त व पुरुषोत्तम ३४ मनसे तुम्हारे नित्य नमस्कार करताहूं तुम नारायण रोगरहित वरदान देनेवाले इच्छा पूरण करनेवाले कान्तस्वरूप अनन्त अमृत व शिवरूप हो ३५ हे भक्तवत्सल, विष्णो! शिर से सदा तुम्हारे नमस्कार करताहूं वायु के चलने से चञ्चल अति घोर इस महार्णवमें ३६ सहस्रफणों से शोभित अनन्त शरीर की शय्या के ऊपर रम्य विचित्र शयनपर जो कि मन्द पवन के चलने से रमण करने के योग्य है ३७ लक्ष्मीजी के भुजपञ्जर से दुलराये हुये तुमको यहां सर्वभूतमय मैंने देखा जोकि मनसे भी आप अगोचर रहते हैं ३८ हे भगवन्! इससमय तुम्हारी माया से मोहित मैं अतीव दुःख से पीड़ितहूँ क्योंकि स्थावर जङ्गम सब नष्ट होगये हैं व इस एकार्णव में मैं विद्यमानहूं ३९ सत्र से शून्य होने के कारण इसमें अन्धकारही दिखाई देता है इससे दुष्पार दुःख के कीचड़ के तुल्य दुःख देनेवाला है ४० शीत आतप वृद्धता रोग शोक व तृष्णादिकों से मैं अत्यन्त पीड़ितहूँ व हे अच्युत! शोक मोह ग्रहरूपों से ग्रस्त होकर इस भवसागर में विचरता हूँ ४१ सो भाग्यवश से आज यहां तुम्हारे चरणारविन्दों के शरण में पहुँचा परन्तु इस महाघोर एकार्णव में नाना प्रकार के दुःखों से पीड़ितहूँ ४२

बहुतदिनों से भ्रमणकरते २ बनाय थकगयाहूँ इससे आज तुम्हारे शरण में हूँ हे कमलनयन, विष्णो, महाकाय! अब प्रसन्न होओ ४३ हे विश्वयोने, विशालनयन, विश्वात्मन्, विश्वसम्भव! मैं अनन्य शरण होकर तुमको प्राप्त हुआहूँ हे कुलनन्दन! ४४ शरणागत व आतुर मुझको कृपा से पालो हे पुराणपुरुषोत्तम, पुण्डरीकाक्ष! तुम्हारे नमस्कार है ४५ हे अञ्जनवच्छ्याम, हृषीकेश, मायामय! तुम्हारे नमस्कार है हे महाबाहो! संसारसागर में डूबते हुये मुझको उबारो ४६ क्लेशरूप महाग्रहों से अति क्लेशयुक्त दुस्तर व गह्वर भवसागर में पतित मुझ अनाथ दीन कृपण को उबारो हे गोविन्द, वरदेश! तुम्हारे नमस्कारहै ४७ त्रैलोक्यनाथ हरि भूधर देवदेव श्रीवल्लभ तुम्हारे बार २ नमस्कार हैं ४८ हे कृष्ण, कृष्ण! तुम बड़े कृपालु व अगतिवालों की गति हो हे मधुसूदन! संसारसागर में डूबतेहुये लोगोंके ऊपर प्रसन्न होओ ४९ एक आद्य पुरुषपुराण जगत्पति कारण अच्युत प्रभु जनार्दन जन्म जरा दुःखनाशन सुरेश्वर सुन्दर लक्ष्मीपति ५० बृहद्भुजावाले श्याम व कोमल स्वरूप शुभ श्रेष्ठरूप श्रेष्ठमुख कमलदलनेत्र लहरियों के समान विस्तृत केशोंवाले हरि अति मनोहररूप निरन्तर सदा विद्यमान रहनेवाले हे ईश्वर! तुम्हारे नमस्कार करता हूँ ५१ जिह्वा वही है जो हरिकी स्तुति करती है व चित्त वही है जो हरि में अर्पित है व जो हाथ तुम्हारी पूजा करते हैं वेही सदा बड़ाई करने के योग्य हैं ५२ अन्य

सहस्रों जन्मों में जो मैंने पापकिया हो हे गोविन्द! वह वासुदेव ऐसा कीर्तन करने से आप हरलें ५३ व्यासजी बोले कि जब बुद्धिमान् मार्कण्डेयजी ने इस प्रकार स्तुति की तो सन्तुष्ट होकर विश्वात्मा गरुड़ध्वज श्री हरि उन मुनि से बोले ५४ कि हे विप्र, भृगुनन्दन! हम तुम्हारी तपस्या व स्तुति से प्रसन्न हुये तुम्हारा कल्याण हो वर मांगो जो कुछ मांगोगे सब वर देंगे ५५ यह सुनकर मार्कण्डेयजी बोले कि हे देवेश! यदि आप सन्तुष्ट हुये हों तो अपने चरणकमल में हमको सदा भक्ति दें व एक और भी वर तुम से मांगते हैं ५६ कि जो कोई इस स्तोत्र से नित्य तुम्हारी स्तुति करे हे देवेश, जगत्पते! उसको स्वर्गलोक में वास देना ५७ व पूर्वकाल में तपकरतेहुये मुझको जो आपने दीर्घायु दी थी आज इस समय वह सब तुम्हारे दर्शन से सफल हुई ५८ व हे भगवन्, देवेश! तुम्हारे चरणारविन्दों की पूजा करताहुआ जन्ममृत्युरहित मैं नित्य यहीं वसनाचाहताहूँ ५९ श्रीभगवान् बोले कि हे भृगुश्रेष्ठ! हम में तुम्हारी अचलभक्तिहो व उसी भक्तिसे कालसे तुम्हारी सदा मुक्ति रहेगी कभी तुमको काल न बाधित करेगा ६० व जो कोई हमारी दृढ़ भक्ति करके सायंकाल इस तुम्हारे कहेहुये स्तोत्र को पढ़ेगा वह हमारे लोक में जाकर सदा हर्षित रहेगा ६१ व हे भृगुश्रेष्ठ! जहां २ स्थित होकर तुम हमारा स्मरण करोगे वहां २ हम प्राप्त होंगे क्योंकि जिससे हम भक्तों के वश में रहते हैं ६२ व्यासमुनि बोले कि॥

दो० इमि भृगुश्रेष्ठ मुनीन्द्रसों, कहि माधव भे मौन।
हरिहि लखत सर्वत्रमुनि, तहँ वस्यो तजि गौन॥ १६३॥
विप्र कहा हम चरित यह, वरमति भार्गव केर।
मार्कण्डेय महर्षि मोहिं, भाष्यो निजमति हेर॥ १६४॥

चौपैया॥

करि हरिपूजा मन तजि दूजा जो यह चरित पुराना।
भृगुसुत सुत केरो नित हिय हेरो पढ़िहैं सहित विधाना॥
वे नर गतपापा विरहितदापा पूजित भक्तन पाहीं।
नरहरिपुरवसिहैं भूषणलसिहैं प्रमुदितह्वैमनमाहीं॥ १६५॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेमार्कण्डेयचरित्र न्नामैकादशोऽध्यायः॥ ११॥

बारहवां अध्याय॥

दो० द्वादशयें अध्याय महँ, यम रु यमी संवाद।
ज्यहिसुनिदृढ़मतिनरन के, होत विनष्ट विषाद॥ १॥

सूतजी भरद्वाजादि मुनियोंसे बोले कि, सब पापनाशनी पुण्यरूपिणी अमृतवत् स्वादुयुक्त इस कथाको श्रवणकरके धर्मात्मा शुकाचार्यजी अतृप्तहोकर व्यासजी से बोले १ श्रीशुकजी बोले कि धीमान् मार्कण्डेयजी की तपस्या अतीव आश्चर्य करानेवाली है कि जिसके करनेसे उन्होंने साक्षाद्विष्णु भगवान् के दर्शनकिये जिससे कि मृत्यु को भी पराजित करदिया २ हे तात! इस पुण्य वैष्णवी कथाके सुनने से हमारी तृप्ति नहीं हुई इससे और भी पुण्यवती व पाप हरनेवाली कथा हम से कहिये ३ सो प्रथम जो मनुष्य दृढ़चित्त सदा रहते हैं इससे अकार्य कभी नहीं करते उन लोगों के

लिये जो पुण्य ऋषियों ने कहा हो वह हम से कहिये हे महामतिवाले ! ४ यह सुनकर व्यासजी बोले कि दृढ़ चित्तवाले नरों को इस लोक में व परलोक में जो पुण्य होती है वह हम कहते हैं सुनो ५ इस विषयमें एक पुरातन इतिहास है जिसमें महात्मा यमराज व उनकी भगिनी यमी का संवाद है ६ अदिति के विवस्वान् नाम पुत्र हुये उनके दो सन्तान हुये एक यमराज व उनसे छोटी यमीनाम कन्या ये दोनों बड़े तेजस्वी थे ७ वे दोनों अपने मनसे क्रीड़ा करते हुये अपने पिता के उत्तम भवन में बड़ेहुये ८ एक दिन की वार्ता है कि यमी अपने सगे भाई यमराजजी से यह बोली कि जो भाई पति की इच्छा किये हुई अपनी भगिनी के साथ भोग करने की इच्छा न करे ९ उसने भ्राता होकर क्या किया जो अपनी भगिनी का पति न होगया वह जानों उत्पन्नही नहींहुआ क्योंकि किसी प्रकार से नहीं उत्पन्न हुआ १० अनाथ नाथ की इच्छा करती हुई अपनी भगिनी का नाथ जो नहीं होता उसकी भगिनी उसको अपना भर्ता बनाना चाहती है तो भी वह उसको अपनी स्त्री नहीं बनाना चाहता ११ वह लोक में भ्राता नहीं कहाता बरन मुनिश्रेष्ठ कहाता है क्योंकि उसके विचार से तो सब कन्याही हैं कोई भी संसार में उसकी भार्या नहीं होसक्की १२ हा भ्राता की इच्छा से भगिनी काम से जलाई जाय व भाई उसको शान्त न करे यह बड़े आश्चर्य की बात है इससे हे भाई ! जो कार्य हम तुम्हारे साथ किया चाहती हैं वह तुम हमारे साथ

करना चाहो १३ यदि ऐसा न करोगे हमारे संग भोग न करोगे तो तुम्हारी इच्छा किये हुई हम विचेतन होकर मरजायँगी हे भाई! काम का दुःख असह्य है तुम क्यों हमारी इच्छा नहीं करते १४ हे प्रिय! कामाग्नि से अत्यन्त सन्तप्त होकर मैं ऐसा बकती हूँ अब विलम्ब न करो हे कान्त! काम से पीड़ित मुझ अपनी स्त्री के वशीभूत होओ देरी न करो १५ अब अपने शरीर से हमारे शरीर का संयोग करने के योग्य तुम हो अर्थात् हमारे संग मैथुन करो यमराज बोले कि, हे भगिनि! यह लोकविरुद्ध धर्म कैसे तुम कहती हो १६ हे भद्रे! ऐसा सुचैतन्य कौन पुरुष है जो अकर्त्तव्य कार्य को करे हे भगिनि! हम तुम्हारे शरीर के संग अपने शरीर का संयोग न करेंगे १७ काम से पीड़ित भी अपनी भगिनी के मनोरथ को भाई अपने से नहीं पूरण करता क्योंकि जो भगिनी के संग भोग करता है वह महापापी गिना जाता है १८ हे शुभे! भ्राता भगिनीके संग भोगकरे यह पशुओं का व पक्षियों का धर्म है मनुष्य, देव, राक्षस, दैत्यादिकों का नहीं १९ यमी बोली कि, जैसे माता के पेट में हम तुम दोनों एकही स्थान में रहे वह संयोग दोषदायी नहीं हुआ ऐसेही यह भी संयोग दोषदायी न होगा २० हे भाई! मुझ अनाथ का भी अच्छा तुम क्यों नहीं चाहते देखो निर्ऋतिनाम अपनी भगिनी के संग एक राक्षस नित्य भोग करता है २१ यमराज बोले कि, लोगों के निन्दित आचरण की निन्दा ब्रह्माजी ने भी की है इससे जो

कार्य प्रधानपुरुष करते हैं लोग उन्हीं कर्मों के अनुयायी होते हैं इससे प्रधानपुरुष को चाहिये कि सदा अनिन्दितही आचरणकरे क्योंकि उसका आचरण देखकर और लोग करते हैं २२ इससे निन्दितकर्म यत्न से बराना चाहिये यही धर्म का लक्षण है क्योंकि जो २ आचरण श्रेष्ठपुरुष करता है सो २ इतरलोग भी करते हैं २३ व जिसका प्रमाण श्रेष्ठ करताहै लोग उसीके अनुयायी होते हैं इससे हे सुभगे ! हम तुम्हारे वचन को अतिपाप मानते हैं २४ क्योंकि यह सब धर्मों से विरुद्ध है व लोक में विशेष करके इससे हमसे और जो कोई रूप शील में विशेष हो २५ उसके संग आनन्द करो वह तुम्हारा पति होगा हम तुम्हारे पति नहीं होसक्के हे भद्रे ! हम दृढ़व्रत हैं अपने शरीर से तुम्हारा शरीर नहीं स्पर्शकरसक्के २६ मुनिलोग उसे महापापी कहते हैं जो कि भगिनी के संग भोग करता है यमी बोली कि, हम तुम्हारा ऐसा रूप इस लोक में दुर्लभ देखती हैं पृथ्वीपर रूप व अवस्था कहां प्रतिष्ठित है २७ हम नहीं जानतीं कि तुम्हारा चित्त क्यों ऐसा प्रतिष्ठित है जो कि अपने रूप व गुणों से युक्त व मोहित हमको तुम नहीं चाहते २८ व तुम्हारे हृदय को भी नहीं जानतीं किस वस्तु से ऐसा बनायागया है व कहां स्थित है जैसे पतली कटि का हस्ती हस्तिनी के ऊपर लपटता है वैसेही तुम क्यों नहीं लपटते २९ और मैं तो तुम को ऐसे प्राप्त होना चाहती हूँ जैसे लता वृक्ष में लपटकर उसी में मग्नी होजाती है इससे अब

दोनों बाहुओं से तुम को छपटाकर हँसतीहुई स्थित होती हूँ चाहे जो हो ३० यमराज बोले कि हे देवि, श्यामलोचने, सुश्रोणि! तू अन्य किसी देव की सेवा कर वह जैसे मतवाला हाथी हथिनी को आलिंगन करता है वैसेही तुझको आलिंगित करेगा ३१ काम से मोहितचित्त तेरे विभ्रम को जो प्राप्तहुआ हो उसी देव की देवी तू जाकर हो हे श्रेष्ठरंगवाली! ३२ मनुष्यलोग जो सब प्राणियों को इष्ट होती है उसे श्रेष्ठ कहते हैं व कल्याणयुक्त और सुन्दर अंगवाली को संस्कारयुक्त कहते हैं ३३ परन्तु जो विद्वान् होते हैं वैसी स्त्रियों के भी लिये दूषित कर्म नहीं करते इससे हे महाप्राज्ञे! हम तुझको नहीं प्राप्त हुये इसके लिये परिताप नहीं करते न करेंगे क्योंकि हम दृढ़व्रत हैं ३४ व हमारा चित्त निर्मल है और विष्णु व रुद्र में सदा स्थित रहता है इसी से हम पाप करने की इच्छा नहीं करते क्योंकि धर्म में हमारा चित्त लगता है व दृढ़व्रत है ३५ व्यासजी इसी कथा को शुकाचार्यसे कहनेलगे कि इस प्रकार बार २ यमी ने कहाभी परन्तु दृढ़व्रत करनेवाले यमराज ने उसका कार्य न किया इसीसे वे देवत्व को प्राप्तहुये ३६ इससे जो दृढ़चित्तवाले पुरुष इस प्रकार पाप नहीं करते उनके लिये अनन्त फल कहेगये हैं व उनको स्वर्गका फल होता है ३७ यह सनातन पूर्वसमय का यमी का उपाख्यान सब पाप हरनेवाला है इससे निन्दारहित होकर इसे सुनना चाहिये ३८ जो ब्राह्मण नित्य इसे हव्य कव्य देने के

समय पढ़ते हैं उनके पितर सन्तृप्त होकर यमालय को नहीं जाते ३९ व जो कोई इसको पढ़ता है वह पितरों से अनृण होजाता है व यमराज की कठिन यातनाओं से छूटजाता है ४० ॥

चौपैया ॥

सुत यह आख्याना उत्तमभाना जो सब वेदनगावा।
हम तुम्हें बतावा अतिमनभावा बहुतपुरान कहावा॥
यहहै अघहारी पढ़िहि पुकारी सो न परिहि भवकूपा।
अब काह बखानों जो सुतभानों कहहुँस्वमतिअनुरूपा॥४१॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेयमीयमसंवादेद्वादशोऽध्यायः॥ १२॥

तेरहवां अध्याय ॥

दो० तेरहयें अध्याय महँ, पतिव्रता अरु विप्र।
सम्भाषण करि करन कह, जननीसेवा क्षिप्र॥ १॥

श्रीशुकाचार्यजीने श्रीव्यासमुनि से कहा कि, हे तात! यह तो बड़ी विचित्र वेद की कथा तुमने हमसे कही अब और भी पापप्रणाशनी व पुण्यदेनेवाली कथा कहिये १ व्यासजी बोले कि हम एक उत्तम पुराना वृत्तान्त कहते हैं जिसमें एक पतिव्रता स्त्री का व एक किसी ब्रह्मचारी का संवाद है २ वेदपारगामी नीतिमान् सर्वशास्त्रों के निश्चयार्थ जाननेवाले व्याख्यान करने में परिनिष्ठित अपने धर्मकार्य में निरत परधर्मसे विमुख ऋतुकालमें ही अपनीस्त्री के संग भोगकरनेवाले अग्नि-होत्र करने में परायण एक कश्यपनाम ब्राह्मण हुये ३।४ व सन्ध्यासमय व प्रातःकाल अग्नि में आहुति देकर ब्राह्मणों को तृप्तकरते हुये व गृह में आयेहुये अति-

थियों को पूजते हुये नरसिंहजी की पूजा किया करते थे ५ उनकी स्त्री का सावित्रीनाम था वह बड़े भाग्य वाली पतिव्रता व अपने पतिकी शुश्रूषामें व प्रियहित करने में रत महाभाग्यवती थी ६ व बहुत दिनोंतक अपने पति की सेवाही करने से परोक्षज्ञान को प्राप्त हुई व सकलगुणों से सम्पन्न होकर कल्याणवती व निन्दारहितहुई ७ उस स्त्री के साथ वे धर्मात्मा ब्राह्मण देव मध्यदेश के नन्दिग्राम नाम तीर्थ में अपने अनुष्ठान में परायण होकर निवास करते थे ८ व उसी नगर की उत्तर ओर अयोध्यापुरी का रहनेवाला महामतिवाला एक यज्ञशर्मा नाम ब्राह्मण था उसकी स्त्री का रोहिणी नाम था यह बड़ीसाधु प्रकृतिवाली थी ९ व स्त्रियों के सब लक्षणों से सम्पन्न व पति की सेवा में तत्पर रहती थी उसने अपने पति के संयोग से एक पुत्र उत्पन्न किया १० यह ब्राह्मण यायावरवृत्तिवाला था अर्थात् शिलोञ्छवृत्तिवाला था जब उसके पुत्र उत्पन्न हुआ तो उस पण्डित ने स्नानकरके अपने पुत्र का जातकर्म किया व बारहें दिन अपने तनय का देवशर्मा नाम धराया ११ । १२ सो ऐसेही नहीं पुण्याहवाचन करके वेदविधि से नामकरण किया फिर चौथेमास में निष्कासन कर्म किया १३ जब वर्ष भर पूर्ण हुआ तब विधिपूर्वक उसका मुण्डन कराया होते २ जब सात वर्ष का हुआ तब गर्भसुधा अष्टमवर्ष में यज्ञोपवीत किया १४ इस प्रकार उपवीत धारणकर अपने पिताही से उसने वेद पढ़े परन्तु एक वेद पढ़ने

को बाकीही रहा कि स्त्री के अर्थ पिता तो स्वर्गी होगया १५ पिता के मरजाने पर मातासहित वह पुत्र बहुत दुःखित हुआ तब सबलोगों ने धैर्यधारण करके उसको पितृकार्य करनेकी आज्ञादी १६ तब जैसा वेद में प्रेतकार्य का विधान है देवशर्मा ने वैसाकिया व फिर गङ्गादिक तीर्थों में जाय विधिसे स्नानकरके उसीग्राम में पहुँचा जहां कि वह पतिव्रता स्त्री रहती थी वहां पहुँचकर अपने को ब्रह्मचारी करके प्रसिद्ध किया १७।१८ व उस ग्राममें भिक्षा मांगलाकर वेदपाठ कियाकरे व होम करता हुआ उसी नन्दिग्राम में कुछदिन ठहर गया १९ वहां जब पति मृतक होगया व पुत्र ब्रह्मचारी होकर तीर्थोंको चला गया तो कोई रक्षक न रहने के कारण उस देवशर्माकी माता बहुत दुःखितहुई २० एक दिनकी वार्ता है कि नदी में स्नान करके उस ब्रह्मचारी ने अपना वस्त्र सूखने के लिये फैलादिया व आप मौनव्रत धारणकरके जपकरनेलगा २१ इतने में एक कौआ व एक बगुली दोनों उसका वस्त्र लेकर उड़गये उन दोनों को लेजातेहुये देखकर देवशर्माने बहुत उनको बकाझका २२ उसके बकने अपकार करने से वे दोनों प[illegible] उस वस्त्रपर विष्ठा करके चलेगये तब आकाश में [illegible] जातेहुये उनपक्षियों को देवशर्माने बड़े रोषसे दे[illegible] २३ उसके रोष के अग्नि से जलकर वे दोनों प[illegible] पृथ्वी पर गिरपड़े उन दोनों को मरकर पृथ्वीपर गि[illegible] ये देख वह ब्राह्मण बहुत विस्मित हुआ व कहने ल[illegible] कि तपकरने से मेरे समान और कोई पृथ्वीपर

नहीं है यह मानकर उसी नन्दिग्राम में भिक्षामांगने को गया २४ व ब्राह्मणों के घरों में घूमता २ तपस्या के गर्वसे युक्त वह ब्रह्मचारी उस गृह के द्वारपर पहुँचा जिसमें वह महापतिव्रता स्त्री रहती थी २५ उस ब्रह्मचारी ने जाकर भिक्षा के लिये पुकारा व पतिव्रता ने सुना परन्तु इसके पूर्व उसके पति ने किसी कार्यके लिये आज्ञादी थी इस लिये वह पति का कार्य करने लगी २६ वह कार्य करके फिर उसने अपने पति के चरण गर्म जल से धोकर व पति को समझा बुझाकर संतुष्टकरकराकर भिक्षा देने को घर से बाहर निकली २७ तब क्रोध से लालनेत्र करके ब्रह्मचारीने भस्म करदेने की इच्छा से बार २ उस पतिव्रता की ओर नेत्र फाड़ २ कर देखा उस सावित्री नाम पतिव्रता ने हँस कर उस ब्रह्मचारी से कहा कि २८ न मैं कौआ हूँ न बगुली जो कि तुम्हारे क्रोध से मरकर नदी के तीर पै पृथ्वी पर गिरपड़े यदि भिक्षा लेना हो तो कोप शान्त करो भिक्षा लो २९ जब सावित्री ने ऐसा कहा तो ब्रह्मचारी ने मारे डरके आगे बढ़कर भिक्षाली व दूरही से अर्थ जानलेनेवाली उस की शक्ति को मन से चिन्तना करनेलगा ३० इससे आश्रम पर आय अपने मठ में भिक्षा धरके जब पतिव्रता भोजन करचुकी व उस का पति भी गृहस्थ तो थाही कहीं किसी कार्य के लिये घर से बाहर निकलगया ३१ तब फिर उसके घर पर आय उस पतिव्रता से ब्रह्मचारी बोला कि हे महाभागे! पूछते हुये मुझसे यह यथार्थ कहो ३२ कि विना देखी

सुनी बात ... जानलेने का ज्ञान इतनी शीघ्रता के साथ तुमको कैसे हुआ जब उस साधु चित्तवाली पतिव्रता से ब्रह्म... ने ऐसा कहा तो वह पतिव्रता ३३ घर में आक... छते हुये उस ब्रह्मचारी से बोली कि हे ब्रह्मन्! जो ... तुम पूछते हो वह एकाग्रचित्त होकर सुनो ३४ ... पने धर्म से बढ़ाहुआ कर्म है वह हम तुमसे ...ा स्त्रियों को पति की शुश्रूषा करनाही सर्वोपरि ... है ३५ सो हे महामते! वही पति शुश्रूषारूप धर्म हम सदा किया करती हैं और कुछ नहीं करतीं बस दिन रात्रि सन्देहरहित होकर वही कर्म श्रद्धा से करती हैं जिससे पति का परितोष होता है ३६ बस यही करती हुई हमको विना देखे सुने पदार्थका ज्ञान अपने स्थान ही पर बैठे २ होजाता है और भी तुम से कहेंगी यदि इच्छा हो तो सुनो ३७ तुम्हारे पिता शिलोञ्छवृत्ति धारण किये थे इस से अत्यन्त शुद्ध थे उनसे वेद पढ़ कर पिता के मरजाने प... न्त यहां लेआये हो ३८ वहां वृद्ध दीन तपस्विनी अनाथ व विधवा अपनी माता को छोड़कर अपना पेटपालने के ...ये व देश देखने के लिये यहां चले आये हो ३९ ...ना जिसने तुमको प्रथम गर्भ में धारण किया फिर ...म होने पर पालन लालन किया उस माता को छोड़ ... हे ब्राह्मण! वन में आकर तपस्या करते हुये तुम ... लज्जित नहीं होते ४० हे विप्र! जिसने बाल्या-...था में तुम्हारा मल मूत्र अपने हाथोंसे उठाया उस ...खित माताको घरमें छोड वन में घूमने से तुमको

क्या होगा ४१ जिससे तुमने माता को दुःख दिया है इससे तुम्हारे मुख में दुर्गन्ध आती है तुम्हारे पिताही ने तुम्हारे संस्कार किये हैं इससे तुमको यह शक्ति हुई है माता से तो कुछ कामही नहीं ४२ हे दुर्बुद्धे, पापात्मन् ! इस समय तुमने वृथा पक्षियों को भस्म किया क्योंकि उसका स्नान वृथा है तीर्थ करना वृथा है जपना वृथा व होम करना वृथा है ४३ व हे ब्रह्मन् ! वह वृथा ही जीता है जिसकी माता अत्यन्त दुःखित होरही है व जो मातृवत्सल पुरुष निरन्तर अपनी माता की रक्षा करता है ४४ वह जानों सब अनुष्ठान करता है व इसलोक में परलोक में उसको सब फल मिलते हैं हे ब्रह्मन् ! जिन पुरुषों ने अपनी माता के वचन पाले ४५ वे इसलोक में व परलोक में भी मान्य हैं व नमस्कार करने के योग्य हैं इससे जहां तुम्हारी माता है आज ही वहां जाकर ४६ उसकी रक्षाकरो क्योंकि जबतक वह जीती है उसकी रक्षा करनाही तुम्हारा परमतप है और सब वस्तुओं के नाशनेवाले इस क्रोध को छोड़ दो ४७ अब जिन दोनों पक्षियों को तुमने मारडाला है अपनी शुद्धता के लिये उनका प्रायश्चित्त करो हमने यथातथ्य यह सब तुमसे कहा ४८ हे ब्रह्मचारिन् ! जो तुम सज्जनों की गति चाहते हो तो जो २ हमने कहा है सब करो ब्राह्मण के पुत्र से ऐसा कहकर वह पतिव्रता चुप होरही ४९ व वह ब्राह्मण भी अपने अपराध क्षमा कराताहुआ सावित्री से बोला कि हे श्रेष्ठरंगवाली ! अज्ञान से कियेहुये मेरे पापों को

क्षमाकर ५० हमने क्रोधदृष्टि से जो तुम्हारा अप्रिय किया है वह क्षमा करो तुमने हमारे बड़े हित की बातें कहीं उसका मैं तुम्हारा ऋणी हूँ ५१ अब वहां जाकर जो २ कार्य हमारे करने के योग्य हों सब हमसे बताओ जिनके करने से हमारी सुगति हो ५२ जब उस ब्राह्मण ने ऐसा कहा तो उस पूछते हुये विप्र से वह पतिव्रता बोली कि जो कर्म तुम्हारे करने के योग्य हैं वे हम कहती हैं हमसे सुनो ५३ हे ब्रह्मन्! इस अपनी भिक्षावृत्ति से निश्चयकर अपनी माता का पालन पोषण करना व इन दोनों पक्षियों का प्रायश्चित्त चाहे यहां कर डालो वा वहां जाकर करना ५४ व यज्ञशर्मा की कन्या तुम्हारी भार्या होगी उसे जाकर धर्म से ग्रहण करो पर जब तुम अपने बूते वहां जाओगे तो वह अपनी सुता तुमको देगा ५५ उस स्त्री में तुमसे एक पुत्र होगा और तुम्हारी सन्तति के बढ़ानेवाला होगा व जैसे तुम्हारे पिता की यायावृत्ति थी वैसेही तुम्हारी भी होगी ५६ फिर जब तुम्हारी स्त्री मरजायगी तो तुम त्रिदण्डी होजाओगे व संन्यासाश्रम के धर्म के विधिपूर्वक करने से नरसिंहजी के प्रसाद से वैकुण्ठ को प्राप्त होओगे ५७ पूछतेहुये तुमसे यह हमने भावी कहदी है जो इसे झूँठ न मानते हो तो सब हमारा वचन करो ५८ ब्राह्मण बोला कि हे पतिव्रते, शुभेक्षणे! अभी मैं माता की रक्षाके लिये जाताहूं व जाकर सब तुम्हारे वचन करूँगा ५९ हे ब्रह्मन्! देवशर्मा यह कहकर शीघ्रता से चलागया व क्रोध मोह छोड़कर

अपनी माता की रक्षा बड़े यत्न से करनेलगा ६० फिर विवाह करके वंश करनेवाला सुन्दर पुत्र उत्पन्न करके स्त्री के मरजाने पर संन्यासी होकर ढीला पत्थर व सुवर्णको समान समझता हुआ नरसिंहजी के प्रसादसे परमसिद्धि को प्राप्त हुआ ॥ ६१ ॥

चौपैया ॥

यह तुमसनभाना सहित विधाना पतिव्रता की गाथा।
अरु मातारक्षण बहुत विलक्षण धर्म कर्म के साथा॥
जो जननीसेवा तजि सब मेवा करिहै मन तनु वाणी।
सोजगतरुबन्धनकरिकैखण्डन हरिपुरजाइहिप्राणी॥१३॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेब्रह्मचारिपतिव्रतासंवादोनाम त्रयोदशोऽध्यायः॥ १३ ॥

चौदहवां अध्याय॥

दो० चौदहयें महँ एक द्विज, गाथा कही मुनीश।
जो स्त्री मरनेपर सकल, तजि भविस्योलगदीश ॥१४॥

व्यासजी शुक्राचार्यजी से बोले कि [illegible] स व हे हमारे शिष्यो! सब पापों के नष्ट [illegible] उत्तम कथा हम कहते हैं सुनो १ वेदशा[illegible]न विशारद पूर्व समयमें एक श्रेष्ठ ब्राह्मण [illegible] उसकी स्त्री मरगई तो वह विधिपूर्वक स्नान [illegible]ने के लिये तीर्थों को चलागया २ व स्त्री के [illegible] निस्स्पृह होकर निर्जनस्थान में जाकर उसने [illegible]ा तप किया भिक्षा मांग कर तो भोजन करता [illegible] जपस्नानादिकों में परायण रहता ३ फिर क्रम से गङ्गा यमुना सरस्वती

वितस्ता अर्थात् व्यासा व पुण्यगोमतीमें स्नान कर
गयाजी में पहुँचकर पिता पितामहादिकों का तर्पण
करके महेन्द्राचलपर पहुँचा ४ वहां भी कुण्डों में
स्नानकरके उस महामतिवाले ने परशुरामजी को देखा
फिर उसी प्रकार से वहां भी पितरों की तृप्ति करके
चलते २ पापहरनेवाले एक वन में पैठा ५ वहां एक
पर्वत परसे गिरतीहुई बड़ीभारी नदी देखी उसको
भक्ति से शिरपर धारणकिया वह नारसिंह तीर्थथा इस
से जैसेही सब पापनाशनेवाली उस धारा को शिरपर
धारण किया कि उस ब्राह्मण का शरीर शुद्ध तो थाही
अतिशुद्ध होगया ६ यह वन व तीर्थ विन्ध्याचलपर है
उसमें टिके हुये अनन्त अच्युतभक्तों व मुनीन्द्रों से
पूजित की आराधना पर्वतपर उत्पन्न अच्छे २ पुष्पों
से करके सिद्धि की इच्छा करके स्थित हुआ बहुत
कालतक पूजाकरतारहा उसकी पूजासे सन्तुष्ट होकर
नृसिंहजीने स्वप्न में दर्शन देकर कहा ७ कि हे द्विज!
किसी आश्रम में न रहना गृहके भंगकरने का कारण
है इससे तुम उत्तम आश्रम को ग्रहणकरो क्योंकि जो
किसी आश्रम में नहीं होते वे चाहे वेदों के पारगामी
भी हों तो भी हम उनके ऊपर अनुग्रह नहीं करते ८
तथापि यद्यपि तुम किसी आश्रम में आज कल नहीं हो
पर तुम्हारी निष्ठा देखकर तुम्हारे विषयमें प्रसन्न होकर
हमने तुमसे ऐसा कहा है जब उनपरमेश्वर ने ऐसा
कहा तो यह ब्राह्मण उनके वाक्य को अच्छे प्रकार
२ विचारकरके ६ नरसिंहमूर्तिहरि की आज्ञाको अलंघ्य

अनकर विधिपूर्वक संन्यासी होगया त्रिदण्ड को धारण कर कमलाक्ष की माला पहिन कुशकी पवित्री हाथोंमें धारणकर पापहारी तीर्थमें स्नानकरके स्थितहुआ १० व हृदय में हरि को स्मरण करताहुआ सावित्रीजी का दोषरहित मन्त्र जपनेलगा व जिस किसी प्रकार से कुछ शाक भी पाकर उसके भोजन से सन्तुष्ट होकर वन में बसनेलगा ११ व नरसिंहमूर्ति विष्णुजी की पूजाकरके व हृदय में नित्य शुद्धस्वरूप आदि पुरुष का ध्यानकर बड़े कुशासनपर एकान्त में बैठकर हृदय में सबका अभिनिवेश करके १२ सब इन्द्रियों के बाहरी गुणों का भेद भगवान् अनन्त में मिलाकर जानने के योग्य आनन्दस्वरूप अज विशाल सत्यात्मक क्षेम के स्थान वरदेनेवाले १३ परमेश्वर की चिन्तनाकर उसी स्थानपर देह को छोड़कर मुक्त होकर परमात्मा की मूर्तिहोगया मुक्ति देनेवाली इस कथा को जो लोग नरसिंहजी को स्मरण करतेहुये पढ़ते हैं १४ वे लोग प्रयागतीर्थ में स्नानकरने का फल पाकर श्रीहरि के ह[illegible] को प्रा[illegible] बड़े प[illegible]प्त होते हैं ॥ १५ ॥

चौपैया ॥

यह बहुत पुरातन पातकशातन पावनपुण्य चरित्रा।
लखि तव अभिलाषा हमसुतभाषा पूछ्यहु जौन विचित्रा॥
जगवृक्ष विनाशी सबसुखराशी है यह संशय नाहीं।
अबपुनिकाचाहत मनसोंगाहतकहहुजौनचितमाहीं॥१६॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेचतुर्दशोऽध्यायः॥ १४॥

पन्द्रहवां अध्याय ॥

दो० पन्दरहें महँ ज्ञानिनर, जगतरु तरत न आन।
अरु जिमिसोउपजतस्वई, वर्णितसहितविधान ॥ १ ॥

इतनीं कथा सुनकर श्रीशुकदेवजीने प्रश्नकिया कि हे पिताजी! सब मुनियों समेत हम इस समय जिससे संसार वृक्ष उत्पन्न होकर परिवर्तित होता है वह सुना चाहते हैं १ आपने पूर्वकाल में इस संसारवृक्ष को सूचितकिया था इससे आपही इसके कहने के योग्य हैं क्योंकि और कोई संसार के उच्चार का भेद नहीं जानता २ सूतजी भरद्वाजादि मुनियों से बोले कि, शिष्यों के मध्य में बैठे हुये उनके पुत्र शुकदेव जी ने जब ऐसा पूछा तो श्रीव्यासजी संसारवृक्ष का लक्षण कहते हुये बोले ३ कि सब हमारे शिष्यगण सुनें व पुत्र तुमभी सुनो जिससे यहसंसारवृक्ष घिरा हुआहै वह कहते हैं ४ इस संसाररूप वृक्षका मूल अव्यक्तहै फिर आगे उठ कर खड़ा होजाताहै बुद्धि इसका स्कन्ध है इन्द्रियां सब अंकुर व कोटर हैं ५ पृथ्वी, जल, तेज, वायु व आकाश ये पांच महाभूत इसकी शाखा हैं व पत्रभी हैं धर्म व अधर्म ये दोनों पुष्प हैं सुख व दुःख ये दोनों इसके फल हैं ६ यह सनातन ब्रह्म वृक्ष सब प्राणियों की जीविका का स्थान है बस इस ब्रह्मवृक्ष से परे ब्रह्म ही है ७ हे वत्स! इस प्रकार से ब्रह्मवृक्ष का लक्षण हमने कहा इस वृक्ष पर चढ़ेहुये प्राणी मोहित होते हैं ८ जो ब्रह्मज्ञान से पराङ्मुख हैं दुःख सुखयुक्त होकर बहुधा वेही प्राकृती मनुष्य निरन्तर इस वृक्ष को

प्राप्त होते हैं ९ इस वृक्ष को काटकर कुशल ब्रह्मवादी लोग मोक्षपद को प्राप्त होते हैं व पापीलोग कर्म व क्रिया को नहीं काट पाते इससे दुःखित भ्रमण किया करते हैं १० ज्ञानरूपी परमखड्ग से इसको काट व भेदन करके लोग अमरता को प्राप्त होते हैं फिर वहां से कभी नहीं लौटते ११ देह व स्त्रीमय फांसी से बँधा हुआ भी पुरुष छूटजाता है क्योंकि पुरुषों को ज्ञानही सब वाञ्छित देताहै व ज्ञानही नरसिंहजी को संतुष्ट करता है व विना ज्ञान के पुरुष पशु के समान समझाजाता है ॥ १२ ॥

चौपैया ॥

निद्रा आहारा मैथुनचारा अरु भय सबहि समाना।
नर पशु अरु पक्षी निजप्रियभक्षी और न भेदबखाना॥
नरमहँ है ज्ञाना अति अधिकाना पशुसों याहि महाना।
जोज्ञानविहीना पुरुष मलीना पशुसमपरतलखाना॥१॥१३॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेपञ्चदशोऽध्यायः॥ १५॥

सोलहवां अध्याय॥

दो॰ सोलहयें महँ भवतरत, करत जो हरिपदध्यान।
नारद शिवसंवादसों, यह वरण्यो सविधान॥१॥

श्रीशुकदेवजीने प्रश्नकिया कि संसारवृक्ष पर चढ़कर सुख दुःखादि नाना प्रकार के द्वन्द्व दृढ़पाशों से अपने को बँधुआ करके पुत्र ऐश्वर्यादिकों की द्वारा योनि-सागर में गिरायागया जो पुरुष है १ फिर काम क्रोध लोभादि विषयों से पीड़ित होकर पत्र स्त्री इच्छा आदि

अपने गौण कर्मों से भी बँधुआ होता है २ वह किस उपाय से शीघ्रही दुस्तर भवसागर को तरताहै व उसकी मुक्ति कैसे होतीहै हे तात ! हमारे इस प्रश्न का उत्तर बताइये ३ व्यासजी बोले कि, हे वत्स, महाप्राज्ञ ! सुनो जो जानकर पुरुष मुक्ति पाताहै वह दिव्य उपाय तुमसे कहेंगे हमने पूर्वकालमें नारदजी से सुनाथा ४ यमलोक में घोर रौरव नरक में धर्म व ज्ञान से रहित पुरुषों को पड़ेहुये अपने कर्मोंसे महा दुःख पातेहुये देखकर ५ व पापीजन महाघोर पाप करने से घोर नरक में पड़ते हैं यह देखकर नारद जी जहां महादेवजी रहते हैं वहां गये ६ व गङ्गाधर महादेव शंकर शूलपाणि के विधिपूर्वक प्रणाम करके पूछनेलगे ७ नारदमुनि बोले कि, संसारमें जो पुरुष शुभ अशुभ कामभोग सुख दुःखादि महाद्वन्द्वों से व शब्दस्पर्शादि विषयों से व काम क्रोध लोभादि ६ ऊर्मियों से युक्त होकर पीड़ित होता है ८ वह मृत्युरूप संसारसागर से कैसे छूटे हे भगवन्, शंकर ! इसका निश्चय हमसे कहो हमारे श्रवणकरने की इच्छा है ९ नारदजी का ऐसा वचन सुनकर त्रिलोचन शम्भु हर प्रसन्नमुख होकर उन ऋषि से बोले १० महेश्वरजी कहनेलगे कि, हे ऋषिसत्तम ! अतिगुप्त एकान्त में कहने के योग्य अमृतरूप ज्ञान कहेंगे सुनो वह दुःखों को नाशता है व सब बन्धनों के भयों को भी नाशता है ११ तृणादि चतुर पर्यन्त चार प्रकार को चराचर सब जगत् जिसकी माया से सदा सोया करता है १२

सो उन्हीं विष्णुजी के प्रसाद से यदि कोई जागता है वह संसारको तरताहै नहीं तो वह तो देवताओं करके भी बड़े दुःख से तरने के योग्य है १३ जो पुरुष भोग ऐश्वर्यादिकों के मद से उन्मत्त होकर तत्त्वज्ञान से वि-मुख होजाता है वह संसारसागर के महाकीचड़ में बूढ़ा गऊके समान फँसताहै १४ जो कर्मोंसे कुशवारीके कीड़े के समान अपने को अच्छीतरह बांधता है उसकी मुक्ति सैकड़ों कोटियों जन्मोंसे भी हम नहीं देखते १५ इससे हे नारद ! सब के ईश देवताओं के भी देव नाशरहित श्रीविष्णुजी की आराधना एकाग्रचित्त होकर करे व उन्हींका अच्छे प्रकार ध्यानकरे १६ क्योंकि जो कोई विश्वरूपी आदि अन्तरहित सबके आदिभूत अपनी आत्मा में टिकेहुये सब कुछ जाननेवाले अमल स्वरूप श्रीविष्णु का ध्यानकरता है वह विमुक्त होजाता है १७ निर्विकल्प निराकाश निष्प्रपञ्च निरामय वासुदेव अज विष्णुजी का ध्यान करताहुआ पुरुष विमुक्त होता है १८ निरञ्जन सब से पर शान्तस्वभाव अच्युत भूत-भावन देवगर्भ व्यापक श्रीविष्णुका सदा ध्यान करता हुआ विमुक्त होता है १९ सब पापों से विनिर्मुक्त अप्र-मेय लक्षणरहित निर्वाण अनघ श्रीविष्णुजी का सदा ध्यानकरने से विमुक्त होता है २० अमृत परमानन्द रूप सर्वपापविवर्जित ब्रह्मण्य कल्याण करनेवाले श्री विष्णु का सदा कीर्तन करके विमुक्त होता है २१ योगे-श्वर पुराणपुरुष शरीररहित गुहानिवासी अमात्र व अव्यय विष्णु का ध्यान सदा करता हुआ विमुक्त होता

है २२ शुभ अशुभ से विनिर्मुक्त छमूर्तियों से पर व्यापक विनय करनेके योग्य व अमल विष्णुजी का जो सदा ध्यानकरता है वह विमुक्त होताहै २३ सब सुख दुःखादि द्वन्द्वों से विनिर्मुक्त सब दुःखों से विवर्जित तर्कणाकरने के अयोग्य व अज श्रीविष्णु को जो मन से ध्यानकरता है वह विमुक्त होता है २४ नामगोत्ररहित अद्वैत चतुर्थ परमपद व सबके हृदय में वर्तमान श्रीविष्णु का जो कोई सदा ध्यानकरता है वह विमुक्त होता है २५ अरूप सत्यसंकल्प शुद्धस्वरूप आकाश के समान सब से पर व सर्वत्र व्याप्त श्रीविष्णु भगवान् को एकाग्रमन से सदा ध्यान करताहुआ पुरुष मुक्त होजाता है २६ सर्वात्मक स्वभाव में स्थित आत्म चैतन्यरूप शुभ्र व एकाक्षर श्रीविष्णुजी का सदा ध्यान करताहुआ विमुक्त होता है २७ अनिर्वाच्य अविज्ञेय अक्षरादि असम्भव एक नूतन श्रीविष्णु का ध्यान सदा करताहुआ विमुक्त होता है २८ विश्व के आदि विश्व के रक्षक विश्व के नाशक सबकामदेनेवाले व भूत वर्तमान भविष्य तीनों कालों में विद्यमान श्रीविष्णुजी का सदा ध्यानकरता हुआ विमुक्त होता है २९ सब दुःखों के नाशक सब शान्तियों के कारक हरि को आनन्द में मग्न होकर पुरुष कीर्तन करनेही से विमुक्त होता है ३० ब्रह्मादि देवताओं गन्धर्वों मुनियों सिद्धों चारणों व योगियों से सेवित श्रीविष्णु का ध्यान करताहुआ पुरुष विमुक्त होता है ३१ यह विश्व विष्णु में स्थित है व विष्णु विश्व में टिके हैं व विश्व के ईश्वर अज श्रीविष्णुजी के कीर्तन

मात्र से विमुक्त होता है ३२ संसार बन्धन से मुक्तिकी इच्छा किये हुआ पुरुष सम्पूर्ण काम करनेवाला भक्ति ही से वरदान करनेवाले विष्णु का ध्यान करता हुआ विमुक्त होताहै ३३ व्यासजी बोले कि पूर्वकाल में जब नारदजीने ऐसा पूछा तो महादेवजी ने जो कुछ उनसे कहा वह हमने तुमसे कहा ३४ सो हे तात! तुमभी निर्बीज केवल ब्रह्म उन्हीं विष्णुजी का, ध्यान करो निरन्तर नाशरहित ध्रुवपद पाओगे ३५ महादेवजी के कहने से नारदजीने श्रीविष्णु भगवान् की प्रधानता सुनकर व अच्छे प्रकार विष्णुजी की आराधना करके परमसिद्धि पाई ॥ ३६ ॥

चौपाई ॥

नरहरिसहँ करिमानस जोई। जो यह चरित पढ़िहि नर कोई॥
शतजनिकृत ताके सब पापा। नष्टहोहिं नहिंमृषा अलापा ॥३७
महादेव कीर्तित हरिकेरो। यह पुण्यस्तव निजहिय हेरो ॥
[illegible] नित्य जो पढ़ई। अमृतरूप ह्वै सो नरतरई॥३८॥

हरिगीतिका ॥

अच्युत अनन्त अनादि हरिकहँ हृदयमहँ जे ध्यावहीं।
अरु करहिं कीर्तन नित्य चितधै परमपद ते पावहीं ॥
पुनि प्रभु उपासक जननके ढिग जाय सुख भोगैं महा।
अरु वैष्णवीवरसिद्धि लहिहैं यह सकल श्रुतिहू कहा ॥३९॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेषोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

सत्रहवां अध्याय ॥

दो॰ सत्रहयें अध्याय महँ, अष्टाक्षर माहात्म।

कथहु व्यास शुकसों वहुत, विधिनिर्णय करि आम ॥ १ ॥

यह श्रवणकरके श्रीशुकदेवजी ने व्यासजी से प्रश्न किया कि हे तात ! विष्णुजी में निरन्तर तत्पर होकर क्या जपने से संसार के दुःख से छूटता है यह सबोंके हित के लिये हम से कहिये हे पिताजी ! १ व्यासजी बोले कि, हम सब मन्त्रों में उत्तम अष्टाक्षर मन्त्र कहते हैं जिसको जपता हुआ पुरुष जन्म संसार बन्धन से छूटता है २ कमलरूप मन में स्थित शंख, चक्र, गदा धारणकिये हुये श्रीविष्णु का ध्यान एकाग्रमन से करके फिर मन्त्रका जप ब्राह्मण करे ३ एकान्त निर्जनस्थान में विष्णु के आगे वा जल के समीप चित्त में श्रीविष्णु जी को स्थापित करके अष्टाक्षर मन्त्रजपे ४ इस अष्टाक्षरमन्त्रके नारायण आप तो ऋषि हैं व गायत्री छन्द है तथा परमात्मा देवता हैं ५ उन आठ अक्षरों में प्रथम ॐकार है उसका शुक्लवर्ण है दूसरे नकार का रक्तवर्ण तीसरे मोकार का कृष्णवर्ण व चौथे नाकार का भी रक्तवर्ण है ६ पांचवें राकारका कुंकुम के समान वर्ण है छठें यकार का पीतवर्ण है व सातवें णाकार का अञ्जन के तुल्य वर्ण है व आठवें यकार का बहुत प्रकार का वर्ण है ७ "ॐ नमो नारायणाय" यही सब अर्थों के सिद्धकरनेवाला अष्टाक्षरमन्त्र है जोकि जपतेहुये भक्तोंको स्वर्ग व मोक्ष का फल देताहै व वेदोंकी याज्ञा से यह सनातनमन्त्र सदा सिद्धही रहताहै ८ तथा सब पापों को हरता व सब मन्त्रों में उत्तम श्रीमान् यह मन्त्र है इस अष्टाक्षर मन्त्र को जपता हुआ पुरुष

नारायणजी का स्मरणकरता है ९ व जो इसे सन्ध्या के अन्तमें जपता है वह सब पापों से छूटजाता है यही परममन्त्रहै व यही परमतप है १० यही परममोक्ष है यही स्वर्ग कहाजाता है यह मन्त्र सब वेदों के रहस्यों से निकालागया है ११ सोभी विष्णु भगवान् ने सब वैष्णव मनुष्यों के हित के लिये पूर्वसमय में निकाला है और किसी ने नहीं ऐसा जानकर ब्राह्मण को चाहिये कि अवश्य अष्टाक्षरमन्त्र का स्मरणकरे १२ व पाप शोधने के लिये स्नानकरके शुद्ध होले तब इस मंत्र को पवित्र स्थान में जपे जप दान होम व यात्रा व ध्यानों के पर्वोंमें जपनाचाहिये १३ इस नारायणजी के मन्त्र को सब कर्मों के पूर्व में व अन्तमेंभी जपनाचाहिये व एकाग्रचित्त होकर सहस्र वा लक्ष नित्यजपे १४ व जो विष्णुभक्त ब्राह्मणोत्तम प्रत्येकमास की द्वादशीमें स्नान करके शुद्ध होकर "ॐ नमो नारायणाय" इस मन्त्रको सौ बार जपता है १५ वह रोगरहित परमदेव नारायण को प्राप्त होता है व जो गन्ध पुष्पादिकों से नारायण की आराधना करके जपे १६ वह ब्रह्महत्यादि महा पापों से युक्तभी हो तो भी छूटजाय इस में कुछ संशय नहीं है व जो हरि को हृदय में करके इस मन्त्र को जपे १७ वह सब पापों से विशुद्धात्मा होकर परमगति को जाय एकलाख जपनेसे आत्मा की शुद्धि होगी १८ व दूसरे लक्ष के जपने से मन्त्र की शुद्धि होगी व तीसरे लक्षके जपने से स्वर्गलोक पावेगा १९ चौथे लक्ष के जाप से हरि के समीप बसे पांचवें लक्ष के जपने से

निर्मल ज्ञान पावे २० व छठ लक्ष के जपने से विष्णु में स्थिरमति होवे सातवें लक्ष के जपतेही स्वरूपज्ञान पावे २१ व आठवें लक्ष के जपने से मोक्षपद को प्राप्त हो अपने २ धर्म में युक्त होकर ब्राह्मणोत्तम इस मन्त्र को जपे २२ यह अष्टाक्षरमन्त्र सब सिद्धियों को देता है और दुःस्वप्न आतुर पिशाच सर्प ब्रह्मराक्षस २३ चोर नीच व नाना प्रकार की मनकी व्यथा मन्त्र जपने वाले के निकट नहीं आतीं व एकाग्र मन से स्वस्थ चित्त करके विष्णु का भक्त दृढ़व्रत होकर २४ मृत्यु भय नाशनेवाले इस नारायणजी के मन्त्र को जपै क्योंकि यह मन्त्रोंका परममन्त्र है व देवताओं का परमदेव है २५ सब गुप्त पदार्थों में परमगुप्त है इस मन्त्रमें ॐकारादि अक्षर हैं व आयुर्दाय धन पुत्र पशु विद्या महायश २६ धर्म अर्थ काम व मोक्ष जपकरनेवाला मनुष्य पाता है वेद की श्रुतियों के उदाहरण से यह सत्य व नित्य है २७ यह मन्त्र मनुष्यों को सिद्धिकरनेवाला है इसमें संशय नहीं है ऋषि, पितर, देवता, सिद्ध, असुर व राक्षस २८ इसी परममन्त्र को जपकर सिद्धि को प्राप्त हुये हैं व जो कोई ज्योतिष आदि शास्त्रों के द्वारा अपनाकाल जानकर विधान से अन्तकाल में जपता है वह विष्णुजी के परमपद को जाता है २९ "नारायणाय नमः" यह मन्त्र संसार घोरविष हरने के लिये परम मन्त्र है हे भव्यमतिवाले, रागरहित, पुरुषो! सुनो हम ऊपर को बाहु उठाकर कहते हैं ३०। ३१ हे पुत्र! व हे शिष्यो! ऊपर को बाहु उठाकर आज हम सत्य

कहते हैं कि अष्टाक्षर मन्त्र से पर कोई मन्त्र नहीं है ३२ सत्य २ फिर सत्य भुजा उठाकर कहते हैं कि वेद से कोई शास्त्र पर नहीं है व न केशव से पर कोई देव है ३३ हम सब शास्त्रों को देखकर व बार २ विचारकरके कहते हैं कि नारायणदेव ध्यानकरने के योग्य हैं ३४ शिष्यों से व तुमसे यह सबमन्त्र का विधान व विविध प्रकार की कथा हमने कही अब जनार्दन भगवान् का भजनकरो ॥ ३५ ॥

चौपाई ॥

यह अष्टाक्षरमन्त्र पुनीता। सर्वदुःख नाशन हरि मीता ॥
जपहु याहि सुत जो मनमाहीं। चहत सिद्धि पूरी इकठाहीं॥३६
व्यासभणितयहस्तवन पुनीता। जे सन्ध्यात्रयमहँ जन नीता ॥
पढ़िहैं ते सित हंस समाना। है तरिहैं संसारमहाना ॥२।३७॥

इति श्रीनरसिंहपुराणे भाषानुवादे सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥

अठारहवां अध्याय ॥

दो० अठरहें अध्याय महँ, सुरअश्विनीकुमार।
जन्मकथाअरु यमयमी, कथासहितविस्तार॥ १ ॥

सूतजी भरद्वाजादिमुनियों से बोले कि, सबपापों के नाशनेवाली व पुण्यरूपिणी कथा व्यासजी के मुख से सुनकर नाना प्रकार के मुनिलोग व महाभाग्यवाले महामति शुक्राचार्य व और ऋषिलोग भी नारायण में तत्परहुये हे भरद्वाजजी ! १ । २ इस तरहसे विचित्र व पापनाशनेवाली मार्कण्डेयादिकों की कथा हमने तुमसे कही अब फिर और क्या सुनाचाहते हो ? भग-

ह्माजजी ने पूछा कि बस्वादिकों की व हमारी सृष्टि तो आपने कही परन्तु अश्विनीकुमार व पवनों की उत्पत्ति नहीं कही इससे अब वह कहो ४ सूतजी बोले कि पूर्व समय में पवन व पराशरमुनि ने विष्णुपुराण में पवनों का जन्म विस्तारपूर्वक कहा है ५ व अश्विनीकुमार नाम दोनों देवताओंकी भी उत्पत्ति कहीहै परन्तु अब इनकी सृष्टि संक्षेपरीति से कहते हैं हमसे सुनो ६ दक्ष की सबसे बड़ी कन्या का अदिति नाम था उसमें कश्यपऋषि से आदित्यनाम पुत्र हुये उनको त्वष्टा ने अपनी संज्ञानाम कन्या स्त्री बनाने को दी ७ उन्होंने मनोज्ञ व रूपवती उस त्वष्टा की कन्या संज्ञा के संग कुछ कालतक भोगविलास किया परन्तु वह सूर्य का ताप न सहसकी इससे अपने पिता के यहां चली गई ८ उस कन्या को [illegible] उससे बोला कि हे पुत्रि ! तुम्हारे पति सूर्य स्नेह से तुम्हारी रक्षाकरते हैं वा कठोरता से करते हैं ९ पिता का वचन सुनकर संज्ञा उनसे बोली कि पति के प्रचण्ड तापसे हम जल गईं १० ऐसा सुनकर पिता ने उससे कहा हे पुत्रि ! अभी भर्ता के गृह को जा ११ क्योंकि युवती स्त्रियों का पति की शुश्रूषा करनाही कल्याणदायक धर्म है हम भी कुछ दिनों में वहां आकर अपने जामाता सूर्यकी उष्णता कमकरदेंगे १२ यह सुनकर संज्ञा फिर पति के गृह में पहुँचकर कुछ दिनों में श्राद्धदेव वैवस्वतमनु यम व यमी तीनसन्तान उसने सूर्यसे उत्पन्नकिये फिर पति की उष्णता बहुत दिनोंतक न सहसकी इससे

अपनी बुद्धि के बल से अपनी छाया से छायानाम स्त्री पति के भोगकरनेके लिये उत्पन्नकरके वहां स्थापितकर उत्तर कुरु देशों में जाकर आप घोड़ी का स्वरूप धारण करके विचरनेलगी १३ सूर्य ने भी उसे संज्ञाही मानकर उस स्त्री में फिर तीन सन्तान उत्पन्न किये १४ मनु शनैश्चर दो पुत्र व तपतीनाम कन्या छाया को अपने सन्तानों में अधिक स्नेह देखकर यमराज ने अपने पिता से कहा कि यह हमारी माता नहीं है १५ पिता ने भी यह सुनकर भार्या से कहा कि सब सन्तानों में समता रक्खो १६ फिर भी अपने पुत्रादिकों में अधिक स्नेहकरती हुई छाया को देखकर यम व यमी ने उससे बहुत प्रकार से समझाकर कहा पर फिर भी सूर्य के निकट होनेसे दोनों चुप होरहे १७ तब छाया ने यम यमी को शाप दिया कि यम तुम प्रेतों के राजा होओ व यमी तुम यमुनानाम नदी होओ १८ तब क्रोधसे सूर्यजीने भी छायाके पुत्रों को शाप दिया कि हे पुत्र, शनैश्चर! तुम ग्रह होओ उसमें भी क्रूर दृष्टिवाले व मन्दगामी फिर पापग्रह १९ व हे पुत्रि! तू तपतीनाम नदी हो ऐसा शाप देकर सूर्यजीने ध्यान में टिककर विचार किया कि संज्ञा इस समय कहां स्थित है २० ध्यानदृष्टि से उत्तर कुरुदेशों में घोड़ी होकर विचरतीहुई संज्ञा को देखकर आपने भी अश्व का रूप धारणकर वहां जाय उसके संग मिलापकिया २१ उस घोड़ी के रूप में टिकीहुई संज्ञा में से अश्वरूप सूर्य से अश्विनीकुमार नाम दो देव उत्पन्न हुये व अतिशय शरीरवाले उन

दोनों को साक्षात् प्रजापतिजी वहां आकर देवत्व यज्ञ-भागत्व व देवताओं की वैद्यत्व देकर चलेगये सूर्यजी भी घोड़े का रूप छोड़ व अपनी संज्ञा स्त्री को भी पूर्व-वत् रूपवती करके संग लेकर स्वर्ग को चलेगये २२ तब विश्वकर्माने वहां आकर उनके नामों से सूर्यकी स्तुतिकरके उनकी उष्णता के अंश बहुतसे सूक्ष्म करडाले ॥ २३ ॥

चौपाई ॥

इमि उत्तम नासत्यक केरी। विप्र कहा उत्पत्ति सुहेरी ॥
पुण्यपवित्रपापकीनाशिनि।भरद्वाजमुनिमुदितहोहुगुनि १।२४
सूर्यतनय अश्विनीकुमारा। देववैद्यवर रूप अपारा ॥
तिनकरजन्मपुरुपक्षितिमाहीं। मुनिसुरूपदिविगमुदितजाहीं ॥२।२५॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेअश्विनीकुमारोत्पत्तिर्नामा-ष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥

उन्नीसवां अध्याय ॥

दो० उन्निसयें अध्यायमहँ, अष्टोत्तर शतनाम।
विश्वकर्म भाषित कहे, रविके बहुत ललाम ॥ १ ॥

भरद्वाजजी ने सूतजी से प्रश्न किया कि विश्वकर्मा ने जिन नामों से सूर्यजी की स्तुति की थी सूर्य के उन नामों के सुनने की हमारी इच्छा है हे सूत ! कहिये १ सूतजी बोले कि विश्वकर्मा ने जिन नामों से सूर्य जी की स्तुति की है सब पाप हरने के योग्य वे नाम हमसे सुनो कहतेहैं २ आदित्य १ सविता २ सूर्य ३ खग ४ पूषा ५ गभस्तिमान् ६ तिमिरोन्मथन ७ शम्भु ८ त्वष्टा ९ मार्तण्ड १० आशुग ११। ३

हिरण्यगर्भ १२ कपिल १३ तपन १४ भास्कर १५ रवि १६ अग्निगर्भ १७ अदिति पुत्र १८ शम्भु १९ तिमिरनाशन २०।४ अंशुमान् २१ अंशुमाली २२ तमोघ्न २३ तेजोनिधि २४ आतापी २५ मण्डली २६ मृत्यु २७ कपिल २८ सर्वतापन २९।५ हरि ३० विश्व ३१ महातेजाः ३२ सर्वरत्नप्रभाकर ३३ अंशुमाली ३४ तिमिरहा ३५ ऋग्यजुस्सामभावित ३६।६ प्राणाविष्करण ३७ मित्र ३८ सुप्रदीप ३९ मनोजव ४० यज्ञेश ४१ गोपति ४२ श्रीमान् ४३ भूतज्ञ ४४ क्लेशनाशन ४५।७ अमित्रहा ४६ शिव ४७ हंस ४८ नायक ४९ प्रियदर्शन ५० शुद्ध ५१ विरोचन ५२ केशी ५३ सहस्रांशु ५४ प्रतर्दन ५५।८ धर्मरश्मि ५६ पतङ्ग ५७ विशाल ५८ विश्वसंस्तुत ५९ दुर्विज्ञेयगति ६० सूर ६१ तेजोराशि ६२ महायशाः ६३।९ भ्राजिष्णु ६४ ज्योतिषामीश ६५ विजिष्णु ६६ विश्वभावन ६७ प्रभविष्णु ६८ प्रकाशात्मा ६९ ज्ञानराशि ७० प्रभाकर ७१।१० आदित्य ७२ विश्वदृक् ७३ यज्ञकर्ता ७४ नेता ७५ यशस्कर ७६ विमल ७७ वीर्यवान् ७८ ईश ७९ योगज्ञ ८० योगभावन ८१।११ अमृतात्मा ८२ शिव ८३ नित्य ८४ वरेण्य ८५ वरद ८६ प्रभु ८७ धनद ८८ प्राणद ८९ श्रेष्ठ ९० कामद ९१ कामरूपधृक् ९२।१२ तरणि ९३ शाश्वत ९४ शास्ता ९५ शास्त्रज्ञ ९६ तपन ९७ शय ९८ वेदगर्भ ९९ विभु १०० वीर १०१ शान्त १०२ सावित्रिवल्लभ १०३।१३ ध्येय १०४ विश्वेश्वर १०५ भर्ता १०६

लोकनाथ १०७ महेश्वर १०८ महेन्द्र १०९ वरुण ११० धाता १११ विष्णु ११२ अग्नि ११३ दिवाकर ११४। १४ इनमें शम्भु, कपिल, अंशुमाली, आदित्य, शिव, तपन ये ६ नाम दुबारा आये हैं इससे उनके निकालने से १०८ रहते हैं इन नामों से विश्वकर्माने सूर्य की स्तुति की तब प्रसन्न होकर भगवान् रवि विश्वकर्मा से बोले १५ कि यन्त्र पर चढ़ाकर हमारे मण्डलको सूक्ष्म करदो तुम्हारी बुद्धि में यही विचारहै हमने जानलिया है ऐसा करने से हमारी उष्णता शान्त होजायगी जब सूर्यजी ने ऐसा कहा तो हे द्विज! विश्वकर्मा ने वैसाही किया १६ फिर विश्वकर्मा की कन्या संज्ञा के ऊपर सूर्य की उष्णता शान्त होगई व रविजी फिर विश्वकर्मा से बोले १७ कि तुमने जिससे कि अष्टोत्तरशत नामों से हमारी स्तुति की है इससे वर मांगो क्योंकि हे पापरहित! हम तुम को वरदिया चाहते हैं १८ जब भानुजी ने ऐसा कहा तो विश्वकर्मा उनसे यह बोले कि हे देव! यदि आप हमको वर दिया चाहते हैं तो एक यह वरदें १९ कि इननामों से जो मनुष्य नित्य तुम्हारी स्तुतिकरे हे भास्करदेव! उसके पापों का क्षय आप करें २० ॥

चौपैया ॥

त्वष्टाकी बानी बहु गुणसानी सुनि सविता यह बोले।
जो तुम वरमांगा करि अनुरागा होइहि सोयसतोले ॥
इमि संज्ञा काहीं करि रवि पाहीं त्वष्टा गे निजलोका।

संज्ञाअरुभानूगतनिजयानू विहरनलगेविशोका १। २१

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेसूर्याष्टोत्तरशतनाम
कथनन्नामैकोनविंशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

बीसवां अध्याय ॥

दो० कह बिसयें अध्याय महँ, पवन जन्म की गाथ ।
विधिपूर्वक बहु युक्ति सों, ज्यहिसों इन्द्र सनाथ ॥ १ ॥

सूतजी भरद्वाजादि मुनियों से बोले कि, हे द्विज-सत्तम ! अब पवनों की उत्पत्ति कहते हैं पूर्वकाल में जब देवासुरसंग्राम हुआ था तो दिति के पुत्र दैत्य लोग इन्द्रादि देवताओं से तिरस्कृत होगये थे इससे विनष्टपुत्रा होकर दिति इन्द्र को मारनेवाले पुत्र की इच्छा से अपने पति कश्यपमुनि की आराधना करने लगीं १ । २ तपस्या से सन्तुष्ट होकर कश्यपजी ने दिति में गर्भाधान किया व फिर उनसे यह कहा कि ३ यदि तुम पवित्र रहकर सौ वर्षतक इस गर्भ को धारण करोगी तो इन्द्र के अहंकार का नाशक तुम्हारे पुत्र होगा उन्होंने ऐसाही करेंगी यह कहकर गर्भ को धारण किया ४ इन्द्र भी इस व्यवस्थाको जानकर वृद्धब्राह्मण का स्वरूप धारण करके दिति के निकट आकर स्थित हुये जब सौ वर्ष में कुछ न्यूनरहा तब दिति एक दिन विना पाद धोये शय्या पर जाकर शयन कररहीं ५ इन्द्रने भी अवसर पाकर वज्र हाथ में लिये हुये दिति के पेट में पैठकर वज्र से उस गर्भ के सातखण्ड कर डाले उनके काटने पर वे सातोखण्ड फिर रोदन करने

लगे ६ न रोदनकरो ऐसा कहकर इन्द्र ने उन सातों के सात २ और खण्ड करडाले ७ व फिर उन उञ्चास पवनों से इन्द्र ने कहा अब न रोदन करो बस वे सब चुप होकर इन्द्र के सहायक पवनदेव होगये॥ ८॥

हरिगीतिका॥

सुर असुर नर राक्षस उरग अरु स्वर्ग आदिक की कही।
इमि सृष्टि करि वरदृष्टि तुमसन जो सकल विधिसों सही॥
यहि पढ़त सुनतरु गुनत जो नर भक्ति सों वह पावई।
हरिलोकगत सवशोक पुनि तहँ रहै यहँ नहिं आवई॥१६॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेविंशोऽध्यायः॥ २०॥

सृष्टिकाण्डंसमाप्तम्॥

इक्कीसवां अध्याय॥

दो० इक्किसयें महँ वंश म, न्वन्तर कर विस्तार।
पुनि वंशानुचरित्र कर, कथा प्रसंग विचार॥ १॥

इतनी कथा सुनकर भरद्वाजमुनि ने सूतजी से कहा कि सर्ग व अनुसर्ग व उन दोनों के बीच २ में विचित्र कथा तुमने वर्णन किया अब वंश मन्वन्तर व वंशानुचरित हम से कहिये १ सूतजी बोले कि राजाओं का वंश बड़े २ पुराणों में विस्तार सहित कहागया है परन्तु हम इस छोटे से उपपुराण में वंश व मन्वन्तर संक्षेप रीति से कहेंगे २ व वंशानुचरित भी संक्षेपही से कहेंगे हे महामतिवाले, विप्र! सुनो व जो सुनने के लिये यहां आकर स्थित हुये हैं वे मुनिलोग भी सुनें ३ सृष्टिकी आदि में ब्रह्माजी हुये ब्रह्मा से मरीचि मरीचि से कश्यप

व कश्यप से सूर्य उत्पन्न हुये ४ सूर्य से मनु मनु से इक्ष्वाकु इक्ष्वाकु से विकुक्षि विकुक्षि से द्योत द्योत से वेन वेन से पृथु पृथु से पृथाश्व हुये ५ पृथाश्व से असंख्याताश्व व असंख्याताश्व से मान्धाता हुये ६ मान्धाता से पुरुकुत्स पुरुकुत्स से दृषद दृषद से अभिशम्भु ७ अभिशम्भु से दारुण दारुण से सगर ८ सगर से हर्यश्व हर्यश्व से हारीत ९ हारीत से रोहिताश्व रोहिताश्व से अंशुमान् अंशुमान् से भगीरथ १० भगीरथ से सौदास सौदास से शत्रुन्दम ११ शत्रुन्दम से अनरण्य अनरण्य से दीर्घबाहु व दीर्घबाहु से अज १२ अज से दशरथ दशरथ से श्रीरामचन्द्रजी १३ श्रीरामचन्द्र से लव लव से पद्म पद्म से अनुपर्ण अनुपर्ण से वस्त्रपाणि १४ वस्त्रपाणि से शुद्धोदन शुद्धोदन से बुध बस बुद्ध से सूर्यवंश निवृत्त हुआ १५ ये सूर्य्यवंशमें उत्पन्न राजा प्रधान २ हमने कहे हैं इन महाराजोंने इस पृथ्वी का भोग धर्म से किया है॥ १६॥

चौपैया॥

यह सूरजकेरो वंश घनेरो हम मुनि तुम सन गावा।
जहँ बहुत महीपति भे अतिवरमति अरुसब महानुभावा॥
अब सुनु शशिकेरो वंशसुटेरो जहँ भे भूप महाना।
करिनिजमनसुस्थिरयहकुलपुष्टिरजियसोंकरहुप्रमाना॥१७॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेएकविंशोऽध्यायः॥ २१॥

बाईसवां अध्याय॥

दो० बाइसयें महँ सोमकर, वंश कह्यो मुनि सूत।

जासु सुने नर होत हैं, कृष्ण भजन मजबूत॥ १॥

सूतजी भरद्वाजादिकों से बोले कि हे भरद्वाज, महामुने! सोमवंश सुनो यह पुराणों में बड़े विस्तार से वर्णित है पर हम इस समय संक्षेप से कहते हैं १ प्रथम ब्रह्मा हुये ब्रह्मा से मानसी मरीचिनाम पुत्र हुये मरीचि से कर्दम प्रजापति की कन्यामें कश्यप हुये २ कश्यप से अदितिनाम स्त्री में आदित्य हुये आदित्य से सुवर्च्चलानाम स्त्री में मनु हुये ३ मनु से सुरूपा में सोम सोमसे रोहिणीमें बुध बुधसे इलामें पुरूरवाः ४ पुरूरवा से आयु आयुसे रूपवती में नहुष ५ नहुष से पितृमती में ययाति ययाति से शर्मिष्ठामें पूरु ६ पूरु से वशदा में सम्पाति सम्पाति से भानुदत्ता में सार्वभौम सार्वभौम से वैदेही में भोज ७ भोजसे लिंगामें दुष्यन्त दुष्यन्त से शकुन्तला में भरत हुये ८ भरत से नन्दा में अजमीढ अजमीढ से सुदेवीमें पृश्नि पृश्नि से उग्रसेना में प्रसर प्रसर से बहुरूपा में शान्तनु शान्तनु से योजनगन्धामें विचित्रवीर्य विचित्रवीर्यके अम्बिका में पाण्डु ९ पाण्डुसे कुन्तीदेवी में अर्जुन अर्जुन से सुभद्रा में अभिमन्यु १० अभिमन्यु से उत्तरा में परीक्षित परीक्षित के मातृमती से जनमेजय जनमेजय के पुण्यवती में शतानीक ११ शतानीक से पुष्पवती में सहस्रानीक सहस्रानीक से मृगवती में उदयन उदयन से वासवदत्तामें नरवाहन १२ नरवाहन से अश्वमेधा में क्षेमकनाम पुत्रहुआ बस क्षेमकसे पाण्डवोंका व सोमका वंश निवृत्त हुआ॥ १३॥

चौपाई ॥

राजवंश उत्तम यह जोई । नित्य सुनत शुभ पावत सोई ॥
सर्वपाप छूटत सो प्रानी । हरिगति पावत निजमनमानी॥१४
जोयहि नित्यपढ़तजनकोई । पितहि श्राद्धमहँ सुनवत सोई ॥
जोकुलपितरनदेत दिलावत । अक्षयहोतसकलमनभावत २।१५
सोमवंशिवर भूपन्न केरी । वंशकीर्ति वर्णी हिय हेरी ॥
सुनतहि पाप नशावनहारी । मन्वन्तरसुनुदश अरुचारी ३।१६॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादे सोमवंशानुकीर्तनन्नाम द्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥

तेईसवां अध्याय ॥

दो० तेइसयें महँ चारिदश, मन्वन्तर की गाथ ।
मनुमनुसुत ऋषिसुरसुरप, सकल कहे इकसाथ ॥ १ ॥

सबसे प्रथम स्वायम्भुव मन्वन्तर है उसका स्वरूप कहचुके हैं फिर सृष्टिकी आदि में दूसरा स्वारोचिष नाम मनु हुआ १ उस स्वारोचिष नाम मन्वन्तरमें विपश्चिन्नाम तो इन्द्र हुये पारावतसंज्ञक तुषित देवता हुये २ ऊर्जस्तम्ब, सुप्राण, दन्त, निऋषभ, वरीयान्, ईश्वर व सोम ये सात ऋषि हुये किम्पुरुषादि स्वारोचिषमनु के पुत्र राजा हुये ३ तीसरे मनु का उत्तमनाम था सुधामा, सत्य, शिव ४ प्रतर्दन, वंशवर्ती ये पांच अपने द्वादश २ गणों सहित देव थे उनदेवताओं के इन्द्र का उस मनु में सुशान्ति नाम था ५ वैद्य उसमें सप्तर्षि हुयेथे उसमें परशुचित्रादि मनुके पुत्र हुये ६ चौथा तामसनाम मनु हुआ उस मन्वन्तर में पर,

सत्य, सुधी आदि २७ गणदेवता हुये ७ व भुशुण्डी नाम इन्द्र थे हिरण्यरोमा, देवश्री, ऊर्ध्वबाहु, देवबाहु, सुधामा, पर्जन्य व मुनि ये सप्तर्षि थे ८ ज्योतिर्धामा, पृथु, काश्य, अग्नि व धनक ये तामस मनुके पुत्र राजा हुये ९ पांचवां रैवतनाम मनुहुआ उसमें अमित, निरत, वैकुण्ठ, सुमेधा आदि चौदह गणदेवता हुये सुरान्तक इन्द्र का नाम हुआ सप्तकादिक मनुके पुत्र राजा हुये १० शान्त, शान्तनव, विद्वान्, तपस्वी, मेधावी, सुतपा ये सप्तर्षि हुये ११ छठां चाक्षुषनाम मनु हुआ पुरु, शतद्युम्न आदि उसके पुत्र राजा हुये सुशान्त, आद्य, प्रसूत, भव्य, प्रथित, महानुभाव, लेखाद्य ये पांच अपने आठ२ गणों सहित वहां देव थे १२ इन देवताओं के इन्द्र का मनोजव नाम था व मेधा, सुमेधा, विरजा, हविष्मान्, उत्तम, मतिमान्, सहिष्णु ये सप्तर्षि थे १३ इससमय सातवां वैवस्वतनाम मनु विद्यमान है इसके इक्ष्वाकु आदि क्षत्रिय पुत्र हुये १४ वे सब राजा हुये आदित्य, विश्वेदेव, वसु, रुद्रादिक देवगण हुये इस मन्वन्तर में पुरन्दरनाम इन्द्र हैं १५ वसिष्ठ, कश्यप, अत्रि, जमदग्नि, गौतम, विश्वामित्र व भरद्वाज ये सप्तर्षि हैं १६ अब इसके आगे जो सात मन्वन्तर होनेवाले हैं उन्हें कहते हैं जैसा कि आदित्य से जो संज्ञानाम स्त्रीमें मनु हुये थे उनका वृत्त कहचुके हैं व संज्ञाकी छाया में सूर्यहीसे एक दूसरे मनु हुये वे अपने पूर्वज सावर्णमन्वन्तर को सावर्णिक अठयें मनु के नामसे प्रसिद्धकरके भोगेंगे उसे सुनो १७ सावर्णिनाम

आठवां मनु होगा सुतपादिक उसमें देवगण होंगे उन के इन्द्र बलि होंगे १८ दीप्तिमान्, गालव, द्रोणाचार्य के पुत्र अश्वत्थामा, व्यास व ऋष्यशृंग ये सात सप्तर्षि होंगे व विराज, उर्वरीयान्, निर्मोकादि, सावर्णि मनुके पुत्र राजा होंगे १९ नवयें मनुका दक्ष सावर्णिनाम होगा व धृति, कीर्तिदीप्ति, केतु, पञ्चहस्त, निरामय, पृथुश्रवादि मनुके पुत्र राजा होंगे २० व मरीचिगर्भ, सुधर्मा, हविष्मान् आदि देवगण होंगे उनके इन्द्र का अद्भुत नाम होगा २१ सवन, कृतिमान्, हव्य, वसु, मेधातिथि व ज्योतिष्मान् ये सप्तर्षि होंगे दशवां ब्रह्म सावर्णिनाम मनु होगा २२ विरुद्धादिक उसमें देवगण होंगे उन के इन्द्र का शांतिनाम होगा २३ हविष्मान्, सुकृति, सत्य, तपोमूर्ति, नाभाग, प्रतिमोक व सप्तकेतु ये सप्तर्षि होंगे सुक्षेत्र, उत्तम, भूरिषेणादि ब्रह्मसावर्णि के पुत्र राजा होंगे २४ एकादशयें मन्वन्तर में धर्मसावर्णिनाम मनु होगा २५ व सिंहसवनादि देवगण होंगे उनके इन्द्र का दिवस्पतिनाम होगा २६ व निर्मोह, तत्त्वदर्शी, निकम्प, निरुत्साह, धृतिमान् व रुच्य ये सप्तर्षि होंगे २७ चित्रसेन, विचित्रादि धर्मसावर्णि के पुत्र राजा होंगे बारहवां रुद्र सावर्णिनाम मनु होगा २८ उसमें इन्द्र कृतधामा नाम होंगे हरित, रोहित, सुमनस्, सुकर्मा, सुतपानाम देवगण होंगे २९ तपस्वी, चारुतपा, तपोमूर्ति, तपोरति, तापोधृति, ज्योतिरूप ये सप्तर्षि होंगे ३० देववान्, देवश्रेष्ठाद्य उस मनु के पुत्र राजा होंगे ३१ तेरहवां रुचि सावर्णिनाम मनु होगा सम्वी, वाण,

सुधर्मा आदि देवगण होंगे उनके इन्द्र का ऋषभ नाम होगा ३२ निश्चित, अग्नितेजा, वपुष्मान्, धृष्ट, वारुणि, हविष्मान्, नहुष, भव्य ये सप्तर्षि होंगे व सुधर्मा देवानीकादि मनुके पुत्र राजा होंगे ३३ चौदहयें मनु का भौमनाम होगा उसमें इन्द्रका सुरुचिनाम होगा चक्षुष्मान्, पवित्र, कनिष्ठाभ, देवगण होंगे ३४ अग्निबाहु, शुचि, शुक्र, माधव व जितश्वासादि ये सप्तर्षि होंगे उरुगम्भीर, ब्रह्मादिक उस मनु के पुत्र राजा होंगे ३५ इस प्रकार तुम से चौदह मन्वन्तर कहे व राजाभी कहे जिनसे भूमि की पालना होतीहै ३६ मनु सप्तर्षि देवता राजा मनुकेपुत्र व इन्द्र ये सब मन्वन्तर के अधिकारी होते हैं इससे मनु में बराबर रहते हैं ३७ जब ये चौदह मन्वन्तर बीतजाते हैं तब हज़ार चौयुगियां होती हैं इतनेही का ब्रह्माजी का एक दिन होता है ३८ व दिन के पीछे इतनीही बड़ी ब्रह्माजीकी रात्रि भी होती है उसमें ब्रह्मरूपधारी सर्वात्मा नृसिंहजी शयनकरते हैं ३९ उतने समयतक भगवान् तीनों लोकों को ग्रस लेतेहैं व वही फिर सृष्टि की आदि में बनाते भी हैं यह सब अपनी माया में स्थित होकर सर्वरूपी जनार्दन भगवान् किया करते हैं ४० जागने के पीछे जैसा पूर्वमें विश्वरहता है वैसीही फिर युगकी व्यवस्था के साथ सृष्टि रचते हैं ॥ ४१ ॥

हरिगीतिका ॥

मनु अमर मनुसुतनृपति मुनिवर इन्द्रमुख सबही कहे।
सब हैं विभूति नृसिंहजी की स्थिति टिकेही जो रहे ॥

सब चर अचर सुर आदि तन्मय जानिये अरु मानिये।
यहचारि अरु दशमनुनगाथानित्यनिजहिय आनिये १।४२

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेमन्वन्तरानुवर्णनन्नाम त्रयोविंशोऽध्यायः॥ २३॥

चौबीसवां अध्याय॥

दो० चौबिसयें अध्याय महँ, नृप इक्ष्वाकु चरित्र।
सूत कह्यो मुनिवरनसों, जो सबभांति विचित्र॥ १॥

सूतजी भरद्वाजादि मुनियों से बोले कि इसके पीछे हम सूर्यवंशी व सोमवंशी राजाओं का सुननेवालों के पापों का नाशक वंशानुचरित कहेंगे १ सूर्यवंश में उत्पन्न मनु के पुत्र राजा इक्ष्वाकु जी का वर्णन हमने पूर्वसमय में किया था अब उनका चरित सुनो २ हे महाभाग! पृथ्वी पर सरयूनदी के तीर एक महाशोभन व दिव्य अयोध्यानाम पुरी है ३ यह पुरी इन्द्रकी अमरावतीनाम पुरीसे भी अत्यन्त ऋद्धि सिद्धिमतीहै व तीसयोजन की लम्बी चौड़ीहै हाथी घोड़े रथ पैदरों के समूहों से व कल्पद्रुम के समान प्रकाशित वृक्षों से शोभितहै ४ शहरपनाह खावां फाटकोंके ऊँचे परके तोरणोंसे विराजमान है क्योंकि ये सब वहां सुवर्णहीके हैं व चौरहे सब सब प्रकार से बने बनाये हैं ५ अनेक तो उसमें भूमि पर के धवरहर हैं व सब मन्दिर नाना प्रकार के पात्रों से भरेहुये हैं व नाना प्रकार के कमलों के समूहों से युक्त बावलियों से शोभित हैं ६ विष्णु शिवादि देवताओं के मन्दिरों से व उनमें बैठे हुये

ब्राह्मणों के कियेहुये वेदशब्दों से शोभित है वीणा वेणु मृदङ्गादिकों के उत्कृष्ट शब्दों से युक्त है ७ व शाल, ताल, नारियर, कटहर, अमला, जामुनि, आम्र, कैथा व अशोकादि वृक्षों से उपशोभित है ८ फुलवाड़ियों व विविध प्रकार के उपवनों से युक्त व सब ओर फलेहुये वृक्षों से युक्त है चमेली, बेला, निवारी, जाती, पाड़र-डांड़, चम्पादिकोंके वृक्षों से अतिमनोहर है ९ कँदैल, कठचम्पा, केतकी से भी अलंकृत है केली व केला, बिजौरे, निम्बू आदि के बड़े २ फलों से विराजमान है १० कहीं २ चन्दनादि सुगन्धित वस्तुओं से व नाग-रंगादिकों से शोभित है व सर्वत्र नित्यनये २ उत्सवों से प्रमुदित रहती व गाने बजाने में निपुणलोग ठौर २ गाते बजाते रहते हैं व रूपधन निरीक्षणादिकों से शोभित नरनारियों से सर्वत्र भूषितरहती है ११ नाना प्रकार के देशों के मनुष्यों से सदा भरी पुरी रहती है पताका ध्वजादिकों से उपशोभित व देवपुत्रों की प्रभा के समान दीप्तियों से युक्त महाराजकुमारों से शोभित है १२ देवस्त्रियों के तुल्य सुरूपवती स्त्रियों से भरीहुई है व बृहस्पति के समान सत्कवि ब्राह्मणों से भरी पुरी है १३ दूकानदारों व और पुरवासियों की भीड़ से शोभित व कल्पवृक्षों से भी शोभित है व उच्चैश्श्रवा के तुल्य घोड़ों तथा ऐरावत के समान गजों से संकुल है १४ इस प्रकार नाना प्रकार के भावों से अयोध्या इन्द्रपुरी के तुल्य वरन उससे भी अधिक शोभायमान होतीहै इस पुरी को देखकर एक समय ब्रह्मा की सभा

में नारदजी ने यह श्लोक गायाथा १५ कि स्वर्ग बनाते हुये ब्रह्माकी निपुणता व्यर्थ होगई क्योंकि नाना प्रकार के इष्टभोगों से युक्त होनेके कारण अयोध्यापुरी स्वर्ग से बहुत अधिक होगई है १६ उस अयोध्यापुरी में महाराज इक्ष्वाकुजी बसे तब ब्राह्मणों ने अभिषेक किया कि उन महाबली ने धर्मयुद्ध से अन्य खण्डमण्डलेश्वर राजाओं को जीतलिया १७ माणिक्ययुक्त मुकुट शिरों पर धरे मण्डलाधिप राजाओं ने नमस्कारकर व भय से उनके चरणों को पूज्यस्थान समझा १८ सो अक्षत बलवाले सब शास्त्रों में बिशारद तेज से इन्द्र के तुल्य मनु के पुत्र इक्ष्वाकुजी बड़े प्रतापी हुये १९ धर्मशास्त्र व न्याय के अनुसार वेदज्ञ ब्राह्मणों की आज्ञानुसार धर्मात्मा महाराजने समुद्र पर्यन्त इस पृथ्वी का पालन किया २० उन बलवान् ने समर में सबभूपतियों को अस्त्रों से जीतलिया व तीक्ष्ण अस्त्रों से जीतकर उन लोगों के चामर, छत्रादि महाराज चिह्न छीनलिये व बहुत २ दक्षिणा देकर यज्ञ किये उनसे उन्होंने परलोकों को जीतलिया व प्रतापी महाराज इक्ष्वाकुजी ने नाना प्रकार के दानों सेभी परलोक जीत लिये २१ व दोनों हाथों से तो पृथ्वी का धारणकरलिया तदनन्तर जिह्वा के अग्रभाग से सरस्वती का धारण किया व राज-लक्ष्मी को वक्षस्स्थल से व चित्त से श्रीविष्णु की भक्ति को धारणकिया २२ बैठने के समय के अमलवस्त्रों में तो महाराज ने हरि के रूप लिखाये थे व लेटनेके वस्त्रों में माधव के रूप व सोनेवालों में अनन्त के रूप

लिखाये थे २३ बस तीनों कालों में वस्त्रों में लिखेहुये श्रीहरि के रूपों की पूजा गन्ध पुष्पादिकों से महाराज सब कियाकरते थे २४ इसीसे महाराज स्वप्न में भी श्याममेघ के समान कृष्णचन्द्रजी को व शेषनाग के ऊपर शयनकरतेहुये पद्मनाभजी को व पीताम्बर को भी देखाकरते थे २५ इसीसे कृष्णचन्द्र के रंग के समान कृष्णमेघ में भी महाराज स्नेह करते थे व कृष्ण मृग तथा कृष्ण कमल में भी स्नेह अधिक करते थे २६ ऐसा करते २ श्रीहरि की दिव्य आकृति के दर्शन के लिये राजा की तृष्णा अपूर्व बढ़ी २७ जब तृष्णा बढ़ी तो महाराज ने राज्य के भोग को असार समझा व गृह, स्त्री, पुत्र, क्षेत्रादि को छोड़दिया क्योंकि ये सब उनको दुःखद दिखाईदिये २८ यह बिचारा कि वैराग्ययुक्त ज्ञान के समान इसलोक में कुछ नहीं है ऐसी चिन्तना करके तपस्या में चित्तलगाया २९ व जाकर अपने पुरोहित वसिष्ठजी से उपाय पूछा कि हे मुने ! हम तपोबल से नारायण के दर्शन किया चाहते हैं ३० सो उसका उपाय आप हम से कहें जब राजा ने ऐसा कहा तो तप में मन लगाये हुये महीपति से वसिष्ठजी बोले ३१ क्योंकि वे एक तो धर्मज्ञ थे व सदा राजा के हित में तत्पर रहते थे कहा कि महाराज जो नारायण हरि के दर्शन किया चाहते हो तो ३२ अच्छी रीति से किये हुये तप से जनार्दन भगवान् की आराधनाकरो क्योंकि विनातप कियेहुये कोई भी पुरुष देवदेव जनार्दनजी को ३३

कभी नहीं देखसक्ता इससे उनकी पूजा तुम तपसे करो सो यहांसे आग्नेयकोण में सरयूजी के किनारे ३४ गालवादि ऋषियों का उत्तम आश्रम है यहां से वह पावन स्थान पांचयोजन पर है ३५ वह स्थान नाना प्रकार के वृक्षगणों से आकीर्ण है व नाना प्रकार के पुष्पों से युक्त है अब नीतिमान् अपने अर्जुननाम मन्त्री को जो कि महाबुद्धिमान् है ३६ राज्य का भार सौंपकर व सन्ध्याबन्दन श्राद्धादि पितृकर्मकाण्ड भी उसीको सौंपकर गणेशजी की पूजा करके यहांसे चलो ३७ व वहां जाकर सिद्धहोने की इच्छा करके तपकरो जैसा तपस्वीलोग अपना वेष रखते हैं वैसाही वेष धारणकर कन्दमूल फल भोजन करतेहुये तप करना ३८ व नारायण भगवान् का ध्यानकरतेहुये यह मन्त्र सदा जपो "ओन्नमो भगवते वासुदेवाय" यह द्वादशाक्षर मन्त्र सिद्धिकारक है ३९ इस मन्त्र को जप कर बहुतसे पुराने मुनिलोग उत्कृष्ट सिद्धि को प्राप्त हुये हैं यहांतक कि चन्द्र सूर्यादिग्रह ऊंचे जा २ कर फिर लौट आते हैं ४० पर द्वादशाक्षर मन्त्र की चिन्ता करनेवाले नहीं निवृत्तहोते बाहर की इन्द्रियों को मन में स्थापनकरके व मन को सूक्ष्मपरमात्मा में ४१ हे राजन्! इस प्रकार मन्त्र को जपो मधुसूदन को अवश्यदेखोगे हमने हरि के प्राप्तिकी तपस्याकरनेके विषयमें यह उपाय तुमसे कहा ४२ जो तुमने पूछा हमने कहा जो इच्छाहो तो यहीकरो सब से उत्तम उपाय है ॥ ४३ ॥

चौपैया ॥

जबइमि मुनि भाषा करिअभिलाषा राजा सबमहि भारा।
वरमन्त्रिसमर्पो गतसबदर्पो करि गणपति नति बारा ॥
बहुसुमन मँगाई अतिहरषाई करि करिमुख की पूजा।
निजपुरसों बाहरनिकस्यो नाहरतजिमनसोंसबदूजा ॥१४४॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेइक्ष्वाकुचरित्रे
चतुर्विंशोऽध्यायः ॥ २४ ॥

पच्चीसवां अध्याय ॥

दो० पच्चिसयेंमहँ गजवदन, पूजा जिमि नृप कीन।
अरु हरिहित तपकीनसो, वर्ण्यो सूत प्रवीन ॥ १ ॥

इतनी कथा सुनकर भरद्वाज मुनि ने प्रश्नकिया कि महात्मा उस महाराज ने गणेशजीकी स्तुति कैसे की व जिस प्रकार उन्हों ने तपकिया हो वह हमसे कहो हे महामतिवाले १ सूतजी बोले कि चतुर्थी के दिन राजाने तीनबार स्नानकरके रक्तवस्त्र धारण कर व रक्तगन्ध का अनुलेपन करके २ सुन्दर अतिरक्त पुष्पों से गणेशजी की पूजा की जैसा उनके पूजन का विधान है वैसे रक्तचन्दन मिले हुये जल से स्नान कराया ३ व रक्तचन्दनही से लेपन करके रक्तपुष्पों से पूजनकिया फिर घृत व चन्दनयुक्त धूप दिया फिर गुड़ व खांड़ घृत मिलाकर हरिद्रा की नैवेद्य लगाई ४ इस प्रकार विधि से पूजनकरके गणेशजी की स्तुति राजा करने लगे इक्ष्वाकुजी बोले कि, महादेवजी के नमस्कार करके हम विनायकजी की स्तुति करते हैं ५

महागणपति शूर अजित ज्ञानवर्द्धन एकदन्त द्विदन्त चतुर्दन्त व चतुर्भुज ६ त्र्यक्ष त्रिशूल हस्त रक्तनेत्र वर-प्रद आम्बिकेय शंकुकर्ण प्रचण्ड विनायक ७ आरक्त दण्डी वह्निवक्त्र हुतप्रिय ऐसे गणेशजी जोकि विना पूजा कियेहुये सबकार्यों में विघ्न करते हैं ८ उन भयं-कर उग्ररूप उमा के पुत्र गणाध्यक्ष के नमस्कार करते हैं जोकि मद से मत्त विरूपाक्ष व भक्तों के विघ्नों को रोकते हैं ९ कोटि सूर्यसम प्रकाशित फूटेहुये अञ्जनके समान श्यामस्वरूप शुद्ध व निर्मल शान्तरूप विनायक के नमस्कार करते हैं १० गजवदनके नमस्कार है व गणों के पति के नमस्कारहै मेरु व मन्दराचल के रूप वाले के नमस्कार है व कैलासवासी के नमस्कार है ११ विरूप के ब्रह्मचारी के भक्तस्तुत के व विनायक के नमस्कार है १२ हे गणेश! तुमने पूर्वसमय में गज का रूप धारण करके देवताओं का कार्य सिद्ध करनेके लिये दैत्यों को त्रासितकिया था १३ ऋषियों व देव-ताओं के नायकत्व को भी प्रकाशित किया हे शिवपुत्र! तभीसे तुम इधर उधर देवताओं से पूजित होते हो १४ सर्वज्ञ कामरूपी गणाध्यक्ष तुम्हारी आराधना कार्य के लिये जो कोई रक्तपुष्पों से व रक्तचन्दन मिलायेहुये जल से १५ आप रक्तवस्त्र धारण करके चतुर्थी के दिन करता है तीनों कालों में वा एकहीकाल में निय-मित भोजन करके पूजाकरता है १६ वह राजा वा राजपुत्र वा राजमन्त्री वा राज्य को तुम्हारी कृपा से वश में करलेता है हे गणेश्वर १७ इससे हे विनायक!

तुम्हारे हम नमस्कार करते हैं हमारे तप में अविघ्नकरो हमने इस प्रकार से स्तुति की है व भक्ति से विशेष रीति से पूजा की है १८ इससे जो फल सब तीर्थों की यात्राकरने में हो व जो फल सब यज्ञों के करनेसे हो वह फल विनायक देव की स्तुति करनेसे हो १९ व पूजक को विषम न हो व वह निरादर को कहीं न प्राप्त हो व विघ्नभी उसका न हो व जहां वह उत्पन्न हो वहां उसे अपनी जातिका स्मरण बनारहे जो कोई इस स्तोत्र को पढ़े वह ६ मास में सब कुछ करने में समर्थ हो व वर्षभर में सिद्धि को पावे इसमें संशय नहीं है २० सूतजी बोले कि, हे द्विज! पूर्वकाल में इस रीति से गणेशजी की स्तुतिकरके राजा इक्ष्वाकुजी तापसों का वेष धारण करके तपकरने के लिये वन को चलेगये २१ व सर्पकी केंचुल के समान चमकतेहुये बड़े मोल के वस्त्र उतारकर वृक्ष का बड़ा कठोर बकला कटि में धारण किया २२ व ऐसेही सुवर्ण के रचित सब कंकण उतार कर कमलके फूलों की माला बनाकर व कमलही के सूत्रों के कंकण धारणकिये २३ ऐसे शिरपर से रत्न व सुवर्ण से शोभित मुकुट को उतारकर तपकरनेके लिये राजा ने जटाकलाप धारणकिया २४ इस रीति से वसिष्ठजी के कहनेके अनुसार तापसवेष करके तपोवन में जाके शाक मूल फल खातेहुये राजा तपकरने लगे २५ ग्रीष्मऋतु में पांच अग्नियों के मध्य में बैठकर महातप किया व वर्षाकाल में निरालम्ब ऐसेही बाहर बैठकर व हेमन्तऋतु में जलके भीतर खड़े हो-

कर २६ व फिर सब इन्द्रियों को शान्तकरके मन में स्थापित करके व मन को श्रीविष्णुजी में प्रवेश कराके द्वादशाक्षर मन्त्र जपनेलगे २७ जब केवल वायु भक्षण करके राजा मन्त्र जपनेलगे महात्मा राजा के निकट लोक के पितामह ब्रह्माजी आकर प्रकटहुये २८ उन पद्मयोनि चतुर्मुख ब्रह्माजी को आयेहुये देखकर भक्ति-भाव से प्रणाम करके व स्तुति करके राजा ने प्रसन्न किया २९ जैसे कि हिरण्यगर्भ जगत्स्रष्टा महात्मा वेदशास्त्र जाननेवाले चारमुखवाले तुम्हारे नमस्कार है ३० जब इस प्रकार राजा ने स्तुति की तो जगत् बनानेवाले ब्रह्माजी महासुखदायक राज्य छोड़े हुये शान्तचित्त तपकरतेहुये राजा से बोले ३१ कि हे राजन्! लोकों के प्रकाश करनेवाले सूर्यजी तो तुम्हारे पितामह हैं व सब मुनियों के भी मान्य मनुजी तुम्हारे पिता हैं ३२ व तुम्हारे पिता पितामह ने पूर्वकाल में बहुत तपकिया था पर जबतक कुछ शरीर में पापरहे तभीतक उन्होंनेभी तपकिया व सबको तभीतक करना चाहिये ३३ पर तुम सब राज्यभोग छोड़कर घोर तप किस लिये करतेहो यह हमसे कहो हे नृपोत्तम! ३४ जब राजा से ब्रह्माजी ने ऐसा कहा तो वे उनके प्रणाम करके यह वचन बोले कि यह तप हमारा भगवान् के दर्शन करनेकी इच्छासे है ३५ कि जिससे शंख, चक्र, गदा धारणकियेहुये श्रीभगवान् के दर्शन अच्छी तरह से हों जब राजा ने ऐसा कहा तो हँसतेहुयेसे ब्रह्माजी राजा से बोले ३६ कि तपकरनेसे तो तुम नारायण

विभु को नहीं देख सके क्योंकि हम[illegible] लोग भी
क्लेशनाशन केशवजी को नहीं देखसके ३७ इस विषय
में एक पुरानी कथा कहते हैं सुनो महाप्रलय होजाने
पर भगवान् विष्णुजी सबलोकों को अपने में लीन
करके ३८ अनन्तनाग को शय्या बनाकर शयनकर
रहते हैं तब सनन्दनादि ऋषि वहां उनकी स्तुति कि-
याकरते हैं ३९ उन सोतेहुये नारायणजी की नाभि से
एक कमल उत्पन्न होताहै हे राजन् ! उसी शुभ कमल
पर वेद जाननेवाले हम पूर्वकाल में उत्पन्नहुये व स्थित
हुये ४० उस पर से नीचे को दृष्टिकरके हमने कमल-
नयन भगवान् को देखा वे अनन्तनाग की शय्या पर
भिन्न अञ्जन के समान चमकतेहुये श्यामस्वरूप दिखाई
दिये ४१ जो कि अलसी के पुष्प के रंग के थे व पीत
वस्त्र धारणकिये शयन करते थे दिव्यरत्नों से उनके
अंग विचित्र थे व मुकुट से विराजित होतेथे ४२ व
कुन्द इन्दुके सदृश गौरवर्ण के अनन्तजी थे जिनको
वे शय्या बनाये थे व सहस्रोंफणों के मध्य में स्थित
मणियों से प्रकाशित होरहे थे ४३ एक क्षणमात्र हमने
उनको वहां देखा पर फिर हमको न दिखाईदिये तब हे
नृपोत्तम ! हम बड़ेभारी दुःख से युक्तहुये ४४ तब हम
कौतूहल से अनामय नारायणजी के दर्शनके लिये उस
कमल की नाड़ी के आश्रय से नीचेको उतरे ४५ व
उसजल में जाकर ढूँढ़ा परन्तु हे राजेन्द्र ! हमने फिर
न देखा तब फिर उसीकमल का आश्रयणकरके उन्हीं
लक्ष्मीनाथ की चिन्तना करनेलगे ४६ व वासुदेवजी

के उसरूप के देखने के लिये बड़ाभारी तप हमने किया तब हमसे अन्तरिक्ष में टिकी हुई आकाशवाणीने यह कहा कि ४७ हे ब्रह्मन्! वृथा क्यों क्लेश को प्राप्तहोते हो इस समय हमारा वचन करो तुम बड़ाभारी भी तप करोगे तोभी भगवान् विष्णुको अब न देखोगे ४८ जो देखने की इच्छा हो तो अब उनकी आज्ञा के अनुसार सृष्टि करो व शुद्ध स्फटिकमणि के समान प्रकाशित शेषनाग को पर्यंक बनाय शयन करतेहुये ४९ भगवान् का जो रूप तुमने देखा था जोकि फूटे व घोटेहुये अञ्जन के तुल्य चमकता था उस रूप को एकपत्र में उल्लिखित करके रत्नके सिंहासन पर स्थापित करके ५० हे महामते! नित्यभजते व देखतेरहो तो माधव भगवान् को देखोगे हे राजन्! जब उस आकाशवाणी ने हमसे ऐसा कहा तो हमने तपका करना छोड़दिया ५१ व लोक के सब प्राणियों की सृष्टि करनेलगे जब सृष्टि करचुके तो हमारे मन में विश्वकर्मा प्रजापति प्रकट हुये ५२ व उन्होंने अनन्त और कृष्ण की दो मूर्तियां अतिसुन्दर बनाईं जैसी दोमूर्तियां हमने प्रथम जल में देखीथीं व विमानपर उल्लिखित करके पूजी थीं ५३ फिर हम उनकी पूजा वैसेही करके हरि के आगे स्थित होकर बोले कि तुम्हारे प्रसाद से श्रेष्ठ तप व उत्तम ज्ञान ५४ पाकर व मुक्ति पाकर विकाररहित क्रियाका सुख देखेंगे सो हे नृपवरेश्वर! वही हम तुमसे कहेंगे ५५ इससे तुम घोर तप को छोड़कर अपनी पुरी को जाओ व प्रजाओं का पालनकरो क्योंकि प्रजापालन करनाही

राजाओं का धर्म व तपहै ५६ हम सिद्ध द्विजगणों से युक्त एक विमान तुम्हारे निकट भेजेंगे उसपर स्थित देवेश की आराधना तुम करना व सब बाहर के शुभ अर्थों से भी ५७ अनन्त नारायण को उसीपर शयन करतेहुये यज्ञों से भी पूजना व निष्काम होकर धर्मसे प्रजाओं की पालना करना ५८ ऐसा करने से वासुदेव जी के प्रसाद से हे राजन्! तुम्हारी मुक्ति होगी यह कहकर पितामहजी ब्रह्मलोक को चलेगये ५९ व इक्ष्वाकुजी ब्रह्माजी के वचन की चिन्तनाकरते हुये स्थित रहे थोड़ेही दिनोंके पीछे वह विमान राजा के आगे प्रकट हुआ ६० यह माधव व अनन्तजीका विमान ब्रह्माजी का दियाहुआ आया इस पर सब उत्तम २ विप्र बैठे थे ६१ उस विमान को देख व परमभक्ति से पुरुषोत्तमजी के प्रणाम करके व ऋ-षियों ब्राह्मणों के प्रणाम कर विमानको संग लेकर राजा अपनी पुरी को चलेगये ६२ वहां अपूर्व शोभा से युक्त लाजा अक्षत उछालते हुये पुरवासी व नगर की ना-रियों ने राजा के गृह में राजा को पहुँचाया ६३ फिर अपने सुन्दर मन्दिर में उस विमान को स्थापित कर उन ब्राह्मणों के संग हरिकी आराधना करनेलगे पूजा अपनी पतिव्रता स्त्री के घिसे हुये चन्दन से ६४ व सुग-न्धित पुष्पों की माला से करते थे करते २ राजा की बड़ी प्रीति बढ़ी राजा के पूजन करनेके लिये सब पुरवासी कपूर, चन्दन, कुंकुम, अगर लाते थे ६५ व नाना प्र-कार के उत्तम २ वस्त्र व महिषाख्य गुग्गुल व विष्णुजी

के योग्य मालती आदि के उत्तम सुगन्धित पुष्प आन २ कर देते थे ६६ इस प्रकार विमान पर विराजमान श्री विष्णुजी की पूजा गन्ध पुष्पादिकों से तीनों कालों की सन्ध्याओं में परम भक्ति से होती व वैष्णवी मन्त्रों स्तोत्रों के जपने पढ़ने से होती थी ६७ व शंखादि बाजों के शब्दों से व गाने के महा कोलाहलों से व शास्त्रोक्त मन्त्र पढ़ २ कर सम्मुख अवलोकन करने से तथा प्रसन्नता पूर्वक रात्रि में जागरण करने से होती ६८ इस प्रकार श्रीहरि का परम उत्सव प्रति दिन राजा कराता था व नाना प्रकार के यज्ञों से सर्वदेवमय श्रीहरि को सन्तुष्ट करके ६९ निष्काम दान धर्म करने से राजा ने, परमज्ञान पाया व यज्ञ से पूजा करते २ पृथ्वी की रक्षा करते कराते व केशवकी पूजा करते हुये ७० राजा ने पितरों के लिये पुत्रों को उत्पन्न कर व ध्यान से शरीर को छोड़ व केवल ब्रह्म का ध्यान करते हुये वैष्णव पद को पाया॥ ७१ ॥

चौपैया ॥

विमल विशोका शुद्धशलोका अज अद्वैत अनन्ता।
शान्तस्वरूपा वेदनिरूपा सदानन्द भगवन्ता॥
ताकरकरिध्याना चढ़योविमाना तजि भवदुःखदुरन्ता।
गो हरिपदपावन वैष्णवभावन जो सुखदेत तुरन्ता॥७२

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेइक्ष्वाकुचरित्रे पञ्चविंशोऽध्यायः॥ २५॥

छब्बीसवां अध्याय॥

दो० छब्बिसयें अध्याय महँ, सब रविवंशी भूप।

कहे गये संक्षेप सों, निजमति के अनुरूप ॥ १ ॥

इक्ष्वाकुजी के विकुक्षिनाम पुत्र हुये जब इनके पिता सिद्ध होगये तो महर्षियों ने उनको गद्दीपर बैठाया ये धर्म से पृथ्वीको पालतेहुये विमानपर स्थित भोग-शायी अच्युत व अनन्त की आराधना करके यज्ञों से भी देवताओंकी पूजा करके अपने सुबाहुनाम पुत्र को राज्याभिषेककरके स्वर्ग को चलेगये उन आजानु सुबाहु से उद्योतनाम पुत्र हुआ वह सप्तद्वीपवती पृथ्वी का पालन धर्म से कर अपने पितामह के समान नारायण में परमभक्ति करके बहुत २ दक्षिणा देकर नाना प्रकार के यज्ञों से निष्कामसन हो श्रीहरि की पूजाकरके नित्य निरञ्जन निर्विकल्प परञ्ज्योति अमृताक्षर परमात्मरूप का ध्यानकरके हरि अनन्तपार की आराधनाकर स्वर्गको चलागया १ यह जानो कही चुके हैं कि इसमें प्रधानही राजाओं का वर्णन है इस से इसीवंशमें एक असंहताश्व राजा हुये उनके मान्धातानाम पुत्रहुये इनका जब महर्षियों ने राज्याभिषेक किया तो ये तो अपने स्वभावही से विष्णुभक्त थे इससे अनन्त शेष की शय्या बनाये हुये श्रीअच्युत की आराधना भक्ति से करतेहुये व यज्ञोंसे भी उनकी पूजाकरके धर्मसे सप्तद्वीपवती पृथ्वी की पालना करके स्वर्गको चलेगये २ उनके विषयमें यह श्लोक मुनियों ने गाया है कि ॥

दो॰ सूर्य उवत जहँसों रहत, जितने महँ सब ठाम।
राज तहांलग सब रहो, मान्धाता कर वाम ॥ १२ ॥

मान्धाता के पुरुकुत्स्य हुये जिन्होंने देवताओं व ब्राह्मणों को यज्ञों से व दानों से सन्तुष्ट किया ४ पुरुकुत्स्य के दृषद् दृषद् के अभिशम्भु अभिशम्भु के दारुण दारुण के सगर ५ सगर से हर्यश्व हर्यश्वसे हारीत हारीत से रोहिताश्व रोहिताश्व से अंशुमान् ६ अंशुमान् के भगीरथ हुये जिन्होंने बड़ी तपस्या से स्वर्गलोक से सम्पूर्ण पापनाशनी अर्थ धर्म काम व मोक्ष देनेवाली गङ्गाजी को पृथ्वीतलपर पहुँचाया व केवल अस्थियों के चूर्ण शेष रहनेवाले कपिल महर्षि की दृष्टि से भस्म हुये सागराख्य अपने पितरों को गङ्गाजलका स्पर्श कराकर स्वर्ग में पहुँचाया भगीरथ के सौदास सौदास के सत्रसव ७ सत्रसव के अनरण्य अनरण्य के दीर्घबाहु ८ दीर्घबाहु के अज अज से महाराज दशरथ जी उनके गृह से रावणादिकों के मारडालने के लिये साक्षान्नारायण परब्रह्म श्रीरामचन्द्र महाराजाधिराज ने अवतार लिया ९ वे अपने पिता की आज्ञा से अपनी भार्या व छोटेभ्राता के साथ दण्डकारण्य में पहुँचकर तप करनेलगे वनमें रावण उनकी भार्या को हरलेगया इससे भाई के संग दुःखित होकर अनेक कोटि वानरोंके नायक सुग्रीव को सहाय बनाय समुद्र में सेतु बांधकर उसपर होकर उन वानरों सहित लङ्का में जाय देवताओं के कण्टकरूप सपरिवार रावण को मार सीताजी को लेकर फिर अयोध्याजी में आकर भरत से राज्याभिषेक पाकर विभीषण को लङ्का का राज्य देकर विमान पर चढ़ाय लङ्काको भेजदिया व

उसी विमानपर परमेश्वर श्रीरामचन्द्रजी भी विभीषण के ले जानेसे चलेगये व राक्षसों की पुरी लङ्कामें बसने की इच्छाभी विभीषण के हेतु की व वहीं एक पुण्यारण्य स्थापित किया १० उसे देख वहीं महाशेष नाग की शय्यापर भगवान् शयनकररहे इससे विभीषण वहां से वह विमान फिर आगे को न लेजासके श्री रामचन्द्रजी के कहनेसे अपनी पुरी को चलेगये ११ व वहां नारायण श्रीरामजी के नि... ...नेसे वह स्थान बड़ाभारी वैष्णवक्षेत्र होगया सो अबभी दिखाई देता है श्रीरामचन्द्रजी से लव, लवसे पद्म, पद्म से ऋतुपर्ण, ऋतुपर्ण से अस्त्रपाणि, अस्त्रपाणिसे शुद्धोदन व शुद्धोदनसे बुधहुये बुधसे यह वंश निवृत्त हुआ॥१२॥

चौपैया॥

इतने भूपाला अतिहि विशाला सूर्यवंश परधाना।
तुम सन हमगाये सबन बताये गाये जौन महाना॥
जिनमहिकरपालन अरुजनलालन कीनभलीविधिपाहीं।
अरु बहुमखकरिके देवनभरिके पाले द्विजशकनाहीं॥१३॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादे सूर्यवंशानुचरितंषड्विंशोऽध्यायः॥ २६॥

सत्ताईसवां अध्याय॥

दो० सत्ताइसयें महँ कहब, सोमवंशि नृपगाथ।
जाहिसुने नरनारिसब, बहुविधि होत सनाथ॥१॥

सूतजी बोले कि, अब सोमवंशी राजाओं के चरित संक्षेप रीति से कहते हैं १ आदि में सब त्रिलोकी को

अपने उदर में करके एकार्णव के महाजल में शेषनाग को शय्या बनाकर ऋग्वेदमय यजुर्मय सामम‌य अथर्वमय भगवान् नारायण योगनिद्रा को अपनी इच्छा से ग्रहण करते हैं २ शयनकिये हुये उनकी नाभि से महाकमल उत्पन्न हुआ उस कमल पर चार मुख के ब्रह्माजी हुये ३ उन ब्रह्माजी के मानसीपुत्र अत्रिजी हुये अत्रि के अनसूया में सोम उत्पन्न हुये उन्होंने दक्षप्रजापति की त्यैंतीस रोहिण्यादि कन्या भार्या बनाने के लिये ग्रहण कीं पर सबसे ज्येष्ठ रोहिणी के ऊपर बहुत प्रसन्न हुये इसीसे रोहिणी में बुधनाम पुत्र उन्होंने उत्पन्न किया ४ बुधभी सर्वशास्त्र जानते हुये प्रयाग के निकट प्रतिष्ठानपुरमें बसे व वहां उन्होंने इलानाम स्त्री में पुरूरवानाम पुत्र उत्पन्न किया अतिशय रूपवाले इन राजा की भार्या स्वर्ग के भोगों को त्यागकर बहुत दिनों तक उर्वशी अप्सरा हुई ५ पुरूरवा से उर्वशी में आयुनाम पुत्रहुआ यह धर्मसे राज्य करके स्वर्गको चलागया ६ आयुके रूपवती में नहुष नाम पुत्र हुआ जिसको इन्द्रता मिली नहुषके पितृमतीमें ययाति नाम पुत्रहुआ ७ जिसके वंश से उत्पन्न सब वृष्णिवंशी हैं ययातिके शर्मिष्ठामें पूरुनाम पुत्रहुआ ८ पूरु के वंशदामें संयाति पुत्रहुआ पृथ्वी पर इसराजा के सब काम सम्पन्नहुये ९ संयातिके भानुदत्ता में सार्वभौम नाम पुत्र हुआ वह सब पृथ्वी को धर्म से पालता हुआ यज्ञदानादिकों से नरसिंह भगवान् की आराधना करके सिद्धि को प्राप्त हुआ १० इस सार्वभौम के वैदेहीनामस्त्री में भोज हुआ

जिसके वंश में पूर्वकाल के देवासुरसंग्राम में श्री विष्णुजी के चक्रसे माराहुआ कालनेमि दैत्य कंसके नामसे प्रसिद्धहोकर वृष्णि के वंश में उत्पन्न श्रीवासुदेव के हाथों से घातित होकर मरगया ११ उस भोज के कलिंगानाम भार्या में दुष्यन्तनाम पुत्रहुआ इसने नरसिंह भगवान्की आराधनाकरके निष्कण्टक राज्य धर्म से भोगकरके अन्तमें स्वर्गवास पाया दुष्यन्त के शकुन्तला में भरतनाम महाराज पुत्रहुआ वह धर्मसे राज्य करता हुआ बहुत दक्षिणा दे २ कर यज्ञोंके करने से सर्वदेवमय भगवान् की आराधना करके सर्वाधिकारों से निवृत्तहो ब्रह्मध्यानमें तत्पर होकर परम उत्कृष्ट वैष्णवज्योतिमें लीन होगया १२ भरत के आनन्दा में अजमीढनाम पुत्र हुआ यह परम वैष्णव नरसिंहजी की आराधना करके धर्म से राज्य करता रहा पुत्रहोने के पीछे स्वर्गको चलागया १३ अजमीढके सुदेवी में वृष्णिपुत्र हुआ वहभी बहुत वर्षतक धर्मसे राज्य करता हुआ दुष्टों को दण्ड व सज्जनों का पालन करता हुआ सप्तद्वीपवती पृथ्वीको वशमें कर उग्रसेनामें प्रत्यञ्चनाम पुत्र को उत्पन्न करके स्वर्गी हुआ १४ यह भी धर्म से पृथ्वी का पालन करता हुआ प्रतिवर्ष एक ज्योतिष्टोम नाम महायज्ञ करतारहा अन्त में मोक्षपद को प्राप्त हुआ प्रत्यञ्च के बहुरूपा में शन्तनु नाम पुत्रहुआ १५ जिसको देवता के दिये हुये रथपर चढ़ने में प्रथम असामर्थ्य थी फिर सामर्थ्य होगई ॥ १६ ॥

इतिश्रीनरसिंहपुराणेसोमवंशानुचरितेसप्तविंशोऽध्यायः॥ २७॥

अट्ठाईसवां अध्याय॥

दो० हरिहरादिनिर्माल्यके, उल्लंघन में दोष।
अट्ठाइसयें महँ कहे, मिटत द्विजन संतोष॥१॥

भरद्वाजमुनि इतनी कथा सुनकर बोले कि राजा शन्तनु को स्यन्दन के चढ़ने में प्रथम क्यों अशक्तिरही व फिर उनको आरोहणमें कैसे शक्तिहुई यह हमसे कहो १ सूतजी बोले कि, हे भरद्वाज! सुनो पूर्वकाल का वृत्त तुमसे कहते हैं वह राजा शन्तनु का चरित्र मनुष्यों के सब पापों को हरता है २ राजा शन्तनु नरसिंहावतारके बड़े भक्त थे व नारदमुनिके कहेहुये विधान से श्रीमाधवजी की पूजा करते थे ३ एकदिन उन्होंने नरसिंहदेव की निर्माल्य नांघी इससे हे विप्र! राजा शन्तनु देवता के दिये हुये उत्तम स्यन्दनपर ४ न चढ़ सके एक क्षणमात्र में उनकी शक्ति जातीरही इससे वे अपने मनमें विचारने लगे कि एकाएकी हमारी रथ पर चढ़ने की शक्ति कैसे भग्न होगई ५ इस दुःख की चिन्तना राजा करीरहे थे कि वहां नारदमुनि आये व राजा से पूछा कि राजन् उदासीन व दुःखित क्यों हो ६ यह सुनकर शन्तनुजी बोले कि, हे नारदजी! हम यह अपनी गतिभंग होजाने का कारण नहीं जानते जब ऐसा सुना तो ध्यान करके व सब कारण जानके फिर ७ विनयपूर्वक खड़ेहुये राजा शन्तनुजी से बोले कि हे राजन्! कहीं तुमने नरसिंहजी की निर्माल्य नांघी है इससे रथके ऊपर चढ़ने की गति ८ तुम्हारी जातीरही है हे महाराज! इस विषय का कारण हमसे सुनो हे

राजन् ! अन्तर्वेदी में पूर्वकाल में बड़ा बुद्धिमान् ९
रविनाम एक माली रहता था उसने अपने यहां एक
वृन्दावन बनाया उसने उसमें पुष्पों के लिये विविध
प्रकार के वन लगाये १० उनमें मल्लिका, मालती,
जाही, जूही, मौनश्री आदि बहुतसे वृक्ष लगाये उसकी
दीवार उसने बड़ी ऊँची व चौड़ी बनाई ११ यहां
तक कि सबओरसे अलंघ्य व अप्रवेश्य उसने वह वृ-
न्दावन व अपना गृह भी बनाया व यहभी कि प्रथम
उसके घर में जाय तो फिर उस वनमें जाय अन्यत्र
होकर कोई मार्ग नहीं था १२ इस प्रकार वन बनाकर
बसतेहुये उस बुद्धिमान् माली का वह वन फूला व
उसकी सुगन्ध सब दिशाओं में फैलगई १३ वह अ-
पनी स्त्री को संगलेकर उसमें जाकर प्रतिदिन पुष्प
तोड़ तोड़ कर नरसिंहजीके लिये मालाबनावे १४ व
जाकर प्रेमसे चढ़ावे व बहुतसी माला ब्राह्मणोंको देदे
व बहुतसी बेंचकर अपनी जीविकाकरे उसीसे अपनी
भार्या पुत्रादि की व अपनी भी जीविकाकरे १५ परन्तु
स्वर्ग से आकर इन्द्रका पुत्र रथपर चढ़कर रात्रि में
आवे व अपने संग बहुतसी अप्सराओं को ले आकर
पुष्प तोड़लेजायाकरे १६ उसके सुगन्ध की इच्छाकिये
हुआ वह ढूँढ़२ करसब पुष्प तोड़लेजायाकरने लगा
जब दिन दिन पुष्प तोड़जानेलगे तो मालीनेभी चिन्ता
की १७ कि इस वनमें जानेके लिये और कोई तो द्वार
नहीं व दीवार इसकी ऐसी ऊँचीहै कि उसे कोई नांघ
कर आयही नहीं सक्ता फिर सब पुष्पों के हरलेजाने

की शक्ति तो मैं मनुष्यों की तो देखता नहीं १८ फिर मैं अब इसकी परीक्षा कैसे लूँ नहीं जानता यह क्या बात है यह विचारकरके वह बुद्धिमान् रात्रि में वहीं जागता हुआ बस रहा १९ पर उसी प्रकार वह पुरुष आया व पुष्प सब लेकर चलागया उसे देखकर वह माली उस वनमें बहुत दुःखी हुआ २० व सोरहा स्वप्नमें उसने नरसिंहजीको देखा व उनके वचन भी ऐसे सुने कि हे पुत्रक! हमारा निर्माल्य २१ लेकर इन सब वृक्षों के ऊपर छिड़क दे व बाटिका की चारोंओर भी छिड़क दे बस इस को छोड़ दुष्ट इन्द्रपुत्र का निवारण और किसी रीतिसे न होगा २२ श्रीहरि का ऐसा वचन सुनकर व जानकर भगवान्की निर्माल्यलाकर वैसाही किया जैसा कि नृसिंहजी ने स्वप्न में कहा था २३ व इन्द्रपुत्रभी जैसे प्रतिदिन आता था वैसेही गुप्तरथ पर चढ़कर आया व रथसे उतरकर पुष्प तोड़ताहुआ भूमि पर आया २४ व वह नरसिंहजी की निर्माल्य नांघगया फिर जो पुष्प लेकर रथपर चढ़नाचाहा कि रथपर चढ़ने की शक्तिही न रही क्योंकर चढ़े २५ फिर सारथि ने कहा कि बस अब रथपर तुम नहीं चढ़सक्के क्योंकि नृसिंहजी की निर्माल्य नांघकर तुमको इस रथपर चढ़ने की योग्यता नहीं है २६ हम स्वर्गको जातेहैं तुम अब भूमिहीपर रहो न चढ़ो जब उसने ऐसा कहा तो बुद्धिमान् वह इन्द्रका पुत्र सारथि से बोला २७ कि जिसकर्म के करने से इस पाप का मोचन हो वह हमसे कहकर फिर तुम स्वर्गको शीघ्र चलेजाओ २८

यह सुनकर सारथि बोला कि कुरुक्षेत्रमें जहां परशुराम जी ने यज्ञकिया है वहां बारह वर्षतक नित्य ब्राह्मणों का जूँठ तुम बहारा झाड़ाकरो तो शुद्ध होओगे २९ इतना कहकर सारथि तो देवताओं से सेवित स्वर्गलोक को चलागया व इन्द्रका पुत्र सरस्वती के तीर कुरुक्षेत्र स्थान में पहुँचा ३० व वहां ब्राह्मणों का उच्छिष्ट झाड़ने बहारनेलगा जब बारहवर्ष पूर्ण होगये तो शङ्कितचित्त होकर ब्राह्मण लोग बोले ३१ कि हे महाभाग! तुम कौनहो जो नित्य हमलोगों का जूँठ झाड़तेरहते हो व हमारे यहां भोजन नहीं करते इस विषय में हमलोगोंको बड़ी शङ्काहै ३२ जब इस प्रकार ब्राह्मणों से कहागया तो यथाक्रम सबवृत्तान्त कहकर रथपर चढ़के इन्द्रजीका पुत्र स्वर्गको चलागया ३३ इससे हे राजन्! तुम भी परशुरामजीके क्षेत्र कुरुक्षेत्रमें बारहवर्ष तक ब्राह्मणों का उच्छिष्ट मार्जनकरो ३४ क्योंकि सब पाप हरने के लिये ब्राह्मणों से पर कोई नहीं है जब ऐसा करोगे तो देवताके दिये हुये रथपर चढ़ने की शक्ति होगी नहीं तो नहीं ३५ हे राजन्! जब यह प्रायश्चित्त करोगे तभी गति होगी व आजसे नरसिंहजी का निर्माल्य कभी न नांघो हे महामति वाले ३६ सो नरसिंहही की नहीं और भी किसी देवता के ऊपर की चढ़ी चढ़ाई वस्तु कभी न नांघो इसीको तो निर्माल्य कहतेही हैं जब इस प्रकार नारद जी ने कहा तो राजा शन्तनुजी ब्राह्मणों का जूंठ झाड़ने के लिये ३७ जाकर बारहवर्ष कुरुक्षेत्र में रहे व वहं

कार्य करके फिर आकर रथपर चढ़े बस इस रीति से शन्तनु को प्रथम रथपर चढ़ने में अशक्ति हुई ३८ फिर हे विप्रेन्द्र! पीछे से शक्ति हुई हे ब्राह्मण! देवताओं के निर्माल्यके लंघनकरने का दोष हमने इस प्रकार से कहा व ब्राह्मणों के उच्छिष्टके मार्जन करने की पुण्य कही ॥ ३९ ॥

चौपैया ॥

द्विज जूँठन मार्जन युत निज भार्यन करत नित्य जो प्राणी।
करिकै मनपूता अरु मजबूता निजमनकृति अरु वाणी॥
सब पापविहायी शुभ सुखपायी फल पायी गोदायी।
बसिकै सुरगेहा सहितसनेहा लहै भक्ति चितचायी॥१४०॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेशन्तनुचरिते
ऽष्टाविंशोऽध्यायः॥ २८॥

उन्तीसवां अध्याय॥

दो॰ शन्तनुसे क्षेमक तलक, जो नृप भे सब केरि।
उन्तिसयें महँ है कथा, पाण्डव केरि मझेरि॥१॥

राजा शान्तनु से योजनगन्धा में विचित्रवीर्य नाम पुत्र हुये वे हस्तिनापुरमें रहकर राजधर्म से प्रजाओं का पालन करते हुये व यज्ञों से देवताओं को तृप्तकराते व पितरों को श्राद्धों से तृप्त करते कराते पुत्र होनेपर स्वर्गको चलेगये १ विचित्रवीर्यकी अम्बिकानाम स्त्री में पाण्डुनाम पुत्रहुये ये भी धर्म से राज्य करके मृग के शाप से शरीर छोड़कर देवलोक को चलेगये इन पाण्डुजीकी कुन्तीनाम भार्या में अर्जुनजी हुये २ वे

बड़े तपसे शंकरजी को सन्तुष्टकरके पाशुपतास्त्र पाकर इन्द्र के शत्रु निवातकवच नाम दानवों को मार खाण्डववन रुचिपूर्वक अग्नि को दे तृप्त अग्नि से दिव्य वर पाय दुर्योधनसे हृतराज्य होकर युधिष्ठिर, भीमसेन, नकुल, सहदेव, द्रौपदी सहित विराट्के नगर में अज्ञातवास एकवर्ष रह वहीं गोहरण में भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य, दुर्योधन, कर्णादिकों को जीतकर सब गोमण्डल लौटाले जाकर अपने भाइयों समेत विराट् राजा से पूजा पाकर कृष्णचन्द्रसहित कुरुक्षेत्रमें धृतराष्ट्र के पुत्रादिकों से बड़ाभारी युद्धकर भीष्म पितामह द्रोणाचार्य कृपाचार्य शल्य कर्णादि बहुत पराक्रमवालों से व नानादेशों से आयेहुये अनेक क्षत्रियों व राजपुत्रों सहित दुर्योधनादि धृतराष्ट्र के पुत्रों को मारकर अपना राज्य पाकर धर्म से राज्य का पालन करके आनन्दित होकर अपने भाइयों समेत स्वर्गको चले गये ३ अर्जुनके सुभद्रा में अभिमन्यु हुये जिन्होंने भारत के युद्ध में चक्रव्यूह में प्रवेशकरके अनेक राजाओं का वध किया ४ अभिमन्यु के उत्तरामें परीक्षितजी हुये इनको वनजाने के समय युधिष्ठिरजी ने राज्याभिषिक्त किया था बहुत दिनों तक राज्य करके ये स्वर्ग में जाय क्रीड़ा करनेलगे ५ परीक्षित के मातृमती में जनमेजय हुये जिन्होंने ब्रह्महत्या मिटाने के लिये व्यास के शिष्य वैशम्पायन से आद्यन्त सब महाभारत श्रवण किया ६ व धर्मसे राज्य करके जो स्वर्ग को चले गये जनमेजय के पुष्पवती में शतानीक हुये ७ वे धर्मसे

राज्य करतेहुये संसार दुःख से विरक्त होकर शौनक के उपदेशसे क्रियायोग करके सकल लोकनाथ श्रीविष्णु जी की आराधना करके निष्काम हो वैष्णवपद को प्राप्तहुये शतानीक के फलवती में सहस्रानीक हुये ८ वे बाल्यावस्थाही में राजा हुये पर नरसिंहजी के अत्यन्त भक्तिमान् हुये इनका चरित पीछेसे कहेंगे ९ सहस्रानीक के मृगवतीमें उदयन हुये वेभी धर्मसे राज्य करके नारायण की आराधनाकर उनके पुरको गये १० उदयन के वासवदत्ता में नरवाहन हुये वे न्यायपूर्वक राज्य करके स्वर्गको गये नरवाहनके अश्वमेधदत्ता में क्षेमक हुये ११ वे राज्यमें टिके हुये प्रजाओं का परिपालन करके जगत् म्लेच्छप्राय होजाने पर ज्ञान के बलसे कलाप ग्राम में जाकर स्थित हुये ॥ १२ ॥

चौपैया ॥

जो श्रद्धाकरिकै निजचित धरिकै सुनै चरित्र अनूपा।
हरि में रतिपावै निज मन भावै बहुरि होय नरभूपा॥
सन्तति सुखहोई सब दुख खोई सब शुभकर्म सँवारै।
पुनि स्वर्गनिवासी सबसुखरासी ह्वै कै पापसँहारै॥१३॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेसोमवंशानुकीर्त्तननामैकोनत्रिंशोऽध्यायः॥ २९॥

वंशानुचरितंसमाप्तम् ॥

तीसवां अध्याय॥

दो० तिसयें महँ भूगोल की, गाथाकही विशेख।
जाहि लखे सब सत्यही, सुभै पुराने लेख॥१॥

सूतजी बोले कि, हे द्विजसत्तम! इसके पीछे अब हम भूगोल का वर्णन करते हैं जोकि नदी व पर्वतों से आकीर्ण है परन्तु हम संक्षेपरीतिही से कहेंगे १ जम्बू, प्लक्ष, शाल्मलि, कुश, क्रौञ्च, शाकव पुष्करनामों से प्रसिद्ध सातद्वीप हैं, उनमें जम्बूद्वीप लक्षयोजन का है इससे दूना प्लक्ष व उसका दूना शाल्मलि ऐसेही और भी यथाक्रम दूने २ अधिक हैं लवण, सुरा, घृत, दधि, दुग्ध, स्वच्छोदक नाम परस्पर दूने दूनों सात समुद्रों से वे द्वीप घिरे हुये हैं २ जो मनु के पुत्र महाराज प्रियव्रत नाम हुये हैं वे सप्तद्वीपवती पृथ्वी के अधिपति हुये हैं उनके अग्नीध्रादिक दशपुत्र हुये थे ३ उनमें तीन संन्यासी होगये शेष सातों को सातोद्वीप उनके पिता ने देदिये उनमें जम्बूद्वीप के स्वामी अग्नीध्र के नव पुत्र हुये ४ उनके नाभि, किम्पुरुष, हरिवर्ष, इलावृत, रम्य, हिरण्यक, कुरुभद्र व केतुमान् नवपुत्र हुये जब उनके पिता वनको जाने लगे तो अपने नवपुत्रों को नवखण्ड देगये अग्नीध्र के पुत्र नाभि इस हिमालय के दक्षिणवाले खण्ड के स्वामी हुये इन नाभि के ऋषभदेव नाम पुत्र हुये ५ ऋषभदेव के भरत भरत ने इसे बहुत दिनों तक पालन किया इससे इस खण्डका भारतनाम हुआ इलावृतखण्ड के बीच में सुवर्णमय मेरुनामपर्वत है यह चौरासी सहस्रयोजन ऊँचा है व

सोलहसहस्र योजन पृथ्वी में गड़ाहुआ है व बत्तीस सहस्रयोजन ऊपर चौड़ा है ६ इसके ऊपर मध्य में ब्रह्माजीकी पुरी है व पूर्वदिशा में इन्द्र की अमरावती पुरी है आग्नेयकोण में अग्नि की तेजोवती पुरी है दक्षिण में यमराज की संयमनीपुरी नैर्ऋति में निर्ऋति की भयंकरीपुरी पश्चिम में वरुण की विश्वावती वायव्य में वायु की गन्धवती उत्तर में सोम की विभावरी व यह नवखण्डों सहित जम्बूद्वीप पुण्यपर्वत व पुण्यनदियों से संयुक्त है ७ किम्पुरुषादि आठखण्ड पुण्यवानों के भोग करने के स्थान हैं साक्षात् यह भारतवर्ष कर्मभूमि है व इसीमें चार वर्णों के लोग बसते हैं ८ इसी में कर्म करने से मनुष्य स्वर्गपाते हैं व पावेंगे व मुक्ति भी निष्कामकर्म करने से इसीखण्डवाले पाते हैं जो कि ज्ञान कर्म करते हैं ९ व पापकरनेवाले यहां से नरक को भी जाते हैं जो पापकारी हैं वे जानो कि कोटिशः वर्षतक भूमि के नीचे नरक में रहते हैं १० अब सातकुल पर्वत कहते हैं महेन्द्र, मलय, शुक्तिमान्, ऋष्यमूक, सह्यपर्वत, विन्ध्य, पारियात्र ये इतने भारत वर्ष में कुल पर्वत हैं ११ व नर्मदा, सुरसा, ऋषिकुल्या, भीमरथी, कृष्णा, वेणी, चन्द्रभागा, ताम्रपर्णी ये सात नदियां गङ्गा, यमुना, गोदावरी, तुङ्गभद्रा, कावेरी, सरयू ये महानदियां हैं इससे सब पापों को मिटाती हैं १२ जम्बू के नाम से यह जम्बूद्वीप विख्यात है व लक्षयोजन का है उसमें यह भारतखण्ड सब से श्रेष्ठ है १३ प्लक्षद्वीपादि पुण्यदेश हैं उनमें जो निष्काम

होकर अपने धर्म से नरसिंहजी की पूजाकरते हैं वे वहां बसते हैं व अधिकार क्षय होने पर मुक्तिको पाते हैं १४ जम्बूद्वीप से लेकर स्वादु जलवाले सातवें समुद्र के वीचमें जितनी भूमिहै उतनी ऐसी है शेष सुवर्णमयी है उसके आगे लोकालोक पर्वतहै बस यही भूर्लोक कहाता है १५। १६ अब महापुण्यदायक स्वर्गस्थान हम कहते हैं सुनो वह भारत में पुण्य किये हुये लोगोंके लिये है व देवताओं के लियेभी १७ व पृथ्वी के मध्यमें सब पर्वतों का राजा अतिप्रकाशित सुवर्ण का सुमेरु पर्वतहै यह चौरासी सहस्रयोजन ऊंचा है १८ व सोलहसहस्रयोजन यह पर्वत पृथ्वी के भीतर प्रविष्ट है व उसके सब ओर सोलह २ सहस्रयोजन पृथ्वी है १९ इस पर्वत के तीनश्रृंग हैं उन्हींके ऊपर स्वर्ग टिका है नाना प्रकार के वृक्ष व लताओं से युक्त व नाना प्रकारके पुष्पोंसे शोभित २० मध्यम पश्चिम व पूर्व मेरु के तीनों श्रृंगहैं मध्य का श्रृंग स्फटिकमणि व वैदूर्यमणि का है २१ व पूर्ववाला इन्द्रनीलमणि का पश्चिमवाला माणिक्य का है बीचवाला श्रृंग चौदह लक्ष एकसहस्रयोजन ऊंचा है २२ बस ठीक २ स्वर्ग इसी पर प्रतिष्ठित है यह श्रृंग प्रकाशित नहीं है क्योंकि इसीके ऊपर छत्राकार स्वर्ग है २३ इससे पूर्व उत्तर आदि दिशाओं के श्रृंगों से मध्यवाले में अन्तर है व स्वर्ग में इन्द्रादिक देवगण और अप्सरा रहती हैं २४ स्वर्गके मध्यवाले श्रृंग पर आनन्द व प्रमोद रहते हैं व श्वेतवर्ण पुष्टिकरनेवाला स्थान व उपशोभन और

काम २५ आह्लाद स्वर्गके राजा इन्द्र ये सब पश्चिम-वाले शृंग पर रहते हैं व निर्मम निरहंकार सौभाग्य अतिनिर्मल २६ व स्वर्ग भी हे द्विजश्रेष्ठ ! ये सब पूर्व-वाले शृंगपर रहते हैं इक्कीस स्वर्ग सुमेरुके ऊपर टिके रहते हैं २७ अहिंसा व दान करनेवाले यज्ञों व तपों के करनेहारे ये सबलोग स्वर्गों में रहते हैं तथा जो लोग क्रोधरहित होतेहैं वेभी २८ व जो लोग जल में प्रवेश करने में आनन्द समझते हैं व अग्नि तापने में अति हर्षित होते हैं पर्वतपर से गिरने में सुख समझते व समर को निर्मल स्थान समझते २९ मरण के बहुत दिन प्रथम जो संन्यासधारण करतेहैं ये सब मरने पर स्वर्गहीको जातेहैं उनमें यज्ञकरनेवाला नाक पृष्ठ को जाता व अग्निहोत्र करनेवाला वहां जाता जहां से फिर नहीं फिरता ३० तड़ाग खुदानेवाला व कूप खुदानेवाला पौष्टिकस्थान में बसता है सुवर्ण देनेवाला सौभाग्य पाता है व तपवाला स्वर्ग पाताहै ३१ शीतकाल में जो पुरुष सब प्राणियों के हित के लिये बहुत अग्नि का ढेर अर्थात् अलाव लगादेताहै वह आप्सरस स्वर्गको पाताहै ३२ सुवर्ण व गोदानकरनेवाला निरहंकारनाम स्वर्गकोजाताहै व शुद्धभूमि दानकरनेसे शान्तिकनाम स्थान को जातेहैं ३३ चांदी देनेसे मनुष्य निर्मलनाम स्वर्गको जाताहै अश्वदान करनेसे पुण्याहनाम स्वर्गको जाता है व कन्यादान करने से मङ्गलनाम स्वर्गको जाता ३४ व जो ब्राह्मणों को प्रथम भोजन से तृप्तकराके फिर वस्त्रदानकरता है वह श्वेतनाम स्वर्गको जाता है

जहां जाकर फिर कभी शोच नहीं करता ३५ कपिला गोदान करनेसे परमार्थनाम स्वर्गमें जाकर पूजित होता है बैलदान करने से मन्मथनाम स्वर्ग को पाता है ३६ व जो माघमास में नियम से किसी नदी में स्नान करताहै व तिलधेनु दानकरताहै छाता व जूता दानकरता है वह उपशोभननाम स्वर्ग को जाताहै ३७ जो पुरुष देवमन्दिर बनवाता व जो ब्राह्मणों की सेवा करता है तथा जो तीर्थयात्रा कियाकरताहै वह स्वर्गराज में जाकर पूजित होताहै ३८ व जो मनुष्य सदा एकही अन्न भोजन करता है वा नित्य रात्रिही में भोजन करता है वा त्रिरात्रादि व्रतकरताहै पर शान्तचित्त रहताहै व्याकुल नहीं होजाता वह शुभनाम स्वर्गको जाता है ३९ व जो नित्य नदी ही में स्नान करता जो सदा क्रोध को जीतेरहता है जो ब्रह्मचर्यको धारणकिये दृढव्रत रहता वह निर्मल नाम स्वर्ग को जाता है व जो सदा प्राणियों का हित ही किया करता है वह भी ४० विद्यादान करने से मेधावी पुरुष निरहंकारनाम स्वर्ग को जाताहै व जिस २ अभिप्राय से जो २ दानदेता है ४१ उसी २ स्वर्ग को जाता है मनुष्य जिस २ की इच्छा करता है संसार में चार अतिदान हैं कन्यादान गोदान भूमिदान व विद्यादान ४२ ये सब दान नरक से उद्धारकरते हैं व सरस्वती जपनेसे धेनु दुहने से व पृथ्वी आरोहण करने से भी नरक से उद्धारती है जो कोई सब दान ब्राह्मणों को देतेहैं ४३ वे अनामय शान्तनाम स्वर्ग को पाकर फिर कभी वहां से निवृत्त नहीं होते पश्चिमवाले शृंग

पर ब्रह्माजी सदा स्थिर रहते हैं ४४ व पूर्ववाले श्रृंग पर श्रीविष्णु भगवान् आप टिकेरहते हैं व बीचवाले श्रृंगपर महादेवजी हे विप्रेन्द्र! इसके पीछे अब स्वर्ग का मार्ग बताते हैं सुनो ४५ सब मार्ग विमल विपुल शुद्ध आदिके नामों से प्रसिद्ध हैं व एक दूसरे के ऊपर २ हैं प्रथममार्ग में सनत्कुमार दूसरे में माता ४६ तीसरे में सिद्ध व गन्धर्वलोग चौथे में विद्याधर पांचवें में नागराज छठें में गरुड़जी ४७ सातवें में दिव्यपितर आठवें में धर्मराज नववें में दक्ष दशवें में सूर्य ४८ इस भूर्लोक से लक्षयोजन पर तक सूर्यदेव तपते रहते हैं व दो सहस्रयोजन का सूर्यका रथहै ४९ व सूर्यका जितना बिम्ब है उससे तीनगुना परिणाह अर्थात् उसके बांधने की रस्सी है व जब सूर्य अर्धरात्र के मध्याह्न में सोमकी विभावरी में पहुँचतेहैं ५० तो महेन्द्र की अमरावतीपुरी में भी टिके रहते हैं व जब मध्याह्न के समय अमरावती में भास्कर रहते हैं तब यमराज की संयमनीमें उदित दिखाई देते हैं ५१ व जब सूर्य सुमेरु की प्रदक्षिणा करते हुये शोभित होतेहैं तो ध्रुव के नीचे रहकर बालखिल्यादिकों से स्तुतिकिये जाते हैं॥ ५२॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेभूगोलकथने त्रिंशोऽध्यायः॥ ३०॥

इकतीसवां अध्याय॥

दो० इकतिसयेंमहँ ध्रुवचरित, सूतकह्यो सविधान।
जासु सुने हरिजनन के, होत सकल कल्यान॥१॥

इतना वृत्तान्त सुनकर भरद्वाजजीने प्रश्न किया कि ध्रुव कौन हैं व किसके पुत्र हैं व सूर्य के भी आधार कैसे हुये इस बातको बहुत विचार करके तो कहिये हे सूत ! तुम सौवर्ष जीवो सूतजी कहने लगे कि स्वायम्भुवमनु के उत्तानपादनाम पुत्र हुये हे द्विज ! उनके दो पुत्र हुये १ सुरुचिनाम स्त्रीमें श्रेष्ठ उत्तमनाम पुत्र हुआ २ सुनीतिमें छोटे ध्रुवजी हुये एक समय राजा उत्तानपाद सभा के मध्य में बैठेथे २ सुनीति ने अपने पुत्र ध्रुव को अलंकृतकरके राजा की सेवा करनेको भेजा तब ध्रुवजी ने राजकुमारों के खेलाने व दूधपिलानेवालियों के पुत्रों के साथ ३ जाकर महाराज उत्तानपादजी के प्रणामकिया देखा तो पिता की गोद में उत्तमजी सुरुचि के पुत्र बैठेथे ४ ध्रुवने भी बाल्यावस्था की चपलता से चाहा कि सिंहासनपर चढ़ के हम भी महाराज की गोद में बैठें उनको ऐसा देख सुरुचि ध्रुवजी से बोली ५ कि हे दुर्भगाके पुत्र ! क्यों राजा के गोद में बैठना चाहता है तू अभी बालक है इससे अनरपन के कारण नहीं जानता कि मैं अभाग्यवती के पेट से उत्पन्न हूँ ६ इस सिंहासन पर बैठने के लिये तूने कौनसा पुण्य का कर्म किया ७ यदि कुछ पुण्य कर्म किया होता तो क्यों दुर्भगा के उदरसे उत्पन्न होता इस अनुमान से अपनी स्वल्पपुण्यता को जान ८ यद्यपि तू राजकुमार हुआ पर हमारे उदर से क्यों न हुआ अये सुन्दरी कोखिसे उत्पन्न इन उत्तम को देख जोकि राजा की जानुओंपर बैठे मानसे बढ़रहे हैं ९ सूतजी बोले कि

राजसभा के बीच में सुरुचि ने ध्रुवजी को इस प्रकार तिरस्कृत किया १० नेत्रों से अश्रुपात तो होनेलगे पर धैर्य से ध्रुवजीने कुछ न कहा व राजाने भी उचित अनुचित कुछ न कहा ११ क्योंकि राजा अपनी सुनीतिनाम अति सौभाग्यवती स्त्री के गौरव से बँधाथा व इसीसे सब सभाके लोगों ने भी ध्रुव का विसर्जनहीं किया पर वे अपने बालपनसे शोक को छोड़कर १२ वे महाराजकुमार महाराज के प्रणाम करके अपने मन्दिर को चलेगये व नीति के स्थान अपने बालक ध्रुवजी को देख सुनीति ने १३ मुख का चिह्नही देखकर जान लिया कि राजा ने ध्रुव का अपमान कियाहै व ध्रुवजी भी एकान्त में बैठीहुई अपनी माता सुनीति को देख कर १४ बड़ी ऊँची सांसभरके व लपटकर बड़े ऊँचे स्वर से रोदन करनेलगे तब समझाकर व वस्त्र से मुख पोंछ कर सुनीति १५ अपने अञ्चल से पवन संचारकर व कोमल हाथ से भी सुहुराकर पुत्र से पूछनेलगी कि पुत्र रोदन करने का कारण बताओ १६ राजा की विद्यमानता में प्राणप्रिय तुम्हारा अपमान किसने किया ध्रुवजी बोले कि हे मातः! हम तुमसे पूछते हैं कि हमारे आगे अच्छीतरह कहो १७ पुरुषों का स्त्रियों में तो सामान्य सम्बन्ध होता है फिर सुरुचि राजा को क्यों अधिक प्रिया है व आप राजा को कैसे प्रिय नहीं हैं १८ सुरुचि का पुत्र उत्तम कैसे उत्तमता को प्राप्त हुआ कुमारता में भी सामान्यताही होती फिर हम कैसे उत्तम नहीं हैं १९ व तुम कैसे मन्दभाग्या हो

और सुरुचि की कोखि कैसे सुन्दरी ठहरीकड़े पीछे कर
कैसे तो उत्तम के योग्य ठहरा व कैसे हहा कि हे पुत्र !
है २० हमारा पुण्यकर्म तुच्छ कैसे करुणावरुणालय
कैसे उत्तम है यह नीतियुक्त वचन अकरें ४० सूतजी
कर सुनीति २१ कुछ ऊधीसांस भरके कर बल परा-
शोक की शान्ति के लिये धीरे से स्वभावर्ग दिखाये
वाणी थी पर और भी मधुर वाणीसे कहने क छोटे
हुई २२ सुनीति बोली अयितात, महाबुद्धे ! विशु-
अन्तःकरण से कहती हूँ सुनो अपमान की ओर मति
न करो २३ उसने जो कहा है सब सत्य है मिथ्या कुछ
भी नहीं है जो वही रानी सब रानियों में राजा को
अधिक प्रिय है तो २४ महासुकृत के सम्भारों से उ-
त्तम उदर में उत्पन्न होने से उत्तम उत्तम है व पुण्यवती
के पेट से उत्पन्न होनेही के कारण राजसिंहासन के
योग्यभी वही है २५ परन्तु चन्द्र के समान श्वेतछत्र
व सुन्दर द्र चामर व उच्चभद्रासन मतवाले हाथी २६
शीघ्रगामी तुरंग आधि व्याधिरहित जीवन शत्रुरहित
सुन्दरराज्य ये सब पदार्थ श्रीविष्णुजी के प्रसाद से
मिलते हैं २७ सूतजी बोले कि, सुनीति अपनी माता
का ऐसा निन्दारहित वचन सुनकर सुनीति के पुत्र
ध्रुवजी उत्तर देने लगे २८ ध्रुवजी बोले हे उत्पन्न करने
वाली, सुनीतिजी ! हमारा सुस्थिर वचन सुनो हम
जानते थे कि बस अब उत्तानपाद से और कोई कहीं
नहीं है २९ परन्तु हे मातः ! जो और भी कोई इच्छा
पूरी करनेवाला है तो हम सिद्ध हुए अब क्या है आज

राजसभा के बीचाधना करने के योग्य उन जगत्पति की
तिरस्कृत किया १० ३० जो औरों को बड़े दुःख से भी
धैर्य से ध्रुवजीने कुनहीं है वह पद जानों हमको प्राप्तही
चित कुछ न कहा ब! एक हमारा सहाय करो ३१ अव
अति सौभाग्यवन्हो जिससे हम श्रीविष्णु भगवान् की
सब सभाके ने सुनीति बोली कि, हे पुत्र! हम तुमको
वे अपने नहीं देसकीं ३२ क्योंकि अभी तुम सातही
कम्याठवर्ष के हो इससे क्रीड़ा करनेही के योग्य हो व
तुम्हीं अकेले हमारे तनय हो इससे हमारा जीवन तु-
म्हारेही अधीनहै ३३ बड़े २ कष्टों से बहुत देवताओं
की आराधना से तुमको हमने पाया है इससे जब २
तुम तीन चार पैर चलकर भी खेलने जातेहो ३४
तब २ हे तात! हमारे प्राण तुम्हारे पीछेही पीछे जाते
हैं ध्रुवजी बोले कि, आज तक तो तुम हमारी
माता थीं व पिता महाराज उत्तानपादजी पर अब
आज से हमारे माता पिता श्रीविष्णु भगवान् हैं इसमें
संदेह नहीं है ३५ सुनीति बोलीं कि, हे पुत्र! विष्णु
की आराधना करनेके विषय में हम तुमको नहीं रो-
कतीं क्योंकि जो हम तुमको रोकें तो हमारी जिह्वा के
सौ खण्ड होजायँ ३६ इस वचनको आज्ञाहीके समान
मानों पाकर व माता के चरणाम्बुजों में प्रणाम कर व
परिक्रमण करके ध्रुवजी तप करनेके लिये चलेगये ३७
व उन सुनीतिजीने भी धैर्यके सूत्रसे गुम्फित करके
कमल की माला ध्रुवके लिये उपायन अर्थात् भेंटसी
करदी ३८ व माता ने उनके मार्गकी रक्षाके लिये पुर-

वासियों व आचार्योंके आशीर्वादों के सैकड़े पीछे कर दिये ३९ व अपने मुख से यह कहा कि हे पुत्र! शंख, चक्र, गदाधारी जगद्व्यापी करुणावरुणालय प्रभु श्रीनारायण सब कहीं तुम्हारी रक्षाकरें ४० सूतजी बोले कि, अपने राज धवरहरसे निकलकर बल पराक्रमी बालक ध्रुवजी अनुकूल पवन से मार्ग दिखाये हुये वनको चल दिये ४१ परन्तु अभी बहुत छोटे होनेके कारण माता ही उनकी देवतारही उसीके बताये मार्ग जानते थे इससे जहांतक राजमार्ग था वह तो उनका जानाही था जब आगे चले वनका मार्ग उन को जान पड़ा इससे महाराजकुमार ने एक क्षणमात्र ध्यान किया ४२ व नगर की फुलवाड़ी के निकट जाकर चिन्तना करनेलगे कि क्या करें कहां जायँ व कौन हमारा सहायक हो ४३ इस प्रकार नेत्र खोलकर जब देखा तो ध्रुवजी को अतर्कितगति सप्तर्षिलोग वनके निकट दिखाई दिये ४४ फिर सात सूर्यों के समान तेजस्वी सप्तर्षियों को देखकर जो कि मानों ध्रुवजी के भाग्य के सूत्रसेही खिंचेहुये आगये थे इससे ध्रुवजी परमानन्दित हुये ४५ वे लोग मस्तकों में तो तिलक लगाये हाथों की अँगुलियों में कुशों की पवित्री धारण कियेहुये मृगचर्म ओढ़े यज्ञोपवीतों से शोभित थे ४६ ऐसे ऋषियों को देख उनके निकट जाय कन्धाझुकाय हाथ जोड़ प्रणामकर ध्रुवजी ने ललित वचन कहकर विज्ञापित किया ४७ ध्रुव बोले कि, हे मुनिवरो! आप लोग हमको सुनीति के उदरसे उत्पन्न राजा उत्तानपाद

के ध्रुवनाम पुत्र जानो व हम गृह से उदासीन मन होकर आये हैं ४८ सूतजी भरद्वाजादिकों से बोले कि बलवान् स्वभाव से मधुर आकृति बहुमूल्य शिरोभूषणादि धारण किये कोमल व गम्भीर बोलते हुये उन बालक ध्रुव को देखकर ४९ व अपने समीप बैठाकर सब मुनिलोग विस्मित होकर उनसे बोले कि, हे वत्स! इसी अवस्था में गृह से उदासीन होनेका तुम्हारा कारण हम लोग नहीं जानते कि क्या है ५० बहुधा बिन अभिलाष पायेहुये मनुष्यों को गृहसे उदासीनता होजाती है सो तुम सप्तद्वीपवती पृथ्वी के महाराजके पुत्रहो इससे सब पदार्थ भोगनेको विद्यमान होंगे फिर गृहसे उदासीनता कैसे ५१ हमलोगों को क्या करना चाहिये व तुम्हारा मनोरथ क्याहै? ध्रुवजी बोले कि, हे मुनिलोगो! हमारा जो उत्तमनाम उत्तम भाई है ५२ पिताजी ने राजसिंहासन उसको दिया है सो उसके विषय में नहीं आपलोगों से हम यह साहाय्य चाहते हैं ५३ कि जिसको कभी और राजाने न भोग किया हो व अन्य सबों से ऊँचा स्थान हो व मनुष्यों को कौन कहे इन्द्रादि देवताओं को भी दुर्लभ हो वह पद कैसे मिले ५४ इस प्रकार के बालक के वचन सुनकर मरीच्यादि मुनिलोग यथार्थ ध्रुवजी से बोले ५५ उनमें मरीचिजी बोले कि विना गोविन्दजी के चरणकमलकी धूलिका रसलिये पुरुष अपने मनोरथके अनुकूल धनधान्यादि समन्वित फल नहीं पासक्ता ५६ फिर अत्रिजी बोले कि विना अच्युत भगवान् के चरणों

की पूजा कियेहुये इन्द्रादिकों को भी दुर्लभ व मनुष्यों को अप्राप्य स्थान किसी को कैसे मिलसक्ता है ५७ अङ्गिराजी बोले कि, जो पुरुष लक्ष्मीपति के मनोहर चरणों की सेवा करताहै उसको सब सम्पदाओं का भी पद दूर नहींहै ५८ पुलस्त्यजी बोले कि, जिसके स्मरणमात्रसे महापातकोंकी पंक्ति परमनाशको प्राप्त होती है हे ध्रुव! वे विष्णु सब कुछ देसक्के हैं ५९ पुलहजी बोले कि जिसको परम्ब्रह्म कहते हैं व प्रधान पुरुषसे भी पर कहते हैं व जिसकी माया से यह सब किया हुआ है कीर्तन करने पर वे श्रीविष्णु अर्थको देही देते हैं ६० क्रतुजी बोले कि जो वेदों के जानने के योग्य जनार्दन यज्ञपुरुष विष्णुजी हैं व इस जगत् के अन्तरात्मा हैं वे सन्तुष्ट होने पर क्या नहीं देते हैं ६१ वसिष्ठजी बोले कि, हे राजपुत्र! जिसकी भृकुटी के घूमने के वशीभूत अणिमादि आठो सिद्धियां हैं उन हृषीकेश की आराधना करने से अर्थ धर्म काम व मोक्ष चारो पदार्थ दुर्लभ व दूर नहीं हैं ६२ ध्रुवजी बोले कि हे द्विजेन्द्रो! आपलोगों ने विष्णु के आराधन के लिये सत्य कहा उन भगवान् का आराधन कैसे किया जाता है उसकी विधि कहिये ६३ यह हम जानते हैं कि जो बहुत कुछ देता है वह दुराराध्य भी होता है पर एक तो बालक दूसरे राजकुमार इससे दुःख हम नहीं सहसक्के ६४ मुनिलोग बोले कि, स्थिर चलते सोते जागते लेटेहुये उठकर बैठेहुये पुरुष सदा नारायणको जानसक्के हैं ६५ वासुदेव भगवान् को जपता हुआ पुरुष पुत्र स्त्री मित्र

राज्य स्वर्ग व मोक्ष सर्व कुछ पाता है इसमें संशय नहीं
है ६६ वासुदेवजी के द्वादशाक्षर मन्त्र से चतुर्भुज विष्णु
का ध्यान करता हुआ पुरुष कौन सिद्धि को नहीं प्राप्त
हुआ ६७ राज्य की कामना से इस मन्त्र की उपासना
ब्रह्माजी ने व परम वैष्णव स्वायम्भू मनुजी ने भी की
है ६८ इससे तुमभी इसी मन्त्र को जपतेहुये वासुदेव में
तत्पर होओ तो मनोवाञ्छित सिद्धि शीघ्रही पाओगे ६९
इतना कहकर सब महात्मा मुनीश्वरलोग तो अन्तर्धान
हुये व वासुदेव में मन लगाकर ध्रुवभी तपकरने को
वनको चलेगये ७० सूतजी बोले कि, ध्रुवजी सब
अर्थदेनेवाले उस मन्त्र को जपते हुये यमुनाजी के तीर
पर मधुबन में मुनियों के बताये हुये मार्गसे तपकरने
लगे ७१ व श्रद्धा से जपकरने से व तप के प्रभाव से
दिव्यआकृति कियेहुये कमलनयन व हृदय के स्वामी
श्रीविष्णु भगवान् को राजकुमार ने देखा तब मारे हर्ष
के फिर उसी मन्त्र को जपा ७२ क्षुधा पिपासा मेघ प-
वन व उष्णताआदि शरीर के दुःखों के समूह कुछ भी
तपकरने के समय राजकुमार ने नहीं जाना व शरीर
कीभी वार्त्ता नहीं जानी क्योंकि उपमारहित सुखसागर
में उनका मन मग्नहोगया था ७३ व शङ्कितचित्त दे-
वताओं के उत्पन्न किये हुये विघ्नभी तीव्रतपकरतेहुये
बालक ध्रुव के सामने विफल हुये जैसे कि शीतआत-
पादि जो प्रसंग से होते हैं पर विष्णुमय मुनि को नहीं
धर्षितकरसक्के ७४ फिर भक्तजनों के प्रिय प्रभु विष्णुजी
जब ध्यान के बलसे उस शिशुसे सन्तोषितहुये तो वर

देनेवाले श्रीविष्णुजी गरुड़पर आरूढ़ होकर भक्त के देखने को आये ७५ व मणियों से जटित मुकुट से शोभित व विलसित रत्नसमूहों की छविसे विराजते हुये कैसे शोभित हुये थे जैसे उदयाचल के अहंकार से प्रातःकाल के सूर्यको धारण करके हिमालयपर्वत शोभित होता है ७६ व वे तप में स्थित राजकुमारसे निश्चल व स्निग्धदृष्टि से देखतेहुये बोले मानों अपने दांतों की चमक से ध्रुव के अंगों की धूलि को धोतेही से प्रसन्न होकर बोले ७७ कि हे वत्स! जो तुम्हारे मन में हो श्रेष्ठवर मांगो हम तुम्हारे तपसे सन्तुष्ट हैं व इन्द्रियों को जीतकर तुम्हारे ध्यान से प्रसन्नहुये व दुष्करमन के रोंकनेसे भी प्रसन्न हैं ७८ ऐसा गम्भीर वचन सुनतेहुये ध्रुवजीने जैसेही नेत्र खोले हैं कि एकाएकी भगवान् को देखा व विचारने लगे कि इसीरूप की चिन्तना हम करते थे वही चतुर्भुजी ये हैं ७९ भगवान् को देखकर महाराजकुमार विचारने लगे कि तीनों वेदों के ईशको राजकुमार बाल हम कैसे वर्णन करें व क्याकरें ऐसा विचार कर न तो कुछ बोले न कुछ किया केवल मारे हर्ष के आंशु बहाते हुये हे त्रिलोकनाथ! हम क्या करें यह कहकर रहगये व दण्डप्रणाम करनेके लिये हरिके आगे भूमिपर गिरपड़े ८० व फिर दण्डवत् प्रणामकरके व सबओर लोटकर उन जगत्गुरु को देखकर रोदन करनेलगे देखा तो नारद सनक सनन्दन सब स्तुति कररहे थे व और भी सनत्कुमारादि योगी योगियोंके स्वामी हरि की स्तुति

करते थे ८१ तब उन करुणासागर श्रीविष्णुभगवान् जी ने अपने करकमल से ध्रुवको उठाया ८२ श्रीहरि ने फिर धूलिलगाये हुये अंग के ध्रुवजी को अपने दोनों हाथों से स्पर्श किया व छाती में लपटाकर बोले ८३ हे बालक! जो तेरे मनमें हो वर मांग वही हम देंगे इसमें संदेह नहीं है क्योंकि तुझे कुछभी अदेय नहीं है ८४ तब राजकुमार ने वर मांगा कि प्रथम तो आपकी स्तुति करने की हमको शक्ति हो तब ध्रुव के मुखमें श्रीभगवान्जी ने शंख से स्पर्शकरदिया ८५ शंखके मुख में लगतेही सुर मुनिके दिये हुये ज्ञानचन्द्र के समान ध्रुवका चित्त ज्ञान से पूर्णहोगया क्योंकि त्रिभुवन के गुरु श्रीभगवान् के शंख का स्पर्शहुआ बस हृदय प्रफुल्लित हो आया श्रीहरि की स्तुति करने लगे ८६ (ध्रुवजी बोले) सम्पूर्ण मुनिजन समूहों से नमित चरण खरके नाशक चपलचरित देवताओं से आराधित पादकमल सजल जलधर श्याम समान सौभपति के मालाओं के धाम अतिमनोहर स्त्रियोंकी अतिविनय से किये हुये नवरसों के रस से अपहृत इन्द्रिय देवताओंकी स्त्रियोंसे विहित अन्तःकरण के आनन्दवाले आदि अन्त रहित धनरहित अपने द्विज मित्रों के उद्धार करनेमें धीर देवराजके तिरस्कार करने वाले दैत्य राक्षसादि शत्रुओं के पक्षनाशक ऋक्षराज के बिलमें प्रवेशकरके स्यमन्तक मणि लाकर निज अपवाद के पाप मिटाने से तीनोंलोकों के भारहरनेवाले द्वारका में बास करने में निरत मधुर मध्यम स्वरसहित

वंशी बजाने से श्रवणों में अतीन्द्रियज्ञान प्रकट करने वाले यमुनाके तटपर विचरतेहुये आप मृग पशु पक्ष्यादिकोंके आहार छुड़ानेवाले संसार दुस्तर सागरके तारने के लिये चरणकमल जहाजवाले अपने प्रतापाग्निमें काल का वेग हवन करनेवाले श्रेष्ठ वनमालाधारी व मणि जटित कुण्डलों से कर्णों को भूषित किये व नाना प्रसिद्धनामोंवाले वेददेव मुनिजन के वचन मनमें चलने वाले पीताम्बर रेशमी वस्त्र धारण करनेवाले भृगुपद कौस्तुभमणि से भूषित वक्षस्स्थलवाले अपने प्रिय अक्रूर निजजननी गोकुलपालक होनेकेलिये चतुर्भुजों में शंख चक्र गदा पद्म तुलसी नवदलदाम युक्तहार केयूर कटक कंकण मुकुटादिकों से अलंकृत सुनन्दनादि भागवतों से उपासित विश्वरूप पुराण पुरुषोत्तम उत्तमश्लोक लोकों के आवास वासुदेव श्रीदेवकीजठरसम्भूत सब प्राणियों के पति ब्रह्मा से भी नमस्कार करानेवाले चरणवाले वृन्दावन में क्रीड़ा करनेसे गोपिकाओं के श्रमके नाशनेवाले निरन्तर सुजनों के काम सिद्ध करनेवाले कुन्दसमश्वेत शंख धारण करनेवाले चन्द्रसम मुखवाले सुन्दर सुदर्शनवाले उदारतरहास वाले विद्वज्जनों से वन्दित यह रूप तुम्हारा अतिमनोहरहै हे अखिलेश्वर ! तुम्हारे नमस्कार है हे भगवन् ! अच्छा स्थान पानेकी इच्छासे मैं तप करने में स्थित हुआ उसमें साधु मुनीन्द्रोंकोभी गुह्य आपके दर्शन हुये यह वैसीही बातहुई जैसे कोई काल ढूंढ़ने जाय व मणि पाजाय हे स्वामिन ! बस मैं कृतार्थ होगया और

कुछभी वर नहीं मांगता ८७ हे नाथ! मैंने अपूर्व आप के चरणकमल देखे व देखकर अब नहीं छोड़सक्ता इसीसे कुछ कामोंकी भी इच्छा नहीं करता क्योंकि ऐसा कौन मूढ़ है जो कल्पवृक्ष से भूसी मांगे ८८ अब मोक्ष के बीज आप के शरण में आकर बाहर के सुख नहीं भोगसक्ता क्योंकि हे नाथ! जिसका नाथ रत्नोंकी खानि हो उसको काचके भूषण धारण करना उचित नहीं है ८९ इससे हे ईश! अब अन्यवर नहीं मांगता केवल निरन्तर आपके चरणारविन्दों की भक्तिहो बस यही वर दीजिये बार २ यही आपसे मांगताहूं ९० सूतजी बोले कि इस प्रकार अपने दर्शन से दिव्यज्ञान पाये हुये ध्रुवजी से ऐसाकहतेहुये श्रीभगवान् बोले कि ९१ विष्णु की आराधना करकेभी इसने क्या पाया जनोंमें भी यह बाद न हो इससे पर उत्कृष्ट स्थान कि जिसके लिये तुमने तप किया था उसे प्राप्त होओ व समय पाकर शुद्धभाव से हमको प्राप्त होओगे ९२ तुम सब सूर्यादि ग्रहों के आधारभूत रहोगे व कल्पद्रुमरूप सब जनोंके वन्दनाकरनेके योग्य होओ व तुम्हारी माता सुनीतिभी हमारे प्रसाद से हमारे निकट जाकर बसेगी ९३ सूतजी बोले कि इस प्रकार ध्रुव को वरदान देकर भगवान् मुकुन्दजी अपने धाम को चलेगये व बार २ अपने भक्त को फिर २ देखते जाते थे ९४ तबतक देवताओं व मुनियों सिद्धों के समूह ने श्रीविष्णु व उन के भक्त के समागम को देख पुष्पों की वर्षा की व मारे हर्षके ध्रुव की स्तुति की ९५

व सब कहनेलगे कि यह सुनीति का पुत्र सबशोभाओं व लक्ष्मी से युक्तहुआ व हमलोग देवताओं से भी वन्दित हुआ जो कि कीर्तनकरने व दर्शनकरने से मनुष्यों के यश व आयुर्दाय को बढ़ावेगा ९६ इस तरह ध्रुवजी ने दुरापहारिका पद पाया यह कुछ आश्चर्य की बात नहीं है क्योंकि जब वे देवता व ब्राह्मणों के ऊपर कृपाकरनेवाले प्रसन्न होजाते हैं तो कुछभी दुर्लभ नहीं रहता ९७ सूर्यके मण्डल के प्रमाण से दूना चन्द्रमण्डल है व चन्द्रमण्डल से दो लक्ष योजन पर नक्षत्रमण्डल है ९८ व नक्षत्रमण्डल से दो लक्ष योजन ऊंचे बुध का स्थान है व बुध से दो लक्ष योजन पर शुक्राचार्यका स्थान है ९९ व शुक्रसे दोलक्ष योजन ऊंचे मङ्गलका स्थान है व मङ्गलसे दो लक्ष योजन पर बृहस्पतिजीका व बृहस्पतिसे दोहीलक्ष योजन ऊंचे शनैश्चर का स्थान है १०० व उस शनैश्चर के स्थान से लक्षयोजन पर सप्तर्षियों कास्थान है व सप्तर्षियोंसे एक लक्षयोजन ऊंचे ध्रुवजी का स्थान है १०१ ये ध्रुवजी सब ज्योतिश्चक्र के मेढीभूत हैं अर्थात् मध्यमें सब से ऊपर ये हैं व सूर्यादिग्रह सब इनकी प्रदक्षिणा करते हैं व अपने स्वभावही से प्रकाशित रहते हैं व तीनोंलोकों के काल की संख्या प्रत्येक युग में किया करते हैं१०२ जन तप सत्य इन तीनलोकों में प्रकाश ब्रह्माजी की आज्ञा से ध्रुवजी कियाकरते हैं १०३ व इनके नीचे वाले भूर्लोकतकके चारलोकोंमें सूर्य अपने किरणों से प्रकाशकरते हैं क्योंकि विष्णु भक्ति से विहीन होनेके

कारण इनका प्रकाश जनादि लोकोंमें नहीं होता १०४ यों तो सूर्य तीनोंलोकों के कर्त्ता हैं व अनन्त सब मण्डलों के ऊपर दिखाई देते हैं १०५ आदित्यके मण्डलके नीचे भुवर्लोक प्रतिष्ठित है व तीनोंलोकोंकी ईश्वरता श्रीविष्णुजीकी दीहुई इन्द्रको मिली है १०६ इससे सबलोकपालों के साथ धर्मपूर्वक लोकोंकी इन्द्र रक्षा करते हैं व स्वर्गलोक में बसेरहते हैं १०७ हे मुनिसत्तम! इस भूलोकके नीचे पाताललोक है वहां न सूर्यतपते न रात्रि होती न चन्द्रोदय होता है १०८ दिव्यस्वरूप में टिककर सबजन अपने आप तपते हैं इससे जितने पातालस्थ हैं वे सब अपनेही तेजसे प्रकाशित रहते हैं १०९ व स्वर्लोकसे महर्लोक कोटि योजन ऊंचे विराजमान है व महर्लोक से उतनीही दूर ऊपर दूनेमण्डल से जनलोक शोभायमान है यह पांचवां लोक है ११० इससे ऊपर चारकिरोड़ योजन पर तपोलोक है व स्वर्लोक से आठकिरोड़ योजन ऊंचे सत्यलोक विराजमान है १११ सबछत्र के आकार के हैं व सब एक दूसरेके ऊपर स्थित हैं इसी सत्यलोकही को ब्रह्मा का लोक कहते हैं ११२ ब्रह्मा के लोकसे श्रीविष्णुलोक प्रमाणमें भी दूना है व जितनी दूर पर यहां से ब्रह्माका लोक है उतनी दूर और ऊँचे वहां से श्रीविष्णुलोक है ११३ इस वराहकल्पमें उसका सर्वोपरि माहात्म्य है उस विष्णुलोक के ऊपर परमपुरुष रहता है ११४ यह परम पुराणपुरुष ब्रह्माण्डसे निर्लेप है क्योंकि वह तपोज्ञान समन्वित रहने के कारण इन

सब संसाररूप पशुपाशों से विमुक्त रहता है ११५ हे पापरहित भूगोल की संस्थिति यह हमने तुमसे कही जो कोई अच्छे प्रकार इसे जानता है वह परमगति को जाता है ११६ ॥

चौपैया ॥

नरदेवन पूजित गतसब दूषित लोकस्थापन कारी।
नरसिंहमहाना हरिभगवाना अप्रमेय श्रुतिधारी ॥
सव युग युग माहीं मूर्तिधराहीं विष्णु अनादि अनन्ता।
विश्वम्भरहैकै जनभयख्वैकै पालतजग भगवन्ता ॥ १।११७ ॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेएकत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३१ ॥

भूगोलस्समाप्तः ॥

बत्तीसवां अध्याय ॥

दो० बत्तिसयें अध्याय महँ, सहसानीक चरित्र।
सूतकह्यो मुनिजननसों, जो सबभांति विचित्र ॥ १ ॥

इतनी कथा सुनकर भरद्वाजमुनि ने सूतजी से फिर प्रश्नकिया कि शार्ङ्गी श्रीहरि के अवतार सहस्रानीक जीका चरित्र इस समय हम श्रवण किया चाहते हैं हे महामतिवाले! वह हम से कहो १ सूतजी बोले कि, हम तुमसे हरिके अवतार धीमान् सहस्रानीक का चरित कहते हैं हम से सुनो २ जब ब्राह्मणोत्तमोंने सहस्रानीकजीको उनके पिता के राज्यपर अभिषिक्त किया तो उन राजकुमार ने अपना राज्य बड़े धर्मसे पाला ३ वे धीमान् राजपुत्र जब धर्मसे राज्यकरनेलगे

तो उनकी भक्ति देवदेवेश सुरोंमें उत्तम नरसिंहजीमें हुई ४ उन विष्णु के भक्त राजा के देखने के अर्थ एक समय ब्रह्मपुत्र भृगुमुनि आये राजा अर्घ्यपाद्याचमनीयादिकोंसे उनकी पूजाकरके यह वचन मुनिसे बोले ५ कि हे मुनिश्रेष्ठ! हम इस समय तुम्हारे दर्शन से पवित्र हुये क्योंकि इस कलियुग में तुम्हारे दर्शन मनुष्यों को दुर्लभ हैं ६ हम देवदेव सनातन नरसिंहजी की स्थापना करके आराधना किया चाहते हैं उसका विधान हमसे कहो ७ व देवदेव श्रीविष्णु भगवान्जी के सब अवतारभी सुनाचाहते हैं वे सबपुण्य अवतार हमसे कहो ८ भृगुजी बोले कि, हे राजपुत्र! सुनो इस कलियुग में अति भक्तिमान् होकर कोई पुरुष नृसिंह हरिजी में भक्ति नहीं करता ९ पर जिसकी स्वभावही से सुरों में उत्तम नरसिंहजी में भक्ति होती है उसके शत्रु नष्ट होजाते हैं व सबकार्यों की सिद्धि होती है १० तुम पाण्डु के वंशमें अतीव हरिके भक्त हो इस से तुमसे सब कहते हैं एकाग्र मन होकर सुनिये ११ जो भक्तिमान् पुरुष नरसिंहजी का मन्दिर बनवाता है वह सब पापोंसे निर्मुक्त होकर श्रीविष्णुलोक को जाता है १२ व जो सब लक्षणयुक्त नृसिंहजी की प्रतिमा बनवाता है वह सर्वपापों से निर्मुक्त होकर विष्णुलोक को जाता है १३ व जो नरसिंहजी की मूर्तिकी प्रतिष्ठा वेदविधान से करताहै उसमेंभी निष्काम होकर वह प्राणी देवताओं की भी बाधासे छूटजाताहै १४ व नरसिंहजीकी प्रतिष्ठा करके जो मनुष्य पूजाकरता है

उसके सब मनोरथ सिद्ध होते हैं व परमपद को पाता है १५ ब्रह्मादि देवगण पूर्वकाल में विष्णुहीकी आराधना करके अपने २ पद को प्राप्तहुये हैं सो केशव जीही के प्रसाद से १६ हे राजन्! जो २ मान्धाता आदि नृपश्रेष्ठ हुये हैं वे सब विष्णुही की आराधना करके यहां से विष्णुलोक को गये हैं॥ १७॥

चौपाई॥

सुर ईश्वर नरसिंहमुरारी। जो पूजत नित हित चितधारी॥
स्वर्गमोक्षपावत सो प्रानी। नहिंसंशययामहँहमजानी १।१८
तासोंजबलगजिअहुभुआला। एकचित्त ह्वै गत सब जाला॥
नरहरि पूजन करहु सनेमा। पैहहुमनवाञ्छितयुतप्रेमा २।१९
जोकरिमूर्ति वेदविधि थापै। श्रीहरिकहँ निजमनमहँ जापै॥
हरिपुरसोंपुनि गमननतासू। होतयहांअरुनहिंयमत्रासू३।२०॥

हरिगीतिका॥

नरसिंह देव अदेव बन्दित चरणकमल अनन्त की।
प्रतिमावनाय मनाय थापै बिभुन बिभु भगवन्त की॥
सो जात नरहरि लोक सुन्दर पुनि न फिरत बसै वहीं।
भूपालमणि विधिकहातुमसन हैसही न मृषाकहीं॥ ४।२१

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेसहस्रानीकचरित्रे द्वात्रिंशोऽध्यायः॥ ३२॥

तेंतीसवां अध्याय॥

दो० तेंतिसयेंमहँ नृहरिकी, पूजा विधि फल तासु।
बहुतभांतिकह भृगुवहुरि, मार्कण्डेय प्रकासु॥ १॥

इतनी बात सुनकर राजा सहस्रानीकजी ने फिर

भृगुमुनि से प्रश्नकिया कि हे भगवन्! हम आपके प्रसाद से श्रीहरि के पूजन का अति पुण्य विधान श्रवण किया चाहते हैं इससे आप हम से कहें १ व जो नरसिंहजी के मन्दिर में संमार्जन करता है तथा जो लेपन करताहै ये दोनों जो फलपाते हों वह भी कहिये २ फिर जो पुण्य केशव को शुद्धजल से स्नान कराने से होती है व दुग्ध से स्नान कराने से होती दधि से वा मधु से वा घृत से अथवा पञ्चगव्य से स्नान कराने से होतीहै ३ व उष्णजलसे शीतकालमें प्रक्षालन कराने से होतीहै वा कपूर अगर मिश्रितजलसे स्नान कराने से जो पुण्य होती है ४ अर्घ्यदान से जो पुण्य पाद्य आचमनीय से जो पुण्य मन्त्र पढ़कर स्नान कराने से जो पुण्य व वस्त्रदान करने से जो पुण्य होती हो ५ चन्दन व कुंकुम से पूजन करने से जो फल होता हो पुष्पों से पूजा करने से जो फल व धूप दीपकरने से जो फल ६ नैवेद्य देने से जो फल प्रदक्षिणा करनेसे जो फल नमस्कार करने स्तोत्रपढ़ने व गीतगाने से जो फल होता हो ७ ताल आदि के बेनोंसे व चामरों से जो फल होता हो ध्वजारोपण करने व शंख में जल करके स्नान कराने से जो फल होता हो ८ हे ब्रह्मन्! यह व और जो कुछ हमने अज्ञान से न पूछाहो सब केशव के भक्त हमसे कहो ९ सूतजी बोले कि इस प्रकार जब राजाने भृगुमुनिसे पूछा तो वे मार्कण्डेयजी को उत्तर देनेके लिये नियत करके आप चलेगये १० वेभी हरिके भक्त तो थेही भृगुकी प्रेरणा से बहुत प्रसन्न

हुये व राजा से कहने का प्रारम्भ उन्होंने किया ११
मार्कण्डेयजी बोले कि, हे राजपुत्र! हरि के पूजन का
विधान क्रमसे सुनो हे पाण्डुवंशज! तुम विष्णु के भक्त
हो इससे हम सब तुमसे कहेंगे १२ जो पुरुष नरसिंह
के मन्दिर का मार्जन करता है वह सब पापोंसे विनि-
र्मुक्त होकर विष्णुलोक में हर्षित होता है १३ गोबर
वा मिट्टी से पानी के साथ जो कोई भगवान् के मन्दिर
को लीपता पोतता है वह अक्षय फल पाकर विष्णु के
लोक में जाकर पूजित होता है १४ इस विषय में एक
पूर्वकाल का वृत्तान्त है जिसके सुनने से सब पापों से
प्राणी विनिर्मुक्त होजाता है १५ पूर्वकाल की वार्त्ता है
कि राजा युधिष्ठिर पांचो भाई व अपनी द्रौपदी रानी
समेत वन में विचरते थे १६ सब पांचो पाण्डवलोग
शूलकण्टकादिकोंसे उसवनमें व्याकुल थे व नारदमुनि
भी तीर्थ करने को आयेथे तीर्थ सेवा करके स्वर्गको
चलेगये थे १७ फिर राजा युधिष्ठिरजी उसी उत्तम
तीर्थ में आये व तीर्थ करनेवाले मुनिमुख्यके दर्शन
किये १८ व क्रोध चुगुली आदिसे रहित धर्मात्मा
युधिष्ठिरजी वहां जाकर चिन्तनाकरनेलगे इतने में
बहुरोमा दानव व स्थूलशिरा दानव १९ वहां आये
देखा तो युधिष्ठिर क्या कोई भी पाण्डव वहां न था
इससे उसने द्रौपदी के हरने का विचारकिया २० मार्ग
में कुश के ऊपर बैठकर ध्यानकरनेलगा पास एक
कमण्डलुभी रखलिया व कुशकी कूंची एकहाथ में
धारणकिया २१ कमलाक्ष की माला लिये मन्त्रजपता

व अपनी नासिका का अग्रभाग देखता पाण्डवलोग
भी घूमते २ वहीं आये जहां वह नर्मदाके वन में
बैठा था २२ तब भाइयों सहित राजा युधिष्ठिरजी
उसके प्रणाम करके बोले कि बड़े भाग्य से आप
दिखाई दिये २३ अब इस नर्मदा नदी के जो गुप्त
भी तीर्थ हों हमसे बताइये क्योंकि हे नाथ! हमने सुना
है कि मुनियों का दर्शन धर्म के उपदेशही के लिये होता
है २४ जबतक मुनिरूपधारी उस दैत्यसे युधिष्ठिरजी
वार्त्ताही कर रहेथे कि तबतक मुनिका वेष धारणकिये
स्थूलशिरा दैत्यभी आया २५ व बकनेलगा कि कोई
हमारा रक्षक यहां नहीं है देखो जो मनुष्य भयसे आ-
तुर पुरुष की रक्षा करता है २६ उसको अनन्त फल
मिलते हैं फिर मुझ दीन ब्राह्मणोत्तम की रक्षाकरे तो
उसको क्या कहना एकओर पर्वतादि सहित पृथ्वीका
दान २७ व एक ओर दुःखित जीवोंके प्राणों का बचाना
दोनों समान हैं व जो कोई ब्राह्मण धेनु स्त्री बालक जो
दुष्टों से पीड़ित हों २८ व उनकी उपेक्षा करता है वह
रौरव नरक को जाता है अब सब धन हरगये हुये प्राण
त्याग करने में परायण मुझको २९ कौन वीर पुरुष
बचाता है क्योंकि मैं दानवों से बहुत पीड़ित हूं मेरी
कमल की माला व कमण्डलु छीनलिया ३० व मुझे
चटकनों से पीटडाला व मेरे वस्त्रभी छीनलिये कहांतक
कहूं जो कुछ मेरेपास था एक दुष्टात्मा दानवने सब
छीनलिया ३१ ऐसे क्लीव वचन उसके सुनकर पाण्डवों
को बड़ा क्रोध हुआ व सबों के रोम खड़े होगये तब

उसी स्थानपर अपना अग्नि स्थापितकर उस मुनि
वेषधारी दैत्य को सौंप ३२ व उसी महात्मा मुनिके
पास द्रौपदीजी को भी बैठाकर सब पाण्डव मारे क्रोध
के बहुत दूरतक दौड़े गये ३३ तब युधिष्ठिरजी बोले
कि कोईभी तो यहां नहीं दिखाई देता उसके वस्त्रादि
किसने हरे कुछ नहीं अर्जुन तुम द्रौपदी की रक्षाके
लिये शीघ्र लौटो इसमें कुछ सन्देह पायाजाता है ३४
तब भाईके वचनसे प्रेरित अर्जुनजी लौट आये व राजा
युधिष्ठिरजी ने सत्यवाणी की कल्पना की ३५ व उस
बनमें सूर्यके मण्डल की ओर देखकर कहा कि हमारे
बल से व पुण्यसे व धर्म के सम्भाषणसे ३६ हे देव-
ताओ! संशययुक्त हमसे सत्य कहो यह सुनकर आ-
काशवाणी हुई ३७ कि हे महाराज! मुनिका वेष धारण
किये यह स्थूलशिरा दानव है इसको किसीने कष्ट नहीं
दिया यह केवल इस दुष्टात्मा की माया है ३८ यह सुन
कर जैसेही वह भागनेलगा है कि कोप करके भीमसेन
जीने उसके शिरमें बड़े जोरसे मारा ३९ व उसने भी
अपना भयानकरूप धारण करके भीमसेनजी को मारा
व भीमसेन और उस दानवका दारुण युद्ध होनेलगा ४०
यहांतक कि उस बनमें भीमसेनजी ने बड़े कष्टसे उस
का बड़ाभारी शिर तोड़पाया व अर्जुनभी जो वहां
पहुँचे तो उस मुनिको न देखपाया ४१ व महापतिव्रता
अपनी कान्ता प्राणोंसेभी अधिक प्रिय द्रौपदी को भी
वहां न देखा तो एक वृक्षपर चढ़कर अर्जुनजी ने देखा
तो ४२ वह दानव अपने कन्धेपर द्रौपदी को चढ़ाये

अतिशीघ्र दौड़ा चलाजाता था व उस दुष्टकी बँधोईमें कुररी के समान रोती हुई द्रौपदीजी चलीजातीथीं ४३ हे भीम, हे धर्मपुत्र ! कहांगये इसतरह रोदन करतीहुई जाती थीं पर जैसेही द्रौपदीको देखा कि वीर शब्द से सब दिशाओं को नादित करातेहुये अर्जुनजी अति वेगसे दौड़े ४४ यहांतक कि उनके पादोंके बड़ेभारी व शीघ्रताके वेग से बहुत से वृक्षमार्ग में उखड़गये तब वह दैत्यभी द्रौपदीजी को छोड़ आप बड़े वेगसे भागा ४५ परन्तु इस दशापर भी अर्जुनजी ने उसका पीछा न छोड़ा पर वह द्रौपदी को छोड़ भागताही चला गया ४६ जब अर्जुन बनाय निकट पहुँच गये तो पृथ्वी पर वह चतुर्भुजीमूर्त्ति धारण करके गिरपड़ा दो पीत वस्त्र धारण किये व शंख चक्र गदादि आयुध ४७ तब तो अर्जुन बड़े विस्मय को प्राप्त होकर प्रणाम कर यह वचन बोले कि हे भगवन् ! आपने यह वैष्णवी माया क्यों की ४८ हे नाथ ! मैंनेभी बड़ा अपकार किया उसे क्षमाकीजिये आपके नमस्कार है यह निश्चय है कि अज्ञानभावसे मैंने यह दारुण कर्म किया ४९ हे जगन्नाथ! वह आप क्षमाकरें क्योंकि मनुष्य में चैतन्य कहाँ है जो आपको जाने यह सुनकर वह चतुर्भुजीमूर्त्ति धारण किये हुआ पुरुषबोला कि, हे महाबाहो ! मैं कृष्णचन्द्र नहीं हूं किन्तु बहुरोमा दानव हूं ५० व पूर्व जन्म के कर्मके प्रभाव से मैंने हरिका देह पाया है यह सुनकर अर्जुनजी बोले कि, हे बहुरोमन् ! अपने पूर्वजन्मके कर्म निश्चय करके हमसे कहो ५१ किस कर्मके विपाक

से हरिकी सारूप्य तुमने पाई चतुर्भुज बोला कि हे महाभाग, अर्जुन! आपने भाइयों सहित मेरे पूर्वजन्म का चरित सुनो ५२ वह मेरा चरित अत्यन्त आश्चर्य्य रूप है व सुननेवालों को हर्ष बढ़ाताहै मैं पूर्वजन्ममें सोमवंशी राजा था ५३ जयध्वज तो मेरानाम था व नारायण में परायण रहता था व विष्णु के देवालय में नित्यसम्मार्जन कियाकरता था ५४ उसे लीपता पोतता था व प्रतिदिन दीपक भी जलाता था व मेरे पुरोहित का बीतिहोत्र नाम था ५५ वह ब्राह्मण मेरे उस चरित को देखकर बहुत विस्मितहुआ मार्कण्डेय जी सहस्रानीक राजासे बोले कि एक समय बैठेहुये विष्णुमें तत्पर उस राजा से ५६ वेदवेदाङ्गपारगामी वीतिहोत्र ब्राह्मण ने पूछा कि हे राजन्! तुम तो परम धर्मज्ञ व हरिभक्ति में परायण हो ५७ व विष्णुकी भक्ति करनेवालों में श्रेष्ठहो व सब अन्य पुरुषोंमें भी श्रेष्ठ हो क्योंकि प्रतिदिन हरिमन्दिर के झाड़ने बटोरने में व लीपने में तत्पर रहते हो ५८ सो हे महाभाग! हमसे आप बतावें कि आपने इसका क्या फल जानाहै क्योंकि और भी विष्णुके प्रियकरनेवाले बहुतसे कर्म हैं ५९ तथापि हे महाभाग! तुम यही दोकर्म कियाकरतेहो इस से जननाथ हम जानतेहैं कि इनकर्मोंके करने का कोई विशेष फल आपका जानाहुआहै ६० सो वह कहो जो गुप्त न हो व हमारे विषय में आपकी प्रीति हो यह सुन जयध्वज राजा बोले कि हे विप्रशार्दूल! हमारा पूर्वजन्मका चरितसुनो ६१ हम जातिस्मरहोनेके कारण

जानतेहैं पर सुननेवालों को वह चरित बहुत विस्मित कराता है हे विप्रेन्द्र! पूर्वजन्ममें मैं रैवतनाम ब्राह्मण था ६२ सदा जिनको यज्ञ न कराना चाहिये उन्हींको कराता था क्योंकि गवईगांवका पुरोहित था चुगल भी बड़ाभारी था व निष्ठुरचित्त व जो पदार्थ तेल लोन आदि बेचने के योग्य न थे उनको भी बेचाकरताथा ६३ ऐसे २ निषिद्धकर्मोंके करनेसे भाई बन्धुओंने मुझे छोड़दिया क्योंकि मैं महापापों के करनेमें रतरहता था व ब्राह्मणों से सदा वैररखताथा ६४ परस्त्री परधन के लेनेमें बड़ा लोलुपथा व जन्तुओं की हिंसा सदा किया करता था मदिरापान नित्यानियम से करता व वेद व ब्राह्मणों से अप्रीति रखता ६५ इसी रीति से नित्य पापों में रतरहताही था बहुतों की गलियां रूंधदेताथा एक समयकी वार्त्ताहै कि मैं महाकामी तो थाही ब्राह्मणों की दो चार स्त्रियों को लेकर ६६ एक विष्णु के मन्दिर में रात्रि को गया जिसमें कि पूजाआदि तो होताही नहीं था इससे वह शून्यपड़ाहुआथा तो हमने अपने वस्त्र से कुछ दूर तक उस मन्दिर को झाड़ा ६७ व उन स्त्रियों के संग भोगकरने के लिये दीपक भी जलाया बस इन्हीं दोनों कर्मों के करनेसे मेरे जितने दुष्कर्म थे सबके सब नष्ट होगये ६८ इस प्रकार मैं दीपक जलायेहुआ भोग करीरहाथा कि दीपक की उजियाली देख कर नगर की रक्षाकरनेवाले चौकीदार वहां आगये ६९ व कहा कि चोरीकरने के लिये इसने दीपक जलायाहै क्योंकि यह किसी और लोगों का

दूतहै जिसमें वे आकर चोरीकरें इतना कहकर बड़ी तीक्ष्णधारवाले खड्गसे मेरा शिरकाटकर वे सब चले गये ७० पर उसी समय श्रीविष्णुजी के दूतों समेत एक दिव्य विमान वहां आया उसपर चढ़कर गन्धर्वों से यश गवाता हुआ मैं स्वर्गलोक को चला गया ७१ चतुर्भुज अर्जुनजी से बोला कि वहां मैं ब्रह्माजीके सौ कल्प से कुछ अधिक कालतक रहा व नाना प्रकारके दिव्यपदार्थ दिव्यरूप धारणकिये भोगतारहा ७२ फिर बहुतकाल के पीछे उसी पुण्य के योग से सोमवंशमें कमल तुल्य नेत्रवाला जयध्वज नाम राजाहुआ ७३ वहांभी काल के वश से मरकर स्वर्ग को गया फिर इन्द्रलोक को जाकर वहां से रुद्रलोकको गया ७४ रुद्र-लोक से ब्रह्मलोक को जाता था कि मार्गमें नारद मुनि को देखा पर मारे गर्व के नमस्कार न किया व उन को हँसा भी इससे कोपकरके उन्हों ने मुझे शापदिया कि राजन्! जाकर तुम राक्षस होओ ७५ इस प्रकार उनदेवर्षिजी का दिया हुआ शाप सुनकर मैंने उनको बहुत प्रसन्न किया इससे उनमुनि ने मेरे ऊपर अपना प्रसाद किया ७६ व कहा कि जब नर्मदाके तीर के मठमें धीमान् धर्मके पुत्र युधिष्ठिरजीकी भार्य्या द्रौपदी को हर लेकर भागेगा तब इस शाप से तेरी मुक्ति होगी ७७ सो हे अर्जुन व हे भूपाल, धर्मपुत्र, युधिष्ठिर जी! इसीकारणसे मुझको श्रीविष्णु की सारूप्य मोक्ष मिलीहै अब मैं इसी चतुर्भुजी मूर्तिसे वैकुण्ठको जाता हूं ७८ मार्कण्डेयजी सहस्रानीकजीसे बोले कि, इतना

कह गरुड़पर आरूढ़होकर राजा युधिष्ठिरजी के देखते ही देखते विष्णुभगवान् के लोक को वह चलागया जहां श्रीविष्णु लक्ष्मीसहित निवासकिया करते हैं ७९ यह सम्मार्जन व उपलेपन करने का माहात्म्य वर्णनकिया कि अवश होकर भोग करने के लिये उसने मन्दिर का कुछ भाग झाड़ा बहारा था व उपलेपन किया था तोभी श्रीविष्णु की सारूप्य उसने पाई ८० व जो लोग भक्तिमान् होकर प्रशान्तचित्त से अच्छे प्रकार प्रेम से हरिमन्दिर का मार्जन करते हैं उनको क्या कहना है वे तो जीवन्मुक्तही हैं सूतजी भरद्वाजादिकों से बोले कि मार्कण्डेयके वचन सुनकर पाण्डुवंशमें उत्पन्न ८१ सहस्रानीक भूपाल श्रीहरिके पूजन में निरतहुआ इस से हे विप्रेंद्रो! सुनो देव नारायण अव्यय ८२ ज्ञान से व अज्ञान सेभी पूजा करनेवालों को विमुक्ति देते हैं इससे हम वार २ कहते हैं कि आपलोग जगन्नाथजी की पूजा करें ८३ ॥

चौपाई ॥

तरणचहहुदुस्तरभवसागर। तो द्विजवरहु भजहु प्रभुनागर ॥
पूजतही अघओघ नशावत।पुनिनिजपददैअभयबसावत१।८४
प्रणतारति हरहरिकहँजोई। पूजन करत भक्त जन कोई ॥
बन्दित अरु पूजित सोहोई।बहुरिनमस्यहोतनहिंगोई॥२।८५॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेसहस्रानीकचरितेमार्कण्डेयोपदिष्टसम्मार्जनफलन्नामत्रयस्त्रिंशोऽध्यायः॥३३॥

चौंतीसवां अध्याय॥

दो० चौंतिसयेंमहँ विविधविधि, हरिपूजन फलपुण्य।
सूत कह्यो मुनिवरन सों, नृप इतिहास सुगुण्य॥१॥

इतनी कथा श्रवणकरके सहस्रानीकजीने मार्कण्डेय जी से फिर प्रश्नकिया कि हे महामते, मार्कण्डेयजी! फिर विष्णु के निर्माल्यके दूर करने की जो पुण्य हो हमसे कहो १ मार्कण्डेयजी बोले किहे राजन्! नरसिंह का रूप धारण किये हुये केशव भगवान् के ऊपर से तुलसी पुष्प मालादि निर्माल्य उतार कर जो जल से स्नान कराता है वह सब पापों से छूटजाता है २ व सब तीर्थों का फल पाकर विमानपर चढ़कर स्वर्ग को जाता है वहां से फिर श्रीविष्णुजी के स्थान में पहुँच कर अक्षयकालतक मोदित होता है ३ हे राजेन्द्र! जो कोई इतना भी कहता है कि नरसिंह आगच्छ आओ व फिर पुष्पाक्षतादिकों से पूजाकरता है वह भी सब पापोंसे छूटजाता है ४ व देवों के देव श्रीहरि को आसन अर्घ्य पाद्य आचमनीय विधिपूर्वक देने से सब पापोंसे छूटजाता है ५ व हे नराधिप! जलसे भक्तिपूर्वक नरसिंह जी के स्नान कराने से सब पापोंसे छूटकर विष्णुलोक में पूजित होता है ६ व एकवार भी दधि से स्नान कराकर निर्मल व प्रियदर्शन होकर व उत्तम देवताओं से पूजित होकर विष्णुलोकको प्राप्त होताहै ७ जो पुरुष मधु से स्नान कराकर श्रीहरि की पूजा करता है वह प्रथम अग्निलोक में हर्षित होकर फिर विष्णुजी के पुरमें बसता है ८ व जो कोई नरसिंहजी की मूर्तिमें घृत

लगाता है उसमें भी स्नान के कालमें विशेषता से लगाता है व शंख नगारे आदि पूजा के समय बजवाता है ९ वह सर्पकी केंचुलके समान पाप का जामा अंगों से उतारकर दिव्य विमानपर चढ़के श्रीविष्णुलोक में जाकर पूजित होता है १० हे महाराज! जो पञ्चगव्यसे भक्ति सहित मन्त्र पढ़कर देवदेव का स्नान कराता है उसको अनन्त पुण्य मिलती है ११ जो भगवान् की मूर्तिमें गेहूंका आटा लगाकर खूब मर्दित करके फिर उष्ण जलसे अच्छे प्रकार प्रक्षालित करता है वह वरुणलोक को जाता है १२ व जो भगवान् के पादपीठ बिल्वपत्र से धीरे २ रगड़कर उष्ण जल से धोता है वहभी सब पापों से छूटजाता है १३ व कुशयुक्त पुष्प मिलाये हुये जल से स्नान कराने से ब्रह्मलोक को जाता है व रत्न मिश्रित जलसे स्नान कराने से सूर्यलोक को जाता है तथा सुवर्णमिश्रित जल से कुबेर के लोक को व कर्पूर अगरयुक्त जलसे जो नरसिंहजी को स्नापित कराता है १४ वह इन्द्रलोक में मोदित होकर पीछे विष्णुलोक को जाता है व पुष्प मिश्रित जलसे भक्तिपूर्वक श्रीविष्णु को स्नान कराकर मनुष्यों में उत्तम वह १५ सूर्यलोकमें जाकर फिर विष्णुलोकमें जाकर पूजित होताहै व जो दो वस्त्र धारण कराकर भक्ति से हरि की पूजा करता है १६ वह चन्द्रलोक में क्रीड़ा करके फिर विष्णुलोक को जाता है व वहां पूजित होता है व कुंकुम अगरु चन्दनसे अच्युत की मूर्तिको १७ भक्तिसे आलेपित करके कोटिकल्प

पर्यन्त स्वर्ग में बसता है व मल्लिका मालती जाही जूही केतकी अशोक व चम्पा के फूलों से १८ व पुन्नाग बकुल कमल की बहुत जातियों से तुलसी कँदैल पलाशादि १९ व और भी नाना प्रकार के पुष्पों से अच्युत भगवान् की पूजा करके एकसौ साठ माशे सुवर्ण चढ़ाने का फल पूजक पाता है २० व इनमें से जितने मिलें उनकी माला बनाकर जो श्रीविष्णुजी की पूजा करता है वह कल्पकोटि सहस्र व कल्पकोटि शतवर्ष तक २१ दिव्य विमानपर स्थित होकर विष्णुलोक में पूजित होता है व जो कोई भक्ति से नरसिंह जी की पूजा अखण्डित बिल्वपत्रों से करता है २२ पर उनके संग तुलसीदल भी मिलालेता है वह सब पापों से विनिर्म्मुक्त होकर व सबभूषणों से भूषितहो २३ सुवर्ण के विमान पर चढ़कर विष्णुलोक में जाकर पूजित होता है व घृत शर्करा मिलाकर गुग्गुल २४ भक्ति से जो कोई नरसिंहजी को धूप देता है व सब दिशाओं में धूपित करता है वह सब पापों से रहित होकर २५ अप्सराओं से आकीर्ण विमानपर चढ़कर वायुलोक में हर्षकरके पीछे विष्णुलोकको जाता है २६ व जो घृत से वा तैलसे दीपक प्रज्वालित करता है व विधि से श्रीविष्णु के समर्पण करता है उसकी पुण्य का फल सुनो २७ सब पापसमूह को छोड़ सहस्रसूर्यों के समान प्रकाशित होकर बड़े प्रकाशित विमान पर चढ़कर विष्णुलोक को जाता है २८ व जो हवि जड़हन के चावलों का भात घृत व शक्कर मिलाकर व यव

की खीर नरसिंहजी को निवेदित करता है २९ जितने तण्डुल उसमें होते हैं उतने वर्ष पर्यन्त महाभोगों को भोगताहुआ वह वैष्णव विष्णुलोक में वसता है ३० व उस बली वैष्णव के साथ सब देवगण तृप्तहोकर उसको शान्ति आरोग्य व लक्ष्मी देते हैं ३१ हे नृपात्मज! भक्तिसे देवदेव श्रीविष्णुजी की एकभी प्रदक्षिणा करनेसे जो फल मनुष्यों को होता है वह हम से सुनो ३२ पृथ्वीभरकी प्रदक्षिणा का फल पाकर श्रीविष्णुजी के पुरमें बसता है व जो भक्तिसे माधवजी के नमस्कार करता है ३३ वह धर्म अर्थ काम व मोक्ष विना परिश्रम के पाता है व गीतवाद्यादि व नर्तन व शंख तूर्यादिकों का शब्द जो कराता है ३४ वह मनुष्य विष्णुजी के मन्दिर को जाता है व सब कालों में यथेष्ट रूप धारण करके यथेच्छ विमानपर चढ़ाहुआ विचरता है ३५ व अच्छे प्रकारका गान जानती हुई अप्सराओं के गणोंसे सेवित बहुमूल्य मणियों से चित्र विचित्र विमान पर चढ़कर ३६ इस स्वर्ग से उस स्वर्ग में होता हुआ विष्णुलोक में जाकर पूजित होता है व जो गरुड़की मूर्ति से चिह्नित ध्वज विष्णुजी के अर्पण करताहै ३७ वह भी ध्वजयुक्त विमानपर विराजमान होकर अप्सराओंसे सेवित श्रीविष्णुलोक को पाताहै ३८ व हे नृप! दिव्य सुवर्णके हार केयूर कुण्डलादि व मुकुटादि भूषणों से जो विष्णु भगवान् की पूजा करता है ३९ वह सब पापों से विनिर्मुक्त होकर व सब भूषणों से होकर इन्द्रलोक में तबतक बसता है कि जब

तक चौदह इन्द्र रहते हैं ४० व जो कोई लगती हुई गऊ श्रीविष्णु भगवान् के समर्प्पण करता है व उनकी आराधना करके जो कुछ दूध होता वह नरसिंहजी को देता है वह विष्णुलोक में जाकर पूजित होताहै ४१ व उसके पितर बहुत कालतक श्वेतद्वीप में मोदित होते हैं इसमें कुछ संशय नहीं है ४२ हे राजन्! इस रीति से जो नरोत्तम नरसिंहजी को पूजता है उसको स्वर्ग व मोक्ष दोनों मिलतेहैं इसमें सन्देह नहीं है ४३ हे नृप! जहां मनुष्य नरसिंहजी को इसरीति से पूजते हैं वहां व्याधि अकाल राजा व चौरादिकोंसे भय नहीं होता ४४ नरसिंह माधवकी आराधना इस विधि से करके नाना प्रकार के सुखभोगके फिर किसी का पुत्र नहीं होताहै ४५ व जिस ग्राम में नित्य तिल व घृत से होमहुआ करता है उस ग्राम में कभी कुछ भय नहीं होता ४६ व अनावृष्टि महामारी व अन्नादिक के दोष भी वहां नहीं होते जहां कि वेदवादीलोग नरसिंह जी की पूजा विधान से करतेहैं ४७ व जिसग्राम में लाख आहुतियां देकर ब्राह्मणलोग होम करते हैं वा ग्राम का स्वामी करता है उस ग्राममें ऊपरके कहेहुये कोई भी भय नहीं आते ४८ व जब कभी महामारी इत्यादि का बड़ाभारी उपद्रव देखे कि प्रजाओं का मरण हुआ जाता है वा अपनाही मरण दिखाई देताहै तब जो पुरुष अच्छीतरह नरसिंहजी के मन्दिर में आराधना करता है ४९ व शंकरजीके मन्दिर में कोटि आहुतियोंका होम करताहै वा भोजन दक्षिणा देकर

जितेन्द्रियब्राह्मणों से कराता है ५० उसके करनेपर नरसिंहजी के प्रसादसे प्रजाओं का उपसर्गादि, मरण तुरन्त शान्त होजाता है ५१ व कोई घोर दुस्स्वप्न देखनेपर वा जब कभी अपने को ग्रहों की पीड़ाहो तब होमकरने व ब्राह्मणों को भोजन कराने से दोष की शान्ति होजातीहै ५२ मकर व कर्क्की संक्रान्ति में व तुला मेष की संक्रान्तियों में वा चन्द्र सूर्य ग्रहण में नरसिंहजी की आराधना करके लक्ष होमकरावे ५३ तो हे राजेंद्र! वहां के सब निवासियों की शान्ति हो इत्यादि बहुतसे फलों से नरसिंह का पूजनयुक्त है ५४ सो हे राजपुत्र! जो अपनी सद्गति चाहते हो तो तुम भी पूजा करो क्योंकि स्वर्ग व मोक्ष का फल देनेवाला इससे श्रेष्ठतर और कुछ नहीं है ५५ राजाओं को देव-देव नरसिंह की पूजा सुकर है व औरों को भी सुकरही है क्योंकि वन में पुष्पफल लगेही होतेहैं व विना दामों से मिलते हैं ५६ व नदी तड़ागादिकों में जल भराही होता है देवता भी नृसिंहजी साधारणही हैं केवल एक विवास करने बन्धन त्यागनेसे मनको संयम युक्त करना चाहिये क्योंकि जिसने अपने मनको नियमित किया मुक्ति मानो उसके हाथों में धरी है ५७ मार्कण्डेय जी बोले कि ॥

चौपाई ॥

इमिभृगुमुनि प्रेरित हमगावा। अच्युत पूजन तुम्हैं सुनावा॥
प्रतिदिनकरहु भूपहरिपूजन। अपरकहहुकाकहियभक्तजन॥५८

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेचतुस्त्रिंशोऽध्यायः॥ ३४॥

पैंतीसवां अध्याय॥

दो० पैंतिसयें अध्यायमहँ, लक्षक होम बिधान।
भार्गव कहनृपसों कह्यो, शौनक गुरुहि महान॥१॥

यह सुनकर राजा सहस्रानीकजीने पूछा कि आप ने श्रीविष्णुजी के आराधन का महाफल कहा वे लोग अज्ञान से सोरहे हैं जो श्रीहरिकी पूजा नहीं करते १ आपके प्रसाद से यह नरसिंहजी के पूजनका क्रम हम ने सुना अब भक्ति से उनका अर्चन करेंगे अब आप कोटिहोम का फलकहें २ मार्कण्डेयजी बोले कि यह अर्थ बृहस्पति ने पूर्व समयमें शौनक से पूछा था शौनक ने जो उनसे कहा है वह तुमसे कहते हैं ३ सुखपूर्वक बैठेहुये शौनक से बृहस्पतिने पूछा बृहस्पति करने से पुर नलक्षहोम की जो भूमि व कोटि होमकी जो बाधा नाश करनेवाली रीता! रस्र व्वदा होती है होम करनेका विधकि. हे नृपनन्दन! यह इत्बोले कि, इस प्रकार जब बृहस्पतिज हमने कहा ॥ादिक का विधान पूछा ५ तो हे नृपसत्तम! ..नकजी यथावत् कहने लगे शौनक बोले कि, हे देवपुरोहित! हम तुमसे यथावत् कहेंगे तुम सुनो ६ लक्ष होम के लिये महाभूमि चाहिये व उसकी शुद्धि विशेषरीति से करनी चाहिये अब यज्ञकर्म करने के लिये अच्छी भूमि का उत्तम लक्षण कहते हैं ७ प्रथम जो पृथ्वी समान हो खाली ऊँची न हो उसको झाड़ बहारकर साफ करे प्रथम की अपेक्षा बनाय ठीककरे फिर मोटी जंघाभर नीचेतक खोद डाले फिर उसका शोधन करे हड्डी आदि अशुभ वस्तु जो

दिखाई दें दूर फेंके ८ व फिर बाहर से शुद्धमृत्तिका ले आकर उस मृत्तिका को आच्छादित करदे जो प्रथम की खोदीहुई थी फिर उसे पीटपाटकर गोमयसे लेपन करे उसमें दो हाथ गहिरा व लम्बा चौड़ा कुण्ड बनावे ६ कुण्ड लम्बाई चौड़ाई में समान चौकोना होना चाहिये उसके ऊपर चारकोण की मेखला बनानी चाहिये १० वह मेखला सूत्रकी होती है जो कि चार अंगुल की ऊँची बनानी चाहिये इस रीति से कुण्ड बनाकर फिर वेद पढ़े हुये व ब्रह्मकर्म करने में निष्ठ ब्राह्मणों का ११ यजमान विशेषरीति से आवाहन करे वे ब्राह्मण तीन रात्रि प्रथम से ब्रह्मचर्य व्रत करें शय्या आदि पर शयन न करें १२ व एकदिन रात्रि [illegible] दुव-
[illegible] धारण करके दशसहस्र गायत्री मन्त्रजपें फि[illegible]ी सुकरही
गन्ध पुष्प से [illegible]न में पुष्पफल लगेही होतेहैं व [illegible] रहकर निरा-
हार सन्तुष्ट व जि[illegible] व नदी तड़ाग [illegible] कुशाके आसनों पर
बैठकर एकाग्र मन हो[illegible] १४ वे लोग निरालस होकर यत्नसे होम का आरम्भकरें भूमि को लिखित करके व जलसे सेक करके यत्नसे अग्नि स्थापन करें १५ यहां पञ्चभूसंस्कार व कुशकण्डिकादि कर्म सब करलें क्योंकि यत्न से अग्निस्थापन कहा है गृह्य में कहेहुये विधान से होम करे आघार व आज्यभाग पूर्वमें हुने १६ तदनन्तर यव तण्डुल तिलोंसे मिलीहुई प्रथम आहुति गायत्री से दे सो भी एकाचित्त होकर व स्वाहा पढ़कर १७ गायत्री सब छन्दों की माता है व ब्रह्म की

योनि होनेसे प्रतिष्ठित है उसके सविता तो देव हैं व विश्वामित्र ऋषि हैं १८ गायत्री के पीछे भूर्भुवः आदि व्याहृतियों से हवन करे इसमें केवल तिलों सेही हवन हो फिर जबतक लक्ष वा कोटि जितनी संख्या हो पूरी न हो १९ तबतक अच्युत की पूजा प्रथम करके तिलों से होम करता रहै व यजमान दीन अनाथादिकों को तबतक भोजन देतारहे कि २० जबतक होम समाप्त न हो जब होम समाप्त होजाय तब श्रद्धा से ऋत्विजों को दक्षिणा दे २१ सोभी जैसी दक्षिणा योग्य हो वैसी दे लोभ से न्यून न दे फिर शान्ति पढ़ेहुये जलसे ग्राम भर को अभिषेकित करे उनमें भी रोगियों के ऊपर वह जल अवश्य छिड़के २२ हे महाभाग! इस प्रकार होम करने से पुर नगर राज्य राजा व देश २३ सब की सब बाधा नाश करनेवाली शान्ति सर्व्वदा होती है मार्क-ण्डेयजी बोले कि, हे नृपनन्दन ! यह इतना शौनक का कहाहुआ होमविधान हमने कहा॥ २४ ॥

चौपाई॥

लक्षहोम आदिक विधिनाना। राज्यमाहिं करुसहित विधाना॥
सकलशान्तिदायक न सँदेहू। तुमसनकहा भूपकरिनेहू१।२५
ग्राम सदन पुरबाहरमाहीं। विप्र करें यह विधि विधिपाहीं॥
वहहुँशान्तिहोवतनरकेरी। गोसेवकयुतक्षितिपकिफेरी॥२।२६॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेलक्षहोमविधिः
पञ्चत्रिंशोऽध्यायः॥ ३५॥

छत्तीसवां अध्याय ॥

दो० छत्तिसयें महँ मुनि कह्यो, अवतारन की गाथ।
ज्यहिसुनिमनगुनिहोतजन,सबसबभांतिसनाथ॥१॥

मार्कण्डेयजी बोले कि हे महीपाल ! देवदेव श्री विष्णुजी के पवित्र व पापनाशनेवाले अवतार हम कहते हैं उनको श्रवण कीजिये १ उन अवतारों में जैसे मत्स्यका अवतार धारण करके ब्रह्माजी को वेद आनकर दिये व उन्हीं महात्मा ने मधु व कैटभनाम दैत्योंको नष्ट किया २ व जैसे श्रीविष्णुजी ने कूर्मावतार से मन्दराचल धारण किया व जैसे उन महात्मा ने बाराहावतार से पृथ्वी का उद्धार किया ३ व उन्होंने जैसे महाबली दितिके पुत्र हिरण्याक्षनाम दैत्यको मारा जो कि महावीर्य व महातनुवाला था ४ व जैसे नृसिंहावतार से देवताओं के महाशत्रु हिरण्यकशिपु को मृत्यु को पहुँचाया ५ व जैसे वामनावतार धरके उन महात्मा ने राजा बलिको बँधुआ किया व उन्होंने इन्द्रको तीनों लोकों का स्वामी बनाया ६ व जैसे श्रीरामचन्द्रजी का अवतार लेकर रावण को मारा व देवताओं के शत्रुगण सहित सब राक्षसों को मारा ७ व जैसे परशुरामावतार होकर पूर्वकालमें सब अब्रह्मण्य क्षत्रियों को मारा व जैसे श्रीकृष्णचन्द्रजी का अवतार लेकर कंसादि दैत्यों का संहारकिया ८ व कलियुग में जैसे नारायणजी बुद्धावतार लेते हैं व कल्की का अवतार धारण करके म्लेच्छों को मारते हैं ९ यह कल्कीजी का अवतार जब बनाय कलियुग समाप्त होने पर होता है तब होता है

इन सब अवतारों के चरित तुमसे फिर कहेंगे ॥ १० ॥

चौपैया ॥

भगवान अनन्ता कमलाकन्ता हरि के चरित अपारा।
करिकै मन सुस्थिर जो नर पुष्टिर सुनिहै बहुत उदारा ॥
जो तुमसन भाषा करि अभिलाषा ताहि पढ़िहि पुनिजोई।
सो हरिपदजाइहिसबसुखपाइहि है प्रत्यक्ष न गोई ॥ १ । ११ ॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेहरिप्रादुर्भावानुकथने षट्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३६ ॥

सैंतीसवां अध्याय ॥

दो० सैंतिसयें महँ मत्स्यतनु, हरिके सकल चरित्र।
नृपसों कह अनुरूपिकै, मार्कण्डेय विचित्र ॥ १ ॥

मार्कण्डेयमुनि राजा सहस्रानीक से बोले कि, महात्मा अच्युत भगवान्‌के नानाप्रकार के अवतारों के होने से विस्तार सहित वर्णन नहीं होसक्ता इससे कुछ अवतारों की संक्षेप कथा तुमसे कहते हैं १ सृष्टि होने के प्रथम जगत् के सिरजनेवाले पुरुषोत्तम श्रीनारायण भगवान् अनन्तनाग के शरीर को शय्या बनाकर उस पर शयन कररहेथे २ फिर सोते हुये देवताओं के देव श्रीविष्णु भगवान्‌जीके दोनों कानोंसे जलमें दो पसीने के बूँद गिरे ३ उनसे महाकाय महावीर्य व महाबल पराक्रमी मधु व कैटभ नाम के दो दैत्य उत्पन्न हुये ४ व हे नृपश्रेष्ठ! शयन किये हुये श्री अच्युत [illegible] की नाभि से एक बड़ाभारी कमल [illegible]त हुये केशव ब्रह्माजी उत्पन्न होआये ५ [illegible] कि हे महामते! हम कि हे महामते! तुम [illegible] के लिये आये हैं इससे

हां कहकर कमल से उत्पन्न ब्रह्माजी ६ वेद शास्त्र के वशसे जबतक प्रजाओं के बनानेमें उद्यतहुये कि तब तक मधु व कैटभ दोनों असुर वहां आगये ७ व आकर वेदों व शास्त्रोंके अर्थोंका विज्ञान जो ब्रह्माजीमें था एकक्षणभरमें उसे हरलेजाकर बलसे दर्पित वे दोनों घोर दानव चलेगये ८ हे राजन्! तब एक क्षणमात्रही में ब्रह्माजी ज्ञानहीन होगये व दुःखित होकर चिन्ता करने लगे कि अब हम कैसे प्रजाओं को बनावेंगे ९ व देवदेव ने कहा था कि तुम प्रजा बनाओ सो अब ज्ञानहीन होने के कारण हम कैसे प्रजा उत्पन्न करेंगे अहो बड़ा भारी कष्ट उपस्थित हुआ १० यह चिन्ता करके लोक के पितामह ब्रह्माजी ने बड़े यत्न से दुःखित होकर वेदों व शास्त्रों का स्मरण भी किया परन्तु उन्हें न देखा ११ तब उदासीनचित्त होकर उन्हीं देवदेव पुरुषोत्तम विष्णुजी की स्तुति एकाग्र मन से शास्त्रद्वारा करने को प्रारम्भ किया १२ ब्रह्माजी बोले ॥

चौपाई ॥

शास्त्रवेदनिधि तुम्हें नमामी। मैं नारायण तव अनुगामी॥
नित्यकर्म विज्ञान निधाना। नमोनमो हम करत महाना॥१३
विद्याधर वागीश तुम्हारे। नमत देव हरु दुःख हमारे॥
व जे...चिन्त्य सर्वज्ञ मुरारी। प्रणतपाल हरु पीर हमारी॥१४
दैत्यों का संहा...मति विहीना। महाभुजा अधोक्षज परवीना॥
बुद्धावतार लेते हैं ५ ...नमामी। बारबार तवनाम वदामी॥१५
म्लेच्छों को मारते हैं ६ यह ...अच्युत हृदय ज्ञानमय भाना॥
बनाय कलियुग समाप्त होने पर है... नमसहितविधाना॥१६॥

मार्कण्डेयजी बोले कि जब ब्रह्माजी ने इस प्रकार की स्तुतिकी तो देवदेवेश शंख चक्र गदा के धारण करनेवाले श्रीभगवान्‌जी ब्रह्माजी से बोले कि, तुमको हम उत्तम ज्ञान देंगे १७ ऐसा कहकर श्रीविष्णु भगवान् चिन्तना करने लगे कि किससे इनको नीति विज्ञान सिद्धकरें सो किसरूप से १८ फिर जनार्दनजी ने जाना कि यह सब मधुकैटभ का किया हुआहै इससे बहुत योजनों में फैला हुआ व बहुत योजन का लम्बा सब ज्ञानमय मत्स्य का रूप बनाया १९ व तुरन्त जल में प्रवेश करके श्रीहरि ने उसको चलायमान किया व जाते २ पाताल में पहुँचकर वहां मधु व कैटभ दोनोंको देखा २० व उन दोनोंको अत्यन्त मोहित करके वह ज्ञान ग्रहण करलिया व वेद शास्त्र मुनियों से स्तुति किये हुये मधुसूदनजी २१ वह ज्ञानरूप वेदशास्त्र ब्रह्माजी को देकर मत्स्य का रूप छोड़ जगत्‌के हितके लिये श्रीहरि फिर शयन कररहे २२ व जब ये उनका वेद शास्त्ररूप ज्ञान हर लेकर चले आये तो वे दोनों मधु व कैटभ जागे व आकर देखा तो देवदेव अव्यय श्रीविष्णुजी शयन कररहे थे २३ इससे वे दोनों आपस में कहने लगे कि यह वह धूर्त्त पुरुष है जो कि हम दोनों को अपनी माया से मोहित करके वेद शास्त्र वहां से लाकर ब्रह्मा को दे साधु के समान सोरहा है २४ यह कहकर महाघोर वे मधुकैटभ दोनों दानवों ने सोते हुये केशव जीको जगादिया २५ व बोले कि हे महामते ! हम दोनों तुम्हारे संग युद्ध करने के लिये आये हैं इससे

मार्कण्डेयमुनि बोले कि जब देवताओंने देवदेव जनार्दनजी की ऐसी स्तुतिकी तो श्रीहरि उनके आगे खड़े होकर उनसे यह बोले कि ७ हे देवताओ ! अब तुमलोग वहां जाकर दानवों से मिलापकरो व दोनों मिलकर मन्दराचल को मथानी बनाय व वासुकि नागराज को मथानी में बांधनेकी रस्सी बनाकर ८ सब औषधियां लाकर समुद्र में शीघ्रछोड़कर दानवों के संग क्षीरसागर को मथो ९ व हम वहां सहायता करेंगे उस क्षीरसागर से अमृत निकलेगा उसके पीनेसे १० एक क्षणभर में देवगण बलवत्तर होंगे क्योंकि अमृत का ऐसाही प्रभाव है हे महाभागो ! तुम सब अमृत पीने से बड़े तेजस्वी व रणमें विक्रमकरनेवाले होजाओगे ११ अमृत पाकर सब इन्द्रादि देवगणों का बड़ा उत्साह होगा इससे दानवों के जीतने में समर्थ होजायँगे इसमें कुछ संशय नहींहै १२ जब देवदेव श्रीहरि ने देवताओंसे ऐसा कहा तो वे सब जगत्पति श्रीविष्णु जी के प्रणाम करके अपने स्थानपर आये व फिर दैत्यों से मिलापकरके १३ क्षीरसागर के मथने में सबों ने उत्तम उद्योगकिया व दैत्यों के राजा बलि ने जाकर मन्दराचल को उखाड़लिया १४ व उसी अकेले महाबली ने समुद्र में लेकर डालभीदिया फिर देवता व दैत्यों ने सब औषधियां भी समुद्र में डालीं १५ व हे राजन् ! श्रीनारायणजी की आज्ञा से वासुकि नागराज भी वहां आये व सब देवताओं के हित के लिये विष्णु भगवान् आप वहां आये १६ वहां विष्णु भगवान् के

पास आकर सब दैत्य व देवता मित्रता के भावसे क्षीरसागर के तीरपर स्थितहुये १७ व मन्दराचल को मथानी तथा वासुकि को मथानी की रस्सी बनाकर सबके सब अमृत के लिये शीघ्रता से मथने लगे १८ वहां श्रीविष्णुजी ने युक्तिसे दैत्यों को मुख की ओर लगाया व देवताओं को पूछकी ओर १९ हे राजन्! जब इसरीति से सब मथनेलगे तो आधारके न होने से मन्दराचल जल में घुसा इसको देख श्रीहरि ने बड़ी शीघ्रताके साथ २० सबलोगों के हितके लिये कच्छप का रूप धारणकिया व उसरूप को मन्दर के नीचेकिया २१ व जाकर मन्दराचल को नीचे से उठालिया व दूसरे रूप से उसपर्वत को ऊपर से दबाये रहे जिसमें बहुत न हिले २२ व देवताओं के संग अपने हाथों से जनार्दनजी ने भी नागराज वासुकि को खींचा व देवताओं से गुप्त एकरूप दैत्यों के मध्य में श्रीहरि ने किया २३ तब वे सब वेग से क्षीरसागर को मथने लगे सब बलवान् तो थेही अपनी शक्ति से मथतेरहे मथेहुये समुद्र से प्रथम २४ कालकूटनाम अत्यन्त दुःखदेनेवाला विष निकला उसे प्रथम सबनागों ने ग्रहणकिया जो कुछ उनसे बचा उसे शंकरजी ने ग्रहण किया २५ नारायण की आज्ञा से ही महादेवजी ने ग्रहण किया इससे उनका गल श्याम होगया इसीसे उनका नामभी तब से नीलकण्ठ हुआ फिर ऐरावत हाथी निकला व फिर उच्चैश्श्रवानामक घोड़ा निकला २६ ये दोनों दूसरी बार के मथनेपर निकले हैं यह बात

हमने सुनी है व तीसरी बार मथने से सुन्दरी अप्स-
रायें निकलीं व चौथीबार पारिजातनाम महावृक्ष
निकला इसी को कल्पवृक्ष भी कहते हैं २७ व पां-
चवीं बार मथने से क्षीरसागरमें से चन्द्रमा निकला
उसको महादेवजी ने अपने मस्तक में धारण कर-
लिया जैसे स्त्री अपने माथे में स्वतिक अर्थात् वेंदी
धारण करती है २८ फिर क्षीरसागर से नाना प्रकार
के दिव्य आभरण व रत्न निकले व सहस्रों गन्धर्वभी
निकले २९ इन सबों को समुद्र से निकले हुये देखकर
सब देवता व दैत्य आश्चर्य्ययुक्त होकर फिर हर्षित
हुये ३० व श्रीभगवान् की आज्ञा से देवताओं की
ओर धीरे २ मेघ भी बरसते जाते थे व पवन भी
मन्द २ चलता था ३१ व दैत्यलोग मुख की ओर तो
थेही वासुकिके मुख से विषयुक्त श्वास निकलते थे उन
के लगने से बहुत दैत्य तो मृतकही होगये नहीं तो
निस्तेज व निर्वीर्य्य तो सबके सब होगये ३२ हे राजेन्द्र!
उसके पीछे क्षीरसागर से कमल हाथ में लिये व अपने
तेज से सब दिशाओं को प्रकाशित करातीहुई लक्ष्मी
जी निकलीं ३३ व निकलतेही तीर्थों के जल से स्नान
करके व दिव्यवस्त्र अलंकार धारणकर दिव्य चन्द-
नादि सुगन्धित पदार्थलगाये पुष्पों से भूषित ३४
लक्ष्मीजी देवताओं की ओर आकर एकक्षणमात्र
खड़ी हुईं फिर जाकर श्रीविष्णु भगवान् के वक्षस्थल
में प्राप्तहुईं ३५ इसके पीछे क्षीरसागर से अमृत से
पूर्ण सुवर्ण का कलश लियेहुये धन्वन्तरिजी निकले

उनको देखकर देवतालोग बहुत प्रसन्न हुये ३६ व दैत्यलोग लक्ष्मी से परित्यक्त होनेके हेतु दुःखित हुये पर उन्होंने धन्वन्तरि के हाथ से अमृत का पात्र छीन कर सुखपूर्वक अपना मार्गलिया ३७ तब श्रीविष्णुजी ने देवताओं के हित के लिये स्त्री का रूप धारण किया जो कि सब उत्तमस्त्रियों के लक्षण से संयुक्त था व भूषण भी सब अंगों में वह रूप धारणकिये था ३८ फिर स्त्रीरूप धारणकिये भगवान् दैत्यों के निकटगये व दिव्यरूप अपूर्व उन स्त्रीरूप हरि को देखतेही असुरलोग मोहित होगये ३९ व अमृत से भरे हुये उस सुवर्ण के घड़ेको मारे मोह के भूमिपर धरके तत्क्षण कामबाण से पीड़ितहुये ४० बस इस प्रकार असुरों को मोहितकरके श्रीहरि ने अमृतघट उठाकर आय देवताओं को पिलादिया ४१ उसको पीकर हरिके प्रसाद से बलवान् व महावीर्यवाले होकर सब देवगण युद्ध करने के लिये दैत्यों के निकट गये ४२ व दैत्यों को रण में जीतकर अपना २ राज्य करने लगे हे राजन्! यह हमने श्रीहरि के अवतार की कथा आप से कही ४३ यह कूर्मजी का अवतार पढ़ते व सुनते हुये लोगों को पुण्य देताहै इससे तुम भी इसको पढ़तेसुनते रहो ॥ ४४ ॥

चौपाई ॥

अतुलदीप्ति कच्छप तनु येहू। नारायण सुरहित कियदेहू॥
पावन परम सकल अघहारी। रूप मनोहर जपत पुरारी॥४५॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेकूर्मावतारचरितेऽष्टत्रिंशोऽध्यायः॥३८॥

उन्तालीसवां अध्याय ॥

दो० उन्तालिसयें महँ कह्यो, शूकरतनु प्रभुकेर।
सकल विचित्र चरित्र सुख, देत उन्हें जो टेर॥१॥

मार्कण्डेयजी बोले कि, हे नराधिप! इसके पीछे अब श्रीहरिके अतिपुण्य वाराहअवतार की कथा कहते हैं उसे आप एकाग्रमन होकर सुनें १ जब ब्रह्मा का दिन बीतता है व तीनलोक प्रलय को प्राप्त होजाते हैं तो भूर्भुवः स्वः इन तीनों लोकों में केवल जल ही जल होजाता है २ व तीनों लोकों के सब प्राणियों को अपने में मिलाकर श्रीविष्णु भगवान् उसी एकार्णवजल में सोरहते हैं ३ शय्या वहां अनन्तनाग के शरीर की करते हैं यह शरीर सहस्रफणों से शोभित रहता है यह रात्रि सहस्रचतुर्युगियों की होती है उसमें ब्रह्मरूपी जगत्पति शयन करते हैं ४ व हमने सुना है कि दिति में कश्यपजी से महाबल पराक्रमी एक हिरण्याक्षनाम दैत्य उत्पन्नहुआ ५ वह पाताल में सदा बसा रहता था व देवताओं को रोंकता था बेचारे कहीं आनेजाने नहीं पाते थे व यज्ञ करनेवालों के अपकार के लिये कभी २ भूतल में भी आकर यत्न करता था ६ क्योंकि भूमि के ऊपर स्थित होकर मनुष्यलोग देवताओं की पूजा करेंगे इस बात को जानता था व उसी यज्ञके करनेसे उन मनुष्यों का बल वीर्य व तेज होगा ७ यह मानकर हिरण्याक्ष ने विचारा कि जब ब्रह्मा सृष्टि करेंगे तो ऐसा होगा इस से वह पृथ्वी की धारणा शक्ति लेकर ८ महाप्रतापी

असुर जल के मध्य में होकर रसातल को चलागया व विना शक्तिकी पृथ्वी को भी रसातलही में जाकर स्थापित किया ९ जब निद्रा बीती तब सर्वात्मा परमेश्वर ने विचारा कि हमारी पृथ्वी कहांगई फिर योगाभ्यास से जो चिन्तना की तो विदितहुआ कि भूमि तो रसातल में है १० इस लिये वेदमय बाराहरूप को धारण किया इस रूप के वेद तो चारो चरण हैं व यज्ञस्तम्भ डौहड़ी हैं यज्ञ की पताका मुख है ११ बड़ी चौड़ी तो उस रूप की छाती थी महालम्बायमान बाहु थे व बड़ाभारी मुख था अग्नि उसकी जिह्वा व स्रुव थूथुन व चन्द्र व सूर्य नयन १२ तड़ाग वापी कूपादि का बनवाना व अन्य नानाप्रकार के धर्म व हरिमन्दिरादि निर्माण कराना उसके श्रवण हैं व उसका शब्द सामवेद का गान है १३ काय प्राग्वंश है नासिका हवि कुश सब देह के रोम व सर्ववेदमय पुण्यसूक्त उसके कन्धे पर के केश हैं १४ नक्षत्रमण्डल व तारागण हार हैं यह रूप प्रलय के समुद्र का भूषणरूप हुआ इस प्रकार का बाराहरूप धारणकर श्रीनारायणभगवान् १५ रसातल में पैठे सनकादि स्तुति करते हुये चले जाते थे वहां जाकर हिरण्याक्ष को युद्ध में जीतकर १६ श्रीभगवान् दांतों के ऊपर पृथ्वी को लेकर रसातल से जल के ऊपर पूर्ववत् फिर स्थापित करदिया देवगणों ने उससमय बड़ी स्तुति की १७ पृथ्वी को स्थापित करके उसके ऊपर सब पर्वतों को यथा स्थान कल्पितकरदिया क्योंकि पृथ्वी की धारणा

शक्ति हरजाने पर जहां तहां सिकिल गये थे फिर काक-नाम तीर्थ में वह बाराहरूप छोड़कर १८ वैष्णवों के हितके लिये वह उत्तम तीर्थ बनादिया व फिर उन्हीं बाराहजी ने ब्रह्मा का रूप धारण करके सृष्टि की १९ बस इस प्रकार सब युगों में ब्रह्मा का रूप धारणकरके उत्पन्न करते व विष्णुरूप से पालन करते हैं व अन्त में रुद्ररूपी जनार्दन भगवान् इस विश्व का नाश करते हैं ॥ २० ॥

कुं० गाथा पुरुष पुराण वर वेदवेद्य की येहु।
सुनै पढ़ै जो पुरुष तुम ताके पुण्य सुनेहु॥
ताके पुण्य सुनेहु नेहु करिकै सो प्राणी।
जात चलो हरिलोक जपतहरिगुणनिजबाणी॥
बाणीपति प्रभुरूप धरेविचरत त्यहि साथा।
सकलपापतजि यहां अहो अद्भुत यह गाथा॥१२१॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेवाराहावतारचरित्रे एकोनचत्वारिंशोऽध्यायः॥ ३९ ॥

चालीसवां अध्याय॥

दो० चालिसयें महँ नृहरि अवतार कथा विस्तार।
मुनि भाष्यो महिपाल सों करिकै बहुत विचार॥ १॥

मार्कण्डेयजी सहस्रानीकजी से बोले कि हमने तुमसे बाराहावतार की कथा कही अब नरसिंहावतार की कथा यथामति कहते हैं सुनो १ दिति के हिरण्य-कशिपु नाम पुत्र पूर्वकाल में हुआ उसने निराहार कई सहस्रवर्ष [illegible] २ उसके तप करने से सन्तुष्ट होकर [illegible] आकर उस दानव से बोले

कि, हे दैत्येन्द्र! जो तुम्हारे मनमें हो वह वर मांगो ३ जब इसप्रकार ब्रह्माजी ने उस दैत्यराज से कहा तो वह हिरण्यकशिपु देवेश ब्रह्माजी के प्रणाम करके उनसे बोला ४ कि हे भगवन्! यदि आप हमको वरदेने के लिये आये हैं तो जो २ हम तुमसे मांगें वह सब आप देनेके योग्य हैं ५ न तो हम शुष्कपदार्थ से मरें न गीले से न जल से न अग्नि से न काष्ठ से न कीड़े से न पत्थर से न पवन से ६ न किसी आयुध से न शूल उठने से न पर्वतपर से गिरनेसे न मनुष्यों से न देवताओं से न दैत्यों से न गन्धर्वों से न राक्षसों से ७ न किन्नरों से न यक्षों से न विद्याधरों से न सर्पों से न वानरों से न मृगों से न मातृगणों से ८ न घरके भीतर न बाहर न और किसीमरण के हेतुओं से न दिन नें न रात्रि में वहुत कौन कहे न आपसे न आप की सृष्टिभर से आपके प्रसाद से मरें ९ हे देव, देवेश! बस यही बर आपसे मांगते हैं और कुछ नहीं मार्कण्डेयजी बोले कि, जब दैत्यराज ने ऐसा कहा तो ब्रह्माजी उससे बोले १० कि हे दैत्येन्द्र! हम तुम्हारे बड़े तप से सन्तुष्ट हुये इससे दुर्लभ भी परम अद्भुत ये सब वर तुमको देते हैं ११ औरों को न हमने ऐसा कभी वरदानही दिया न और किसी ने ऐसा तपही किया इससे हे दैत्यराज! हमने तुम्हारे सब मांगे हुये वरदिये वैसेही हों जैसे तुम चाहते हो १२ हे महाबाहो! जाओ व तपसे बढ़ाहुआ फलभोगो इस रीति से दैत्यराज हिरण्यकशिपु को वर देकर १३

ब्रह्माजी अपने उत्तम ब्रह्मलोक को चलेगये यह दैत्य भी वर पाकर और भी बलवान् होजानेसे मारे बलके अहंकारी होगया १४ व समर में सब देवताओं को जीतकर स्वर्ग से पूर्व दिशाकी ओर पृथ्वीपर कर दिया व आप सर्वशक्ति युक्त स्वर्ग का राज्य करने लगा १५ व उसके भयसे रुद्रादि सब देवगण व ऋषिलोग भी मनुष्यों के शरीर धारण किये हुये पृथ्वीपर विचरनेलगे १६ जब हिरण्यकशिपु ने इतना बड़ा त्रिलोकी का राज्य पाया तो सब प्रजाओं को बुलाकर उनसे यह वाक्य बोला १७ कि तुमलोग न किसी देवता के लिये यज्ञकरो न होम करो न कुछ दान दो क्योंकि तुमलोगों के हमीं पति हैं क्योंकि तीनों लोकों के स्वामी हैं व तुम हमारी प्रजा हो १८ इससे हमारीही पूजा यज्ञ दानादि कर्मसे करो यह सुन-कर दैत्येन्द्र के भयसे सब प्रजा वैसाही करनेलगी १९ तब वहां ऐसा करनेसे हे नृपसत्तम ! सब चराचर तीनों लोक अधर्मयुक्त होगये २० स्वधर्म के लोप से सबों की पापमें मति उत्पन्न हुई इस प्रकार जब बहुत काल बीतगया तो इन्द्रादि सब देवगण २१ नीतिशास्त्र जाननेवाले व सब धर्मशास्त्रोंके वेत्ता बृहस्पतिजी से विनययुक्त होकर बोले कि हे मुनिसत्तम ! तीनों लोकों के हरनेवाले इस हिरण्यकशिपु के वधका उपाय बहुत शीघ्र हमलोगों से कहिये २२ यह सुनकर बृहस्पतिजी बोले कि, हे देवताओ ! अपने पदके पानेके लिये हमारे वाक्यों को सुनो २३ बहुधा महासुर हिरण्यकशिपु

अब क्षीणभाग्य होगया है क्योंकि शोक बुद्धि को नाश करता है व शोक पढ़े लिखे हुये वेद शास्त्र का नाश करता है २४ शोक मति को नशाता है इससे शोक के समान कोई शत्रु नहीं है अग्नि का सम्बन्ध सहने के योग्य है व दारुण शस्त्रों का स्पर्श भी पुरुष सहसक्ता है २५ पर शोक से उत्पन्न दुःख नहीं सहसक्ता हमलोग काल के निमित्त से उसका नाश लक्षित करते हैं क्योंकि उसे शोक आज कल है २६ व इसके सिवा सब पण्डितलोग सब कहीं स्थितहुये यही कहते हैं कि बहुत ही शीघ्र यह दुष्ट नाश हुआही चाहता है २७ व आज कल के शकुन भी हम से यही कहते हैं कि देवताओं की परम समृद्धि हुआ चाहती है व वे अपना पद पाया चाहते हैं और हिरण्यकशिपु का नाश हुआ चाहता है २८ जिससे कि ऐसा है इससे तुम सब विलम्ब न करो शीघ्रही जहां श्रीनारायण भगवान् शयन करते हैं उसी क्षीरसागर के उत्तरवाले किनारे पर जाओ २९ तुमलोग जैसे जाकर स्तुति करोगे उसी क्षण में परमेश्वर प्रसन्न होंगे व जब वे प्रसन्न होंगे तो उस दैत्य के वध का उपाय बतावेंगे ३० जब बृहस्पति जीने ऐसा कहा तो सब देवगण साधु २ कहकर बोले व बड़ी प्रीति व भक्ति से सबों ने वहां जाने में बड़ा उद्योग किया ३१ पुण्य किसी यात्रावाली तिथि में व शुभलग्न में पुण्याहवाचन व स्वस्तिवाचन मुनिवरों से कराकर सब देवताओं ने यात्रा की ३२ कि जिसमें उस दुष्ट दैत्य का नाश हो व अपना ऐश्वर्य बढ़े चलने

के समय सबों ने महादेव जी को आगे करलिया व क्षीरसागर के उत्तरवाले तीरपर पहुँचे ३३ व वहां पहुँचतेही सब देवता विष्णु जिष्णु जनार्दनकी स्तोत्रों से स्तुति करते हुये व पूजा करते हुये स्थितहुये ३४ फिर भगवान् महादेवजी भी पार्वती सहित भगवान् जनार्दनजीकी स्तुति उनके नामों से एकाग्र मन होकर करने लगे ३५ श्रीमहादेवजी बोले ॥

चौपाई ॥

विष्णु जिष्णु विभुदेव मखेशा। यज्ञपाल प्रभविष्णु सुरेशा ॥
लोकात्माग्रसिष्णुजनपालक। कीजेकृपाशत्रुकुलघालक १।३६
केशव कल्प केशिहा स्वामी। सब कारण कारण खगगामी ॥
कर्मकारि वामता अधीशा। वासुदेव पुरु संस्तुतईशा २।३७
माधव मधुसूदन वाराहा। आदिकर्तृ नारायण काहा ॥
नर अरु हंस हुताशन नामा। विष्णुसेनसवपूरणकामा ३।३८
ज्योतिष्मन् द्युतिमन् श्रीमाना। आयुष्मन् पुरुषोत्तम भाना ॥
कमलनयनवैकुण्ठसुरार्चित। कृष्णसूर्यभवभवभयभंजित ४।३९
नरहरि महाभीम नख आयुध। वज्रदंष्ट्र जगकर्ता वरबुध ॥
आदिदेव यज्ञेश मुरारी। गरुड़ध्वज पावन असुरारी ५।४०
गोपतिगोप्ताभूपति गोविन्द। भुवनेश्वरकजनाभनमितइन्द ॥
हृषीकेश दामोदर विभुहरि। पालहुसदाकृपाअपनीकरि६।४१
वामन दुष्ट दमन अहेशा। गोप बलभ गोविंद रमेशा ॥
प्रीतिवर्ध त्रैविक्रम देवा। करों त्रिलोकप तुम्हरी सेवा ७।४२
भक्तिप्रिय अच्युत शुचिव्यासा। सत्य सत्य कीरति भववासा ॥
ध्रुवकारुण्यपापहरकारुण। शान्तिविवर्धन पूजितसारुण८।४३
संन्यासी बदरीवन वासी। शान्त तपस्वी शास्त्रप्रकासी ॥

मन्दरगिरिकेतनचपलाप्रभ। करहुकृपा हमपरश्रीवल्लभ ९। ४४
भूतावासरु रमानिवासा। गुहावास श्रीपति भयनासा॥
तपोवासदमवाससनातन। सत्यवासममहरहुदुरितगन १०।४५
पुरुष पुण्य पुष्कल कमलेक्षण। पूर्ण महेश्वर पूर्तिविचक्षण॥
पुण्यविवर्धन त्रिज्ञपुराणा। सबपुण्यज्ञतुम्हेंश्रुतिभाणा ११।४६
शंखी चक्री गदी हलीशा। मुशली हारी ध्वजी कवीशा॥
शार्ङ्गीकवचीलाङ्गलधारी।मुकुटीकुण्डलिमेखलिभारी १२।४७
जेता जिष्णु महावीरेशा। शान्त शत्रुतापन देवेशा॥
शान्तिकरणशत्रुघ्नसुशास्ता। शंकरशंतनुनुतविख्याता१३।४८
सारथि सात्त्विक स्वामी प्रियसम। सामवेद सावन समृद्धिमम॥
सम्पूर्णांशसाहसीबलकर। रमानिवासहरहुसुरवरदर १४। ४९
स्वर्गद कामद कीर्तिद श्रीप्रद।मोक्षद कीर्ति विनाशनगतमद॥
पुण्डरीकलोचनभवमोचन।क्षीरजलाधिकृतकेतनशोचन १५।५०
सुरासुरस्तुत ईशरु प्रेरक। पापविनाशन शुभगुण हेरक॥
यज्ञवषट्कृत तुम ॐकारा। तुमही अग्नि विदितसंसारा१६।५१
स्वाहा स्वधा देव पुरुषोत्तम। तुमहौ सबनहिं अपर महत्तम॥
देवदेवशाश्वत भगवन्ता।विष्णु नमततवचरणअनन्ता१७।५२
अप्रमेय नहिं अन्त तुम्हारा। यासों प्रणमत देव उदारा॥
इतने नाम उदार बखानी। बिनतीकीन महेश भवानी १८।५३

जब देवताओं के संग महादेव व पार्वतीजी ने इतनी स्तुति की तो भगवान्‌जी प्रकट होकर सब देवताओं से यह बोले कि हे देवताओ! तुमलोगों ने केवल नामों से हमारी स्तुति की है ५४ इससे हम बहुत प्रसन्न हुये बताओ तुम लोगों का कौन अर्थ सिद्ध करें देवगण बोले कि हे देवदेव, हृषीकेश, पुण्डरीकाक्ष, हे माधव ५५

आपही सब जानतेहो फिर क्यों पूछतेहो श्रीभगवान् बोले कि, हे असुरों के नाश करनेवालो ! तुम्हारे आगमन का कारण सत्य २ हम सब जानते हैं ५६ कि हमारे पुण्य १०० नामों से तुम लोगों की ओर से शंकरजी ने स्तुति हिरण्यकशिपु के नासने के लिये की है ५७ हे महामते ! इस तुम्हारे कहेहुये शत नाम से नित्य जो हमारी स्तुति करेगा वह जानो नित्य हमारी पूजा करेगा जैसे कि तुमने की है ५८ हे देव ! हम प्रसन्न हुये अब तुम अपने कैलास के शुभ शिखर पर जाओ हे भव! अब तुमसे स्तुति कियेगये हम हिरण्यकशिपु को मारडालेंगे ५९ व हे देवताओ! तुमभी जाओ और कुछ कालतक रास्ता परखो इसके पुत्र का प्रह्लाद नामहै वह बड़ा बुद्धिमान् और परमवैष्णव है ६० हे देवताओ! जब दैत्यलोग उससे द्रोह करेंगे तो यद्यपि उसने वर मांग लिया है कि देवता दैत्यादिकों के मारे हम न मरें पर हम मारीही डालेंगे जब विष्णुजीने देवताओं से ऐसा कहा तो वे लोग श्रीनारायणजी के नमस्कार करके चलेगये ॥ ६१ ॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेविष्णुशतनामस्तोत्रकीर्त्तनन्नाम चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४० ॥

इकतालीसवां अध्याय ॥

दो० इकतालिसयें महँ कनक कशिपुतनय प्रह्लाद ।
पठन पिता सुतबतकही युत बहुवाद विवाद ॥ १ ॥

इतनी कथा सुनकर सहस्रानीकजी मार्कण्डेयजी से

बोले कि हे सर्वशास्त्रविशारद, महाप्राज्ञ, मार्कण्डेयजी अब विधिपूर्वक नृसिंहजी के जन्म की कथा हम से कहो १ व हे पापरहित! प्रह्लादजी का भी चरित विस्तारसहित कहो हे महायोगिन्, महामुने! हम्लोग धन्य हैं जो तुम्हारे प्रसाद से २ श्रीहरिकथारूप दुर्लभ अमृत पीते हैं मार्कण्डेयजी बोले कि जब हिरण्यकशिपु तप करनेके लिये वन को चला था ३ तब सब दिशा जल उठी थीं व भूमिकम्प हुआथा तब उसके भाई बन्धु हितकारी सेवक मित्रादिकों ने रोंका कि ४ हे राजन्! ये अगुणकारी शकुन हुये इससे इस कार्य में अच्छा नहीं है इसके सिवाय तुम तीनोंलोकों के स्वामी हो देवताओं को तुमने पराजित करलिया है ५ फिर अब तुमको कहींसे भय नहीं है तो किसलिये तप करने को जातेहो हमलोग जो बुद्धिसे विचारते हैं तो इस तप करनेका कुछ प्रयोजन नहीं देखते ६ क्योंकि जो इस संसार में पूर्णकाम होता है वह तप नहीं करता इस रीति से रोंकाभी गया परन्तु दुर्मद होनेके कारण मोहित तो थाही ७ अपने दो तीन मित्रों को संग लेकर कैलास पर्वत के शिखर पर को चलागया व तप करने लगा जब उसने परमदुष्कर तप किया तो ८ कमल से उत्पन्न ब्रह्माजी के बड़ीभारी चिन्ता उत्पन्नहुई व विचारनेलगे कि हम क्या करें यह दैत्य तपसे कैसे निवृत्त हो ९ इस प्रकार चिन्ता से व्याकुल ब्रह्माजी से उनके अङ्गसे उत्पन्न नारद मुनि प्रणाम करके बोले हे भूपाल १० नारदजी ने कहा कि हे तात, नारायण

परायण ! आप किसलिये खेद करते हैं क्योंकि जिनके मनमें गोविन्द रहते हैं वे शोच करने के योग्य नहीं होते ११ हम तप करते हुये उस दितिके पुत्रको रोंक देंगे क्योंकि जगत्स्वामी नारायणजी हमको मति देंगे १२ मार्कण्डेयजी सहस्रानीक राजा से बोले कि यह कह व पिताके प्रणाम करके व वासुदेव भगवान् को मन में स्मरण करतेहुये मुनियों में श्रेष्ठ नारदजी पर्वतमुनिके संग चले १३ चलनेके समय दोनों मुनि कलविंकपक्षी बनकर पर्वतोंमें उत्तम कैलास पर को गये जहां कि श्रेष्ठ हिरण्यकशिपु अपने दो तीन मित्रों सहित तप करता था १४ मुनिजी स्नान करके वहीं एकवृक्ष की डालीपर बैठकर उस दैत्य को सुनातेहुये गम्भीर वाणी से बोले १५ "ॐनमोनारायणाय" इसको तीनबार जपकर वे उदार मतिवाले नारदजी फिर चुपहोगये १६ उस कलविंक का वह वचन सुनकर हिरण्यकशिपु दैत्य ने बड़ा क्रोधकरके धन्वा उठाया १७ व जबतक धन्वापर बाण चढ़ाकर उन दोनों पक्षिरूप मुनियोंपर चलाया चाहे कि तबतक नारद व पर्वत दोनों वहांसे उड़गये १८ व मारे कोप के युक्त होकर वह हिरण्यकशिपु भी उस आश्रम को छोड़कर अपने गृह को चलाआया १९ उसकी स्त्री का कयाधू नाम था इसका पश्चाद्भाग बहुत सुन्दर था वह रजस्वला होकर दैवयोगसे उस दिन स्नानकर रही थी २० जब रात्रिहुई तब वह अपने पतिके निकटगई व एकान्त में उससे पूछा कि हे स्वामिन् ! जब तुम तप करने को गयेथे २१

तब तुमने कहाथा कि हम दश सहस्रवर्षतक तप करेंगे सो हे महाराज! अभी थोड़ेही दिनोंमें आपने कैसे व्रत को छोड़दिया २२ हे नाथ! हमसे सत्यही कहिये क्योंकि हम स्नेह से पूछती हैं यह सुनकर हिरण्यकशिपु बोला कि हे सुन्दरि! व्रतविनाश करनेवाली हमारी वाणी सत्य २ सुनो २३ वह क्रोधके उत्पन्न करनेवाली व देवताओं को हर्ष बढ़ानेवाली है हे देवि! महाआनन्द देनेवाले कैलास के शिखर पर२४ "नमो नारायणाय" इस शुभ वाणीको दो तीनबार कहतेहुये दो पक्षियोंको हमने देखा २५ हे वरानने! उससे हमारे मनमें अतीव क्रोध उत्पन्नहुआ इससे जबतक धन्वापर बाण चढ़ाकर हम छोड़ना चाहें कि हे भामिनि! २६ तबतक वे दोनों पक्षी डरकर देशान्तर को चलेगये व हम होने वाले कार्य के बलसे व्रत त्यागकर चलेआये २७ मार्कण्डेयजी बोले कि जैसेही उसने ऐसा कहाहै कि उसका वीर्य पतित होनेको हुआ व भार्या जानों ऋतु-स्नान करीचुकी थी इससे उसके गर्भाधानकी विधिसे गर्भ स्थित होगया २८ इस प्रकार गर्भाधानकी रीति से जो गर्भ धारण हुआ तो उस गर्भ से नारदजी के उपदेशसे परमवैष्णव पुत्र उत्पन्न हुआ २९ उसकी कथा आगे कहेंगे हे राजन्! श्रद्धा में तत्पर होओ उस दैत्य का पुत्र जन्मही से वैष्णव प्रह्लाद नाम हुआ ३० वह निर्मल पुत्र उस मलिन आश्रयवाले असुरकुल में बढ़ा जैसे कि पाशरूप संसार से छुड़ाने वाली हरिकी भक्ति इस मलिन कलियुग में उत्पन्न

होती है ३१ वह बालक तीनों वेदों के स्वामी श्री विष्णुजी की भक्ति से बढ़ताहुआ शोभित हुआ यद्यपि बालकही था पर ऐसा महात्मा था कि जब बहुतही छोटा था तभी से श्रीविष्णुजी की भक्ति को फैलाता हुआ शोभित होता था ३२ उसका उस कुल में ऐसा होना ऐसा था कि जैसे चौथेयुग कलियुग में धर्म अर्थ काम व मोक्ष किसीको कीर्तिदें वह बाललीलाओं के खेलों में भी कृष्णचन्द्रहीकी कथा की कहानी बनाकर बुझाता था व सब लड़कों को समझाता ३३ व कथाओं के प्रसंगों में भी कृष्णही के चरित कहता क्योंकि उस का स्वभावही वैसा था इससे बालपन में भी विचित्र कर्म करताहुआ परमेश्वर स्मरणरूप अमृत पान करता हुआ बढ़ा ३४ कमल के समान कोमल मुखवाले व विशाल नेत्रवाले उस बालक को गुरुके गृह से पढ़े आते हुये को स्त्रियों के बीच में बैठेहुये उस खल दैत्येन्द्र ने देखा ३५ तो वह एक हाथमें तो मिट्टी भरीहुई दवायत लिये व एकमें मुठियापर बड़े आदरसे कृष्ण नाम लिखीहुई पाटी लिये था ३६ उसको बुलाकर लाड़ करताहुआ परमानन्दित दैत्यराज पुत्र से बोला कि हे पुत्र! तेरी माता हमसे नित्य कहा करती है कि हमारा पुत्र बड़ा बुद्धिमान् है ३७ सो जो कुछ तुमने गुरु के घरमें सीखा हो वह कहो उसमें भी जो अति आनन्द उत्पन्न करानेवाला तुमको अच्छीतरह आता हो बनाय विचार करके कहो ३८ तब जन्म के वैष्णव प्रह्लादजी बड़ेहर्ष से अपने पिता से बोले कि, अच्छा

तीनों लोकों से वन्दित गोविन्दजी के प्रणाम करके तुमसे कहते हैं ३६ इस प्रकार पुत्रकी कही हुई अपने शत्रु विष्णु की स्तुति सुनकर क्रुद्ध भी हुआ परन्तु उसको धोखा देनेके लिये स्त्रियोंके बीच में बैठाहुआ वह खल बड़ेजोरसे हँसा मानों बड़े हर्षमें पड़ा था४० व बालक को गोदमें बैठाकर अच्छीतरह छाती में लपटा कर बोला कि हे पुत्र! हित वचनसुनो राम, गोविन्द, कृष्ण, विष्णु, माधव, श्रीपति ४१ ऐसा जो कोई कहते हैं वे सब हमारे वैरी हैं हे पुत्र! यह बात हमने सबको सिखादी है कोई भी यहां ऐसा नहीं कहता बताओ पुत्र! तुमने यह वचन कहां सुना ४२ पिता का वचन सुनकर धीमान् प्रह्लादजी अभय होकर बोले कि हे आर्य! कभी ऐसा न कहना ४३ क्योंकि सब ऐश्वर्यों का स्थान व मन्त्र धर्मादिकों के बढ़ाने वाला कृष्ण ऐसा नाम जो मनुष्य कहता है वह अभयपद को प्राप्त होता है ४४ व कृष्ण की निन्दा से उठेहुये पाप का अन्त नहीं होता इससे अपने शुद्ध होनेके लिये भक्ति से राम माधव व कृष्ण ऐसा स्मरण करो क्योंकि तुमने अभी कृष्ण की निन्दा की है ४५ यह बात हम गुरुजी से भी कहेंगे क्योंकि यह सबकी हितकारिणी है इससे सबके ईश सब पापक्षय करने वाले श्रीकृष्णजी के शरण को जाओ ४६ तब तो क्रोध प्रकट करके हिरण्यकशिपु पुत्र को अपकार वचन कहता हुआ बोला कि किसने इस बालक को इस कुदशा को पहुँचाया ४७ धिक् २ हाहा हे दुष्टपुत्र!

हमने क्या पापकिया जो ऐसा पुत्र हुआ है दुराचार, पापिष्ठ, अधमपुरुष! जा २ यह कहकर चारों ओर देखकर बोला कि इस लड़के के पढ़ानेवाले को ४८ क्रूरपराक्रम करनेवाले क्रूर स्वभाव के दैत्योंसे बँधुआ कराकर यहां लाओ यह सुनकर दैत्यों ने उसी तरह गुरुको लेआकर दैत्यराजके निकट पहुँचादिया तब वे बुद्धिमान् गुरुजी उस खलसे बोले कि हे देवताओंके नाशक, महाराज! परखिये तो ४९ हे देव! तुमने एक खेलके साथ सम्पूर्ण तीनोंलोक जीत लिये सो भी कईबार सोभी विना क्रोध कियेहुये फिर मुझ अल्प छोटे पुरुष पर क्रोध करने से क्या है ५० यह ब्राह्मण का सामयुक्त वचन सुनकर दैत्यों का राजा बोला कि हे पाप! हमारे बालक पुत्रको तुमने विष्णु की स्तुति पढ़ादी ५१ यह कहकर फिर राजा अपने पुत्रसे बोला कि हमारे पुत्र तुमको इन ब्राह्मणों ने कौन जड़ता समझादी कि तुमको ऐसा करडाला ५२ इससे अब विष्णु के पक्षवाले इन धूर्त्त ब्राह्मणोंके निकट एकान्तमें नित्य का बैठना छोड़दो व इन गुरु पुत्रादिकोंको क्या ब्राह्मण मात्र का संग छोड़दो क्योंकि इनका संग अच्छानहीं है ५३ क्योंकि इन ब्राह्मणोंने हमारे कुल के उचित तेजको लुप्त करदिया सो क्यों न हो जिस पुरुष को जिसकी संगति होती है उसका वैसाही गुण होजाता है जैसे कि मणि का गुण होता है कि वही हाथी के मस्तकवाला और गुणकरता है व सर्पवाला और म-छलीवाला और ५४ इससे बुद्धिमान् को चाहिये कि

अपने कुल के ऐश्वर्य के लिये अपने कुलवालों केही संग उठना बैठना बोलना चालनारक्खे विष्णु के पक्ष वालों का नाशकरना हमारे पुत्रको उचित है सो उसे छोड़ ५५ आपही विष्णु का भजन करताहुआ मूढ़ तू क्यों नहीं लजाता अरे सब विश्वभर के नाथ हमारा पुत्र होकर तू औरको नाथ बनाना चाहता है ५६ हे पुत्र! तुम जगत् का निश्चय सुनो इसमें अपना प्रभु कोई नहीं है किन्तु जो शूरवीर होता है वही राजश्री को भोगता है व वही प्रभु होता है व वही महाईश्वर होता है ५७ व वही देव कहाता है जैसे कि हमने तीनोंलोकों को जीतलिया है अब हमीं सबों के अध्यक्ष हैं इससे जड़ता को छोड़ो व अपने कुल के उचित कर्म को भजो ५८ नहीं तो अन्यलोग भी तुम को मारडालेंगे व यह कहेंगे कि यह असुर है पर सुरों की स्तुति करता है जैसे कि मार्जार मूषकों की स्तुति करता है तो उसको कोई नहीं डरते ५९ व जब अपने वैरी सर्पों के शरणमें मोर जाय तो उसको दुर्निमित्त समझना चाहिये ऐसा करनेपर बड़े भारी ऐश्वर्यको पाकरभी बुद्धिरहित लोग लघुता को प्राप्तहोते हैं ६० जैसे कि स्तुति करनेके योग्य हमारा यह पुत्र देवताओं की स्तुति करता है जो कि सदा हमलोगोंकी ही स्तुति किया करते हैं अरे मूढ़! हमारे ऐसे ऐश्वर्यको देखकर भी तू हमारे आगे हरिका नाम लेता है ६१ अरे जो कि अपनी बराबर के नहीं हैं उन हरिकी स्तुति करनी बड़ी विडम्बना की बात है हे राजन्! पुत्रसे यह कहकर

बड़े क्रोधसे भयानक हो ६२ टेढ़ी दृष्टि से देख रोषके मारे कांपताहुआ वह अपने पुत्रके गुरुसे बोला कि अरे पशुरूप, ब्राह्मण! जा २ अब अच्छी शिक्षा हमारे पुत्र को दे ऐसा न हो कि फिरभी ऐसाही पढ़ावे ६३ यह सुनकर आपकी बड़ी कृपाहुई जो मेरे ऊपर प्रसन्न हुये ऐसा कहताहुआ दुष्ट राजा का सेवक वह ब्राह्मण अपने घर को चलागया व विष्णु को छोड़कर दैत्य के कहने पर चलने लगा सो क्यों न ऐसाकरता क्योंकि जो अपने पालन पोषणके लोभी होते हैं वे क्या नहीं करते ॥ ६४ ॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेएकचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४१ ॥

बयालीसवां अध्याय ॥

दो० बयालिसेहूँ महँ कनक, कशिपु और प्रह्लाद।
राजनीति हरिभक्तिकह, क्रमसों रहित विषाद ॥ १ ॥

मार्कण्डेयजी राजा सहस्रानीकजी से बोले कि हरि की भक्ति से भूषित वे प्रह्लादजी जब दैत्योंसे गुरुके गृह में पहुँचायेगये तो बहुतही शीघ्र सम्पूर्ण विद्याओं को पढ़तेहुये वे योगी काल बिताते २ कौमार अवस्था को पहुँचे १ व बहुधा कौमार अवस्था को पाकर लोग नास्तिकता व दुष्टचाल को पुष्टकरते हैं परन्तु उसी अवस्थामें इन प्रह्लादको बाहरके सब पदार्थों में विरक्ति व हरिमें भक्तिहुई यह बड़े आश्चर्य की बात है २ फिर एकदिन जब सम्पूर्ण विद्या पढ़चुके तब हिरण्यकशिपु ईश्वर को अच्छी रीति से जाननेवाले प्रह्लाद को बुलवा कर प्रणामकरतेहुये उनसे बोला कि ३ हे देवताओं के

नाशक! अज्ञानकी खानि बाल्यावस्था से छूटगये यह अच्छीबात हुई इसीसे अब बहुत शोभित होतेहो जैसे कि अन्धकारसे निकलने से सूर्य शोभित होते हैं ४ बाल्यावस्थामें तुम्हारी ही नाईं हमको भी ब्राह्मणों ने जड़तामें डालकर मोहित कियाथा पर जब अवस्था बढ़ी तब इस प्रकार से हमने सीखा हे पुत्र! ५ सो अब राज्यभार उठानेवाले तुम पुत्रको निष्कण्टक राजभार सौंपकर तुम्हारी राजलक्ष्मी को देखतेहुये सुखी होंगे क्योंकि बहुतदिनों से यह भार हमारे ऊपर लदाथा ६ जब २ पिता पुत्रकी निपुणता देखता है तब २ मनकी व्यथाको छोड़कर बड़े सुख को पाताहै ७ तुम्हारे गुरुने भी हमारे आगे तुम्हारी निपुणता का वर्णन किया सो उसके सुनने की इच्छा जो हमारे कान करते हैं तो कुछ आश्चर्य की बात नहीं है ८ क्योंकि सबका चित्त चाहता है कि नेत्रों से शत्रुकी दरिद्रता देखें व कानों से पुत्र के सुन्दर वचन सुनें व माया करनेवालों के अंगों में युद्ध में लगेहुये घाव देखें क्योंकि ये कार्य महोत्सवके हैं ९ इस तरह के दैत्यराज के सयुक्तिक वचन सुनकर महायोगी प्रह्लादजी निश्शङ्क होकर व प्रणाम करके पिता से बोले १० हे महाराज! सत्यही पुत्रके सुन्दर वचन कानों के महोत्सव होतेहैं परन्तु वे वचन जो विष्णु भगवान् के सम्बन्धी हों तो अन्य नहीं महोत्सव होते ११ क्योंकि जिस वचन में संसार के दुःखसमूह सूखे इन्धन के जलाने के लिये अग्निरूप श्रीहरि गायेजाते हैं वही नीतिहै व वही सुन्दरवचन वही कथा वही श्रवण करने के योग्य

व वही सुनने लायक काव्य है १२ बस जिस शास्त्रमें भक्तों के वाञ्छित देनेवाले अचिन्त्य श्रीहरि की स्तुति की जाती है उसीका शास्त्र नामहै और जिसमें संसारी दुःखों के समूह भरे हैं हे तात! उस अर्थशास्त्रसे क्या है १३ हे तात! उस शास्त्र में श्रमकरने से क्या है जिसमें कि आत्मा ही माराजाता है इससे वैष्णवशास्त्र सुनने व सेवाकरने के योग्य सदा है १४ बस जिनको संसार के क्लेशों से छूटने की इच्छाहो वे इसी वैष्णव-शास्त्र को सुनें क्योंकि विना इसके सुने जीव सुखी नहीं होता इस प्रकार के पुत्र के वचन सुनता हुआ हिरण्यकशिपु १५ दैत्यों का राजा जल उठा जैसे तपाये हुये घी में तुरन्त जल पड़ने से वह अधिक जल उठताहै जनोंके संसारी दुःख नाशनेवाली पुण्य प्रह्लाद की बाणी १६ क्षुद्र वह दैत्य न सहसका जैसे उल्लू पक्षी सूर्यकी प्रभा को नहीं सहसक्ता चारों ओर देखकर क्रुद्ध होकर दैत्यवीरों से बोला कि १७ इस कुटिल को अति भयंकर शस्त्रों के चलाने से मारडालो सो यों नहीं सब सुकुमार अंगोंको प्रथम काट २ छेद २ कर अलगकरदो फिर मारो देखें तो अपने आप से हरि इसकी रक्षाकरे १८ जिसमें इसी समय यह हरि की स्तुतिसे उत्पन्न फल देखे इसके सब अङ्ग काक चील्ह गृध्र आदि पक्षियों को काट २ कर बांट दो १९ बस अपने स्वामी की आज्ञासे अस्त्र शस्त्र उठाकर अपने वीरशब्दों से डरवाते हुये दैत्यलोग अच्युत भगवान् के परमप्रियभक्त प्रह्लादजी को मारनेलगे २०

प्रह्लादजी ने भी अपने स्वामी का ध्यानकरके ध्यान वज्र ग्रहणकिया व सत्यरस से भीगेहुये इस प्रकार ध्यान में निश्चल प्रह्लाद भक्त का दुःख न सहकर सब श्रीविष्णुजी ने रक्षाकरली इससे दैत्यराक्षसों के शस्त्रों को प्रह्लादजी के अंगों में लगने का कहीं स्थानही न मिला २१। २२ नीलकमल के खण्डों के समान एक २ के अनेक खण्ड होकर पृथ्वीपर सब शस्त्र गिरपड़े भला प्राकृत शस्त्र श्रीहरि के प्रिय को क्या करसकेंगे २३ क्योंकि दैहिक दैविक व भौतिक महाअस्त्र शस्त्रों के तापों का समूह जिस भगवद्भक्त से डरता है व व्याधि राक्षस ग्रहादिक तभीतक जनों को पीड़ित करते हैं २४ कि जबतक गुहाशय श्रीविष्णुजी को चित्त थोड़ा भी स्मरण नहीं करता व प्रह्लादजी के शरीर में लगकर खण्ड २ हुये उन शस्त्रों से जो कि उलटे उछलेथे २५ हन्यमान होकर वे मारनेवाले दैत्य राक्षस भाग खड़ेहुये उन अस्त्रों के खण्डोंने मानों तुरन्तही उनदुष्टों की दुष्टता का फल देदिया इसबात में जाननेवालों को तो कुछ आश्चर्यही नहीं हां मूर्खों को तो विस्मय हुआही होगा २६ व इस प्रकार का वैष्णवबल देखकर राजा हिरण्यकशिपु भयभीत हुआ व फिर उनके वध का उपाय विचारतेहुये उस दुष्ट मतिने २७ बड़े बड़े विषधर सर्पोंको बुलवाकर जो उसके भयके मारे विना उसकी आज्ञा किसीको काट नहीं सक्के थे उनको आज्ञादी व कहा कि इसने हरि को संतुष्टकिया है इससे अशस्त्र से वधकरनेके योग्य

है २८ इससे आपलोग इसे विषरूप आयुधों से अभी मारडालें हिरण्यकशिपु की आज्ञा सुनकर नागलोगों ने उसकी आज्ञाको शिरसे ग्रहणकिया क्योंकि वे तो बेचारे आज्ञाकारी ही थे २९ इस लिये विषके मारे जलतेहुये दांतों व कराल चौहड़ीवाले व चमकते हुये दशहज़ार सर्प जोकि किसी के खींचने के योग्य न थे पर हरि की महिमासे युक्त प्रह्लाद के खींचने के लिये नियुक्तहुये इससे वे सारेशेष के श्रीहरि के प्रिय के ऊपर जा कूदे ३० यद्यपि उनके विषही आयुधथा पर श्रीहरि के बल के स्मरण से बड़े दुःख से न कटने फूटनेवाले प्रह्लादजी के शरीर में की थोड़ीसीभी खाल काटनेको न समर्थहुये किन्तु हरिके पालित देह में काटकर वे बेचारे विना दांतों के होगये ३१ तब रुधिर बहने के कारण उदासीनमूर्त्ति व फटेहुये मस्तकोंवाले विना दांतों के भुजंगम पहुँचकर उन्होंने दैत्यराजसे विज्ञापन किया उस समय सब ऊधीसांसें लेते व फनमारे पीड़ा के थर २ कँपाते थे ३२ हे प्रभो! हमलोगोंने पर्वतों को भी जब कभी काटा है तो केवल उनकी भस्महीं शेष रहगई है और कुछभी नहीं परन्तु अबकी जिस काममें नियुक्तहुये उस कार्य के करने में असमर्थ हुये वरन महानुभाव तुम्हारे इस पुत्रके वधकेलिये नियुक्त होनेसे विना दांतों के होगये ३३ इस प्रकार सब नाग बड़ी कठिनता के वृत्तान्त कहकर स्वामी की आज्ञा पाकर कृतार्थहोकर चलेगये व प्रह्लादकी ऐसी सामर्थ्य का कारण विचारते रहे कि क्या है ३४ मार्कण्डेयजी

बोले कि जब ऐसाहुआ तो असुरों का राजा मन्त्रियों से विचारकरवाकर व निश्चयकरके कि यह पुत्र दण्ड देनेसे साध्य नहीं है इससे अदण्डसे साधन करनाचाहिये इस लिये समझा बुझाकर अपने पास बुलाकर प्रणाम करतेहुये निर्मल चित्तवाले उन प्रह्लाद से बोला ३५ कि हे प्रह्लाद! जो अपने अङ्ग से उत्पन्न हुआ है अर्थात् पुत्र जो दुष्टभी हो तो भी वध करडालने के योग्य नहीं होता इसीहेतु से आज हमारे कृपा उत्पन्न हुई इससे तुमको मार नहीं डाला ३६ इस वार्ता को सुनकर बड़ी शीघ्रतासे वहां आकर राजाके पुरोहित लोग सब शास्त्रों में विशारद ब्राह्मणलोग जो थे सब हाथ जोड़कर बोले कि हे देव! अब रोष न कीजिये आप दयाही करने के योग्य हैं ३७ क्योंकि जैसेही तुम इच्छा करतेहो तीनोंलोक कांपने लगते हैं फिर इसके ऊपर कोप करनेसे क्या है पुत्र चाहे कुपुत्र होजाय पर कुमाता व कुपिता नहीं होते ३८ कुटिलमति वाले उस दैत्य से ऐसा कहकर वे दैत्य पुरोहितलोग बुद्धिधनवाले उन प्रह्लादजी को दैत्यराज की आज्ञासे लेकर चलेगये ॥ ३९ ॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेद्विचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४२॥

तेंतालीसवां अध्याय ॥

दो० त्यैंतालिसयें महँ पिता, सुतहि जलहि महँ बोर।
अपर अनल दाहन प्रमुख, किय अभिचार कठोर ॥ १ ॥
असुरसुतन हरिभजनशिष, दीन्हीं राजकुमार।
पूर्वजन्म की निजकथा, कही सहित विस्तार ॥ २ ॥

मार्कण्डेयजी बोले कि सब कुछ जाननेवाले व अच्युतमें चित्तलगायेहुये प्रह्लादजी गुरुके गृहमें भी रहते थे तो इस जगत् को अनन्तमय देखतेहुये बाहरके कार्यों के विषय में जड़ पुरुषके समान विचरतेथे १ एकदिन साथके पढ़नेवाले दैत्यों के बालक जो कि वेद के पढ़ने में निरत रहतेथे सब इकट्ठे होकर प्रह्लादजी से बोले कि हे धरणीनाथपुत्र! तुम्हारा चरित अति विचित्र है क्योंकि तुम भोगके लोभी नहीं हो २ व तुम अपने मनमें क्या विचारांश करके कभी २ शरीर के रोम खड़े करलेते व हर्षित होजातेहो हे प्रिय! यदि यह बात गुप्तरखने के योग्य न हो तो हम लोगों से भी कहो ऐसा कहतेहुये मन्त्रियों के पुत्रों से सबके उपर कृपा करनेके कारण प्रह्लादजी यह बोले कि ३ हे दैत्यपुत्रो! अच्छा मनकरके सुनो जो हम अनन्यप्रीति होकर तुमलोगों के पूछने पर कहते हैं धन जन स्त्री विलासादिकों से मनोहर संसार का जो यह विभव शोभित होता है इसको ४ विचारो तो भला यह अच्छे ज्ञानियों के सेवाकरने के योग्य है अथवा दूरसे त्याग करने केही योग्य है उसमें प्रथम तो यह विचारना चाहिये जो कि माता के गर्भ में बसेहुये पुरुष बड़े २ दुःखों का अनुभव करते हैं ५ जो कि बनाय टेढ़े अङ्ग होजाते हैं व गर्भ के अग्नि से जले जाते हैं व अपने विविधप्रकार के पूर्व के जन्मों का स्मरण करते हैं बस उसका विचार करना चाहिये ६ हमने तो इसका विचार करलिया है कि जैसे बन्दीगृह में चोर

पकड़ा रहता है वैसेही हमभी एकप्रकार के चर्म से बँधे थे जिसे जरायु व देश में ओझरी कहते हैं सो इस तरह विष्ठा कृमि मूत्र के घरमें पड़े थे परन्तु गर्भ में भी मुकुन्द भगवान् के चरणकमलों के स्मरण से एकही बार का कष्ट हमने देखा है अब न देखेंगे ७ इससे गर्भवास करनेवाले को सुख कभी नहीं है व वैसे बाल्यावस्था में व युवावस्था में भी नहीं है न वृद्धावस्थ मेंही है इसरीति से जन्म होना सदा दुःखमय है सो हे दैत्यपुत्रो! भला ज्ञानियों के सेवाकरने लायक यह कबहै इससे इस संसारमें विचारकरने से हमने देखा तो कहीं सुख के अंश का लेशभी नहीं है ८ जैसे २ अच्छीतरह विचारते हैं वैसे २ अतिशय दुःख समझते हैं इससे देखने में तो बहुत सुन्दर पर दुःखों की खानिरूप इस संसार में पण्डितलोग नहीं गिरते ९ किन्तु जो मूढ़ तत्त्व नहीं जानते वेही नीचे गिरते हैं जैसे देखने के योग्य लपकें उठतेहुये अग्नि में पतङ्ग गिरते हैं जो सुखके लिये अन्यशरण न हो तो सुखके समान प्रकाशित संसार में गिरना योग्य है १० क्योंकि जिनको अन्न नहीं मिलता दुर्बल होजाते हैं उनको खरी व भूसी का खाना भी योग्य है सो क्यों ऐसाकरे श्रीपति के युगल चरणारविन्दों के पूजन से अनन्त आदि अज का मिलना सब सुखों का मूल तो है ११ सो विना क्लेश कियेहुये मिलने के योग्य इसको छोड़कर जो अन्य सुखों को महासुख समझके चाहता है वह मूढ़ अपने हाथ पर धरे हुये राज्य को छोड़कर दीनमन होकर

मानों भिक्षा मांगता फिरता है १२ इससे मनुष्य को चाहिये कि श्रीपतिजी के युगल चरणारविन्दोंकी पूजा करे वस्त्र धन व श्रमों से अनन्य चित्त पुरुष को क्या है केवल केशव माधवादि नाम उच्चारणकरे १३ इस प्रकार संसार को दुःखमय जानकर हे दैत्यपुत्रो! अच्छी तरह हरिको भजो क्योंकि ऐसा करनेसे नरजन्म का फल पाता है नहीं तो भवसागर में गिरकर अधोगति को जाता है १४ इससे इस संसारमें अपने मन में शंख चक्र गदा धारण किये अनन्तदेव स्तुतिकरने के योग्य नित्य वरदायक मुकुन्दजी का स्मरण करतेहुये सब अन्य कामों को छोड़ो १५ अये भवसागर में डूबने-वालो! हम आपलोगों से यह गुप्त पदार्थ कृपासे कहते हैं व अनास्तिकता से इससे तुमलोग सब प्राणियों में मित्र भावकरो क्योंकि ये विष्णु भगवान् सब प्राणियों में प्राप्त हैं १६ दैत्यों के पुत्र बोले कि हे प्रह्लाद! तुम व हम सब बालभाव से सण्डामर्क को छोड़ अन्य मित्र वा गुरु को नहीं जानते १७ फिर तुमने यह ज्ञान किस से सीखा हम से सत्य व सारांश कहो प्रह्लादजी बोले कि जब हमारे पिताजी तपकरने के लिये बड़े वन को चलेगये तो १८ इन्द्रने दैत्येन्द्र हिरण्यकशिपु को मृ-तक जानकर यहां आय उन के पुरको घेरलिया १९ व कामातुर होकर इन्द्र हमारी माता को पकड़कर चल दिये जब इसतरह हमारी माता को लिये चले जाते थे २० तब हमको गर्भ के भीतर जान देवदर्शन नारद जीने आकर इन्द्र से बड़े जोरसे कहा कि हे मूढ! इस

पतिव्रताको छोड़दे २१ क्योंकि इसके गर्भ में जो स्थित है वह भागवतों में उत्तम है नारदजी का वह वचन सुन के हमारी माता के प्रणाम करके २२ विष्णु की भक्ति से छोड़कर इन्द्र अपने लोक को चले गये व नारदजी हमारी माता को अपने आश्रम पर लिवालाये २३ व हे महाभागो ! हमारे उद्देश से हमारी माता को सुनाकर उन्हों ने यह सब ज्ञान सिखाया परन्तु बालावस्था में अभ्यास करने के कारण हे दानवो ! हम को अबभी नहीं भूला २४ व विष्णुजी के अनुग्रह से व नारदजी के अपूर्व उपदेश से किञ्चिन्मात्रभी विस्मरण नहीं हुआ मार्कण्डेयजी राजा सहस्रानीक से बोले कि एकदिन राक्षस व दैत्यों का स्वामी किसी नष्ट वस्तुके ढूंढ़नेकेलिये गया २५ तो रात्रिमें सुना कि नगर में सब अपने २ घरमें जयराम इस परम मन्त्र का कीर्तन कररहे हैं इसको विचारकरके जाना कि सब हमारे पुत्र का कियाहुआ है वह दानवेश्वर बलवान् तो थाही २६ अपने पुरोहितों को बुलाकर क्रोधसे अन्धहो दैत्येन्द्र बोला कि ऐरेक्षुद्रब्राह्मणो ! तुम सब बुद्धि के जाननेवाले होकर अब मूर्खता को प्राप्त होगये २७ क्योंकि यह प्रह्लाद मिथ्या आलाप करता है व औरों को भी पतितकराता है इस तरह उनको बहुत अपकार वचन कह राजा घरको चलागया २८ व अपने वधकरानेवाली पुत्रके वधकी चिन्ता उसने न छोड़ी बनाय आसन्नमरण होचुका था इससे उसने एक कार्य करना विचारा २९ जो करनेके योग्य न था

उसी के करने को एकान्त में बुलाकर दैत्यादिकों को आज्ञादी कि आजरात्रिमें सोतेहुये दुष्ट प्रह्लाद को बड़े उल्वण ३० नागपाशों से बांध जाकर समुद्रके बीचमें फेंकदो उसकी आज्ञा शिरपर रख उनके निकट जाकर उन्हें देखा ३१ तो उनको रात्रि तो बहुत प्रियथीही इससे एकाग्रचित्त लगाये श्रीविष्णु का ध्यानकरते हुये जागतेथे परन्तु सोतेहुयेके समान स्थित थे व जिन्हों ने राग लोभादि महाबन्धनों को काटडाला था उन को ३२ उन दुष्टराक्षसादिकों ने जाकर छोटे २ सर्परूप रस्सों से बांधा व ऐसे बुद्धिहीनथे कि गरुडध्वज भगवान् के भक्त प्रह्लादजी को सर्पबन्धनोंसे बांध ३३ उन जल-शायी श्रीहरिके प्रिय को लेजाकर समुद्र में छोड़ दिया व बलवान् तो वे दुष्टदैत्यथे ही इसलिये बहुत से पर्वत लाकर ऊपर से दबादिये ३४ व आकर यह प्रिय सन्देश राजासे कहा राजाने उनलोगों का बड़ामान किया व यहां समुद्र के मध्य में दूसरे बड़वानल के समान ३५ श्रीविष्णुजी के तेज से प्रज्वलित प्रह्लादजी को मारेभय के घड़ियाल आदि जलजन्तुओं ने छोड़ दिया व वे पूर्ण चिदानन्द समुद्रके मध्यमें एकाग्रचित्त होकर टिकेथे ३६ इससे उन्होंने जानाही नहीं कि हम बांधेहुये क्षारसमुद्रके बीच में पड़े हैं व वहां ब्रह्मरूप अमृतसागरमें प्राप्त मुनिप्रह्लादजी को अपने में स्थित जान ३७ जैसे दूसरे समुद्रके मिलनेसे एकसमुद्र बढ़ताहै वैसेही वह क्षारसागर बढ़ा व मानों बड़े२ क्लेशोंसे बड़े२ क्लेशों को ऊपरको उछालतीहुई लहरें ३८ प्रह्लादजी

को किनारेको लाईं जैसे गुरुके उत्तम वचन शिष्य को भवसागर के पारको ले जाते हैं वैसेही समुद्रकी लहरें प्रह्लादजी को तीरपर लाईं ३९ व ध्यानकरनेसे विष्णुभूत श्रीप्रह्लादजी को तीरपर स्थापित करके व विविध प्रकारके रत्न लेकर समुद्र उनके दर्शन को आया तबतक भगवान् की आज्ञा पाकर प्रहृष्ट हो गरुड़जी ४० सब सर्परूप बन्धनोंको खाकर फिर चलेगये तब प्रह्लाद से बड़ीगम्भीर ध्वनिसे समुद्र बोला ४१ प्रथम दिव्य मनुष्य का रूप धरके प्रणाम किया तब समाधि लगाये हुये हरिके प्रिय प्रह्लादसे उन्होंने कहा कि ४२ हे भगवद्भक्त, पुण्यात्मा, प्रह्लादजी! मैं समुद्रहूँ इससे अपने दोनों नेत्रोंसे देखकर आयेहुये मुझ अर्थीको पवित्रकरो समुद्र की ऐसी वाणी सुन हरि के प्रिय महात्मा प्रह्लादजी ४३ शीघ्रतासे ऊपरको देख व समुद्र के नमस्कार करके बोले कि आप कब आये यह सुन समुद्र बोला कि ४४ हे योगिन्! आप इस वृत्तान्तको नहीं जानते दुष्टअसुरों ने आपका बड़ा अपराध किया है क्योंकि हे वैष्णव! तुमको सर्पों से बांधकर आज दैत्योंने हममें डालदिया था ४५ फिर हमने तुरन्त आपको तीरपर बैठा दिया है व उन सर्पोंको खाकर महात्मा गरुड़ अभी गये हैं ४६ हे महात्माजी! सत्संग के अर्थी मुझपर अनुग्रहकरो व इनरत्नों को ग्रहणकरो क्योंकि हमारे जैसे हरि भगवान् पूज्य हैं वैसेही उन के दास आप भी पूज्य हैं ४७ यद्यपि इन रत्नों से आपका कुछ कार्य नहीं तथापि हम देते हैं क्योंकि

भक्तिमान् पुरुष सूर्य को दीप निवेदन करता है उससे उनका कौनसा कार्य होताहै ४८ आप तो घोर आपदों में विष्णुही से रक्षित होते हैं व तुम्हारे तुल्य निर्मल महात्मा बहुत नहीं हैं जैसे सूर्य एकही होते हैं ४९ बहुत कहने से क्या है जो हम तुम्हारे साथ खड़े हैं इससे कृतार्थ हैं व एकक्षणभर भी आपके संग वार्ता करते हैं इसफल की उपमा और किसी की नहीं दिया चाहते ५० जब इसप्रकार श्रीभगवान् के वचनों से समुद्र ने प्रह्लादजी की स्तुति की तो भगवत्प्रिय प्रह्लादजी लज्जित हुये व हर्षित भी हुये ५१ व रत्नों को ग्रहण करके समुद्र से बोले कि हे महात्मन्! तुम अति धन्य हो जिसमें हरि भगवान् नित्य शयन करते हैं ५२ व कल्पान्त में भी एकार्णवीभूत तुम में सम्पूर्ण जगत् को ग्रसकर जगन्मय जगन्नाथ सोते हैं ५३ हे समुद्र! अब हम नेत्रोंसे जगन्नाथजीको देखा चाहते हैं तुम तो उनको सदा देखते हो इससे धन्य हो हम से भी दर्शन का उपाय बताओ ५४ ऐसा कहकर पादोंपर गिरेहुये प्रह्लादजी को उठाकर समुद्र बोला कि हे योगीन्द्र! तुम भी तो नित्य अपने हृदय में श्रीहरि को देखते हो ५५ जो अब नेत्रों से प्रत्यक्ष देखा चाहते हो तो उन परमेश्वर की स्तुतिकरो वे तो भक्तवत्सल हैं अवश्य दर्शन देंगे यह कहकर समुद्र अपने जलमें पैठगये ५६ समुद्रके चलेजाने पर रात्रिको एकाग्रमन हो अकेले स्थित होकर उनके दर्शन को असम्भव मानकर भक्ति से प्रह्लादजी स्तुति करनेलगे ५७ प्रह्लादजी बोले

कि सैकड़ों वेदान्त के वाक्य पवनों से बढ़ेहुये वैराग्य अग्नि की शिखा से परितप्यमान चित्त को जिसके दर्शन के लिये योगीलोग संशोधन करते हैं वह कैसे हमारे नेत्रों के समक्ष होगा ५८ मात्सर्य, रोष, काम, लोभ, मोह, मदादि अतिदृढ़ इन छत्रों से व ऊपर के नानाप्रकार के दुराचारों से अच्छीतरह बँधाहुआ कहां हमारा मन व कहां हरि व कहां हम बड़ाही अन्तरहै ५९ व जिसको ब्रह्मादिक देवगण नानाप्रकारके भय शान्त करने की इच्छा से समुद्र के समीप जाकर उत्तम स्तोत्रों को पाठकरते हुये किसी न किसी प्रकार से देखते हैं अहो बड़े आश्चर्य की बात है कि उन्हींके देखने के लिये मेरी आशा है ६० ऐसा कह व अपने को परमेश्वर के दर्शन के अयोग्य मानतेहुये व उनके न मिलने से हारमान उद्वेगके दुःख समुद्र में मन डूबते हुये आंशुओं की धारा बहाते प्रह्लाद मूर्च्छित होकर पृथ्वीपर गिरपड़े ६१ तब हे भूप! एकक्षणही भर में सब कहीं विद्यमान चारभुजा धारण किये शुभआकृति भक्तजनों के मुख्यप्रिय श्रीहरिजी दुःख में पड़हुये अपने भक्त को अमृतमय हाथों से छपटाकर वहीं प्रकट हो आये वाह रे दयानिधान करुणासागर ६२ तब उन के अङ्गों के सङ्ग से प्रह्लाद की मूर्च्छा जाती रही नेत्र ऊपर को उठाया तो देखा कि प्रसन्नमुख कमलदलसम नेत्र आजानुबाहु यमुनानदीके जलके समान श्यामदेह का रङ्ग ६३ उदार तेजोमय रूप प्रमाण करने के अयोग्य गदा चक्र शंख कमलों से चिह्नित प्रभ को स्थित

देख समालिङ्गन करके विस्मय भय व हर्ष तीनों से कांपनेलगे ६४ उसको स्वप्नही मान व यहभी कि स्वप्नही में कृतार्थ हरिको देखताहूं यह विचारतेही अतिहर्ष के सागर में मग्नचित्तहो अपने आनन्द की मूर्च्छा को वे फिर प्राप्त होगये ६५ तब वैसीही विना कुछ बिछीहुई भूमिपर बैठकर अपनी गोद में उनको करके दीननाथ अपने जनों के मुख्य बन्धु श्रीहरिने अपने करपल्लवसे धीरे २ पवन करतेहुये बार २ चूँबकर माता के समान छाती में छपटा लिया ६६ इसके पीछे बहुत बेरपर प्रह्लादजीने भगवान्‌जीके सम्मुख नेत्रकरके विस्मययुक्त चित्तसे श्रीजगन्नाथजी को देखा ६७ व जाना कि बड़ी बेरसे लक्ष्मी की गोदमें शयन करनेवाले महाराज मुझ को अपनी गोदमें लिये भूमिपर बैठेहैं इससे एकाएकी गोद से उछलकर भय व भ्रमसे युक्त हो ६८ प्रणाम करने के लिये पृथ्वीपर गिरपड़े व प्रसन्नहोओ यह बार २ कहते रहगये यद्यपि बहुत वेद शास्त्र पुराण जानते थे पर मारे सम्भ्रम के दूसरी पूजा की उक्ति का कुछ स्मरणही न किया ६९ तब गदा शंख चक्र धारण कियेहुये श्रीप्रभुने अपने अभय देनेवाले हाथसे पकड़ प्रह्लाद को उठाकर बैठाया दयानिधि तो उनका नामही है क्यों न ऐसा करते ७० करकमलके स्पर्श के आह्लाद से आंशु बहाते हुये व कांपते हुये प्रह्लाद को समझाते व आह्लादित करतेहुये स्वामी श्रीहरि बोले ७१ कि हे वत्स ! हमारे गौरव से उत्पन्नभय व सम्भ्रमको छोड़ो भक्तों में तुम्हारे समान और हमको प्रिय नहीं है

अब अपने अधीन हमको जान प्रार्थना करो ७२ नित्य सब कामोंसे पूर्ण तुम विविध प्रकारके हमारे जन्मों का कीर्तन हमारे भक्तोंको बतातेरहो बताओ इससे अधिक और तुमको क्या प्रियहै वह भी दें ७३ यह सुन चटपटातेहुये नेत्रों से भगवान्जी का मुख देखतेहुये प्रह्लादजी हाथ जोड़ श्रीविष्णुभगवान् से यह बोले कि ७४ यह वरदान करनेका काल नहीं है बस मेरे ऊपर आप प्रसन्नहों क्योंकि तुम्हारे दर्शनामृत के स्वाद को छोड़ और किसी वरसे हमारा आत्मा नहीं तृप्तहोता ७५ ब्रह्मादि देवताओं को बड़ेदुःख से दिखाई देनेवाले आपको इस प्रकार देखतेहुये मेरा चित्त जैसा तृप्त हुआहै ऐसा अयुतों कल्पों तक और किसीसे न तृप्तहोगा ७६ आतङ्कसे तप्त मेरा चित्त आप को देखकर अब और कुछ नहीं मांगना चाहता तब कुछ हँसतेहुये रूप अमृत समूहोंसे अपने प्रिय प्रह्लाद जीको प्रियदृष्टिसे पूरित करते हुये ७७ व मोक्ष लक्ष्मी से योजित करातेहुये जगत्पति उनसे बोले कि हे वत्स! हमारे दर्शन से और कुछ तुमको प्रिय नहीं है यह बात सत्यहै ७८ परन्तु हमारा चित्त कुछ तुमको देना चाहता है इससे हमारा प्रियकरने के लिये कुछ वर हम से मांगो तब धीमान् प्रह्लादजी बोले कि हे देव! जन्मान्तरों में भी ७९ हम तुम्हारेही दास होवें जैसे गरुड़ जी तुम्हारे भक्त हैं यह सुन नाथने कहा तुमने यह हमको बड़ा संकटकिया ८० क्योंकि हम चाहतेथे कि तुमको हम अपनेही को देडालें परन्तु तुम सेवकही

होना चाहते हो इससे हे दैत्येश्वरके पुत्र ! तुम और वर मांगो ८१ प्रह्लाद फिर भक्तोंके कामदेनेवाले हरिजी से बोले कि हे नाथ ! हमारे ऊपर प्रसन्नहोओ व तुम्हारी स्थिरभक्ति सदा हममें रहे ८२ व इसी भक्ति से सदा तुम्हारे नमस्कार कियाकरें व तुम्हारी स्तुति कियाकरें इसबातको सुनकर सन्तुष्टहुये भगवान् प्रिय बोलनेवाले अपने प्रियसे बोले कि ८३ हे वत्स ! जो २ तुमको अभीष्टहो वह २ सदाहो सुखीरहो व हमारे अन्तर्द्धान होजाने पर यहां तुम खेदको न प्राप्तहोना हे महामते ! ८४ क्योंकि तुम्हारे चित्तसे अलग हम कभी न जायँगे जैसे क्षीरसागर में सदा बसते हैं व दो तीनदिन के पीछे फिर तुम दुष्टके वधकरने में उद्यत हम को देखोगे ८५ पर इस स्वरूप से हम न दर्शनदेंगे बरन अपूर्व दैत्यों को भयभीत करनेवाले नरसिंहरूप से दर्शनदेंगे यह कह प्रणाम करतेहुये व अति लालसा से देखतेहुये ८६ व असन्तुष्टही से प्रह्लाद के सम्मुख से श्रीहरि मायासे अन्तर्द्धान होगये जब बहुतहठ से देखतेहीरहे व हरि न दिखाई दिये तो भक्तवत्सलभी हैं तोभी चलेगये ८७ तब हाहा ऐसा कह नेत्रों से आंशु बहातेहुये प्रह्लादजीने प्रणामकिया व चारोंओर जागेहुये जनोंका शब्द सुनतेहुये ८८ समुद्रके किनारे से उठकर अपने पुरको चलेगये क्योंकि अब दिन हो आया रात्रि जातीरही ॥ ८९ ॥

हरिगीतिका॥

बहुभांति हर्षित दैत्यसुत चहुँ ओर देखत हरिमयी।
अरु मनुज हरि वररूप हरिको स्मरण करत हियेदयी॥
निज गुरुसदन कहँ गयहु पितुगृह गमन नहिं कीन्ह्यों तबै।
तहँरह्यहुत्यहिदिनबालकनसँग पढ़नलाग्यहुसोजबै १६०॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषान्तरेप्रह्लादचरिते
त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः॥ ४३॥

चवालीसवां अध्याय॥

दो० चौवालिसयें महँ कनक, कशिपु वध्यो जगदीश।
धरि नरहरितनु करिकृपा, पाल्यहु तासुत ईश॥१॥

मार्कण्डेयजी बोले कि, जब प्रह्लाद आये व गुरुसदन में आकर पढ़तेहुये उन दैत्योंने देखा जो कि समुद्र में डालआये थे उन्होंने आय दैत्यराज से कहा १ प्रह्लाद को स्वस्थ आये सुनकर दैत्यराज विस्मय के मारे व्याकुल हुआ व मारे क्रोध के बोला कि बुलाओ क्यों न बुलाता मृत्युके बशीभूत तो थाही २ वह सुनते ही असुरों के लायेहुये दिव्य दृष्टिवाले प्रह्लादजी ने देखा कि दैत्येन्द्र बैठा है पर मृत्यु उसके समीप खड़ी है व राज्यश्री बनाय अलप होगई है ३ भूषण सब नील किरण से मिश्रित माणिक्य की छवि से आच्छादित होगये हैं व चिताऽरूप ऊँचे आसन पर बैठा हुआ धुआं से घिरेहुये अग्नि के समान दिखाई देता है ४ व उस के चारोंओर बड़े २ दांतोंवाले अति घोररूप बादरों के समान कालेरंग के व कुमार्ग दिखानेवाले दैत्य

यमराज के दूतों के समान घेरे थे ५ ऐसे पिता के हाथ जोड़ प्रणाम करके जब प्रह्लादजी आगे खड़े हुये तो वह खल विना कारणही क्रोधकर अपकार वचन कहता हुआ पुत्र से बोला ६ सो जानो भगवत्प्रिय प्रह्लादजी से बोला नहीं मानों अपनी मृत्युही को पुकाराथा कि हे मूढ़! हमारा वचन सुन यह सबसे पिछला वचनहै ७ क्योंकि इसके पीछे अब तुझसे और कुछ न कहेंगे सुनकर जो वाञ्छित हो कर ऐसा पुत्र से कह चन्द्रहास नाम खड्ग खींचकर ८ व इधर उधर चमकातेहुये उस को सबोंने देखा व वह फिर अपने पुत्र से बोला कि हे मूढ़! आज तेरा विष्णु कहां है वह तेरी रक्षा करे ९ तू ने कहा था कि वह सर्वत्र है तो इस खम्भे में क्यों नहीं दिखाई देता जो इससमय उस विष्णु को खम्भे के मध्य में स्थित देखें तो १० तुझको न मारेंगे व यदि ऐसा न हुआ खम्भे में तेरा विष्णु न दिखाई दिया तो अभी तू दो खण्ड होता है प्रह्लादजी ने भी उसे ऐसा करने पर आरूढ़ देखकर परमेश्वर का ध्यान किया ११ प्रथम के कहेहुये हरि के वचन का स्मरण करके जोकि कहा था कि दुष्ट के मारने में उद्यत हमको तुम दो तीन दिन में देखोगे प्रणाम करके दोनों हाथ जोड़े जैसेही हाथ जोड़े हैं कि वैसेही दैत्य के पुत्र प्रह्लादजी ने देखा कि खम्भा हिला व चटचटा शब्द हुआ १२ व जहां दैत्य ने खड्ग मारदिया था दर्पण के आकार उस खड्ग व खम्भे में चमकती हुई प्रभु की हजारों योजन की मूर्ति दिखाईदी १३ जो मूर्ति अतिरौद्र महाकाय दानवों को

भयंकर महानेत्र महामुख महाचौहड़ी महालम्बायमान भुज १४ कानों तक फैलाहुआ मुख इससे अतिही भयंकर महाभारीनख महापाद कालाग्नि के समान मुख १५ इसप्रकार का रूप करके नरसिंह अर्थात् कटिके ऊपरका तो सिंहका रूप व नीचे का नर का रूप धारण किये खम्भे के बीच में से निकलकर बड़े ज़ोर से नाद किया १६ नाद सुनतेही दैत्यों ने सब ओर से नरसिंहजी को घेरलिया अपने पौरुषसे उन दैत्यों को मारकर १७ हिरण्यकशिपु की सभा को तोड़ मींज मर्दडाला तब फिर बड़े २ योद्धाओं ने आकर नृसिंहजी को घेरा १८ हे राजन्! उनको तो नरसिंहजी ने क्षण-मात्र में मारडाला तब और दैत्यलोग प्रतापी नरसिंह जीके ऊपर शस्त्रास्त्र बरसानेलगे १९ परन्तु उन भगवान् जीने एकही क्षणमें अपने पराक्रम से सब सेना मार डाली व सब दिशाओं को शब्द से भरते हुये बड़े ज़ोर से गर्जे २० तब खड्ग हाथों में लिये हुये अट्ठासी सहस्र दैत्यों को भेजा उन्होंने भी आकर सब ओर से उन देवदेव को घेरा २१ फिर भी उन्होंने हिरण्यक-शिपुकी सभा को तोड़ मींजडाला उनको मरेहुये जान्-कर फिर दैत्यराजने अन्य महासुरोंको भेजा २२ युद्ध में उन सबों को भी मारकर वे गर्जे उन दैत्यों को भी म हुये जान क्रोधसे लाल नेत्रकर २३ महाबली हिर कशिपु युद्ध करने को निकला व वलसे अहं दैत्यों से बोला कि २४ अरे इसको मारो २ रि। कड़ो २ ऐसा कहतेहुये उसके सम्मुखही रण ॥ १ ॥

असुरों को २५ मारकर नरसिंहजी ने बड़ा नाद किया उस नाद के सुनने से जितने दैत्य मारने से बचगये थे सबके सब भाग खड़ेहुये २६ जबतक नरसिंहजीने इन लाखों किरोड़ों दैत्यों को मारा तबतक सूर्य अस्ताचल को गये इससे सन्ध्या हुई २७ तब शस्त्र अस्त्र चलाने में बड़े चतुर हिरण्यकशिपु को बड़े वेगसे व बल से पकड़ महाबली नरसिंहजी २८ सन्ध्या के समय गृह की देहली पर बैठकर अपनी जांघों पर लिटाय उस शत्रु को २९ नखों से जब कमलकी भँसीड़ के समान चीड़ने लगे तब वह महाअसुर बोला कि मेरी जिस छाती में लगने से इन्द्र के हाथी के मूसलाकार दांत संग्राममें टूटगये व जिसमें लगने से महादेव के फरशे की धार गोठिल होगई वह मेरी छाती आज नरसिंह के नखों से फाड़ीजाती है हाय जब भाग्य दुष्ट होजाती है तो तृणभी बहुधा बड़े २ बीरों का निरादर करता है ३० दैत्येन्द्रके ऐसा कहतेही नरसिंहजी ने दैत्यराज का हृदय ऐसे फाड़डाला जैसे हाथी कमल के पत्ते को फाड़डाले ३१ जो दो खण्ड उसके शरीर के करडाले वे नरसिंहजी के नखों के भीतर छिपगये ३२ तब तो
म
जोड़े ह दुष्ट कहांगया यह कह श्रीहरिजी बड़े विस्मितहुये
खम्भा। सब कहीं देखकर कहनेलगे कि यह कर्म तो हमारा
ने खड़्ग मे ी होगया ३३ हे राजेन्द्र ! यह चिन्तनाकर महा-
खम्भे में चम हजी ने अपने हाथों को बड़े जोर से झिटका
दिखाईदी १३ ! दोनों उसके शरीर के खण्ड ३४ नखों के
ु के समान पृथ्वीपर गिरपड़े उन्हें देख रोष

करके फिर परमेश्वर ठठाकर हँसे ३५ व नरसिंहजी के ऊपर पुष्पों की वर्षा करतेहुये ब्रह्मादिक सब देवगण प्रीतिसंयुक्त हो वहां आये ३६ व आकर महाप्रभु नरसिंहजी की उन्होंने बड़ी पूजा की व ब्रह्माजीने प्रह्लादजी को दैत्योंका राजा बनाया व सब जनों की धर्म में तब फिर प्रीतिहुई ३७ हरिजीने सब देवों सहित इन्द्र को स्वर्ग में स्थापित किया व नरसिंह भगवान् सबलोगों के हितके लिये ३८ श्रीशैल के शिखरपर जाय देवताओं से पूजित हो विख्यात हुये व वहीं भक्तों के हित के लिये और अभक्तों के नाश के अर्थ स्थित हुये ॥ ३९ ॥

चौपाई ॥

यह नरसिंह चरित जो पढ़ई। बहुरि सुनै जो जो चितधरई ॥
सकल दुरित छूटहिं त्यहिकेरे। नृप भाषे जो चरित घनेरे ॥४०
नर नारी वा उत्तम येहू। उपाख्यान सुनिहैं करि नेहू ॥
दुःख शोक वैधव्य दुष्टसँग। तुरतहितिनकेछूटतयाहिढँग॥४१
दुराचार दुश्शील दुखारी। दोष कर्मकारी अविचारी ॥
दुष्प्रज सुनत शुद्ध ह्वैजाई। अरु धर्मिष्ठ भोग गणपाई ॥४२
हरिसुरेश नरलोक सुपूजित। नृहरिरूपधरिकरिखलभूजित॥
सकललोकहितयहअवतारा।कनककशिपुजिनकीनसंहारा॥४३

इति श्रीनरसिंहपुराणेप्रह्लादनरसिंहचरितेहिरण्यकशिपुवधश्चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः॥ ४४ ॥

पैंतालीसवां अध्याय ॥

दो० पैंतालिसयें महँ कह्यो, वामनतनु हरिधारि।
जिमिगे बलि के यज्ञमहँ, लीन्हसकल महिहारि ॥ १ ॥

मार्कण्डेयजी राजा सहस्रानीक से बोले कि, हे राजन्! जैसे राजा बलिके यज्ञमें जाकर सहस्रों दैत्यों को मारा बामनजी का पराक्रम संक्षेप रीतिसे सुनो १ पूर्वकाल में विरोचन के पुत्र बलिने जो कि महाबली व पराक्रमी थे इन्द्रादि देवताओं को जीतकर तीनों लोकों का राज्य भोगा २ इससे उनसे पीड़ित सब देवगण बहुत दुर्बल होगये हे नृपोत्तम! इन्द्रको दुर्बल व राज्यरहित देखकर ३ देवताओंकी माता अदितिजी ने बड़ा तप किया व प्रणामकर इष्ट वचनोंसे जनार्दन जी की बड़ी स्तुति की ४ तब स्तुति से सन्तुष्ट हो देवदेव जनार्दन उनके आगे खड़े हो वचन बोले ५ कि हे सुभगे! बलिके बांधनेके लिये हम तुम्हारे पुत्र होंगे यह कह विष्णुजी अपने लोक को चलेगये व अदिति भी अपने घरको चलीगईं ६ हे राजन्! कुछ कालके पीछे अदितिजी ने कश्यपजीसे गर्भ धारणकिया तब विश्वेश्वर भगवान् वामनतनु धारणकर उत्पन्नहुये ७ उनके उत्पन्न होनेपर लोकके पितामह ब्रह्माजी ने वहां आकर जातकर्मादिक सब क्रिया कीं ८ जब यज्ञोपवीत भी होगया तो सनातन ब्रह्म श्रीहरि ब्रह्मचारी का रूप कर अदिति से आज्ञाले राजाबलिके यज्ञ में गये ९ चलते हुये उनके पादों के विक्षेप से सब पृथ्वी चल उठी व बलिदानव यज्ञके सब यज्ञ का भाग कोईभी ग्रहण न करनेलगे १० यह सब फिर बक गये ऋत्विजोंको सब मन्त्र भूलगये यह सब देख महाबल बलि शुक्राचार्यसे बोले ११ हे मुनिराज! दैत्यादि वीर

का भाग क्यों नहीं ग्रहण करते व अग्नि क्यों शान्त होगये व पृथ्वी क्यों चलउठी १२ व ये सब ऋत्विज् लोग मन्त्रों से कैसे नष्ट होगये जब बलि ने ऐसा कहा तो शुक्राचार्य बलिसे बोले १३ कि हे बलिजी! हमारा वचन सुनो तुमने देवताओं का निरादर किया है इससे उन लोगों को राज्य देनेके लिये अदिति में अच्युत देवदेव जगद्योनि वामनकी आकृतिसे उत्पन्न हुये हैं वे तुम्हारे यज्ञको आते हैं इसीसे उनके पादों से पृथ्वी कांपती है १४। १५ हे असुरनाथ! उन्हींके सम्बन्धसे कोई असुरलोग तुम्हारे यज्ञमें पायस का भाग नहीं ग्रहण करते १६ व तुम्हारे अग्नि भी वामन के आगमन से शान्त होगये हैं व ऋत्विजों को भी इससमय होमके मन्त्र नहीं भासित होते १७ अब सुरोंका उत्तम ऐश्वर्य असुरों के ऐश्वर्यको नष्ट करता है यह सुन बलि नीति जाननेवालोंमें श्रेष्ठ शुक्रजी से बोले १८ कि हे ब्रह्मन्! हमारा वचन सुनो जब वामनजी यज्ञ में आवेंगे तो धीमान् वामनका कौन काम हमको करनाचाहिये १९ वह हमसे कहो हे महाभाग! क्योंकि हमलोगों के परमगुरु तुम्हीं हो मार्कण्डेयजी बोले कि जब राजा बलिने शुक्राचार्य से ऐसा कहा तो २० वे बलिसे बोले कि अच्छा अब हमारा भी वचन सुनो देवताओं के उपकारके लिये व आपलोगों के नाशके लिये २१ तुम्हारे यज्ञमें आते हैं इसमें कुछ संशय नहीं है बरन निश्चय है इससे जब वामन आवें तो तुम उन महात्माके लिये २२ प्रतिज्ञा न करना कि इतना हम

तुमको देंगे शुक्रके ऐसे वचन सुन बलवानों में श्रेष्ठ राजाबलि २३ अपने पुरोहित शुक्र से शुभवाणी बोले हे शुक्र! जब वामनजी हमारे यज्ञ में आजायँगे तो हम मधुसूदनजी का २४ प्रत्याख्यान न करेंगे कि हम तुम को दान न देंगे क्योंकि हमने और लोगों को कभी दान देनेका निषेध नहीं किया फिर जब विष्णु आपही आवेंगे तो उनको कैसे निषेध करेंगे २५ हे द्विज! इस से जब वामनजी यहां आवें तो देखना तुम कुछ विघ्न न करना २६ जो २ द्रव्य वे मांगेंगे सो २ हम उनको देंगे हे मुनिश्रेष्ठ! यदि वामनजी आवेंगे तो हम कृतार्थ होजायँगे २७ बलि ऐसा कहतेही थे कि उनकी यज्ञशाला में वामनजी ने आकर बलिके यज्ञकी बड़ी प्रशंसाकी २८ हे राजन्! उनको देख राजा बलि एका-एकी उठ खड़ेहुये बड़ीभारी पूजाकी सामग्री से पूजाकर यह वचन बोले २९ हे देवदेव! जो २ धनादिक हम से मांगतेहो वह सब हम तुमको देंगे इससे हे वामन! हमसे आज जो चाहो मांगो ३० हे राजन्! जब बलि ने ऐसा कहा तो देवदेवेश श्रीवामनजी ने तीनपाँय भूमि मांगी ३१ व कहा कि हमको केवल अग्नि ब-चाने के लिये कुटी बनानी है उसके लिये तीनपैर भूमि चाहते हैं हमारा धनादिक से कुछ प्रयोजन नहीं है ऐसा वामनजी का वचन सुन राजा बलि वामनजी से बोले कि ३२ जो तीनहीं पैरसे तृप्ति है तो हमने तीन पैर भूमि दी जब बलिने ऐसा कहा तो वामनजी बलि से बोले ३३ कि जो तीन पैर देचुके तो हमारे हाथ में

जलदो जब देवदेव ने ऐसा कहा तो बलि ३४ जलसे भराहुआ सुवर्ण का कलश ले भक्ति से उठकर जबतक वामनजी के हाथ में जल दियाचाहें ३५ कि तबतक शुक्र ने सूक्ष्म शरीर धारणकर कलश के भीतर जाकर जल की धारा रूंधली तब क्रुद्धहो वामनजीने कुश की जड़ से ३६ कलश के मुख के जल में बैठेहुये शुक्र का नेत्र फोड़डाला तब एक नेत्र फूटे हुये शुक्र उस में से निकल आये ३७ इसी समय का किसी कवि ने एक पद्य बनाया है ॥

दो० दानदेत यजमान के, गई सूमके हूक।
बलि वामन के दान में, आंखिफुरायो शूक॥ १ ॥

जब काने होकर शुक्र निकले तो जलकी धारा कलश से वामनजी के हाथपर गिरी जैसेही हाथपर जल गिरा था कि एक क्षणमात्र में वामनजी बढ़े ३८ यहां तक कि एकही पाद से सब पृथ्वी दबाली व दूसरे से सब अन्तरिक्ष व तीसरे से स्वर्गलोक ३९ उस समय बहुत दानवलोग युद्धकरने को उठे उन सबों को मार बलिसे तीनोंलोक छीन इन्द्रको त्रिलोकी दे फिर बलि से बोले कि ४० जिससे तुमने आज भक्ति से हमारे हाथमें जलदान किया इस से इससमय हमने तुमको उत्तम पातालतल दिया ४१ हे महाभाग! वहां जाकर तुम हमारे प्रसाद से भोगकरो वैवस्वत मन्वन्तर बीत जाने पर जब सावर्णिमनु आवेगा तो तुम फिर इन्द्र होगे ४२ जब वामनजीने ऐसा कहा तो बलिजी उन के प्रणाम कर सुतल लोक को गये व वहां का राज्य

भोगने लगे ४३ व शुक्रभी स्वर्ग को जाय वामनजी के प्रसाद से त्रिभुवन में आतेजाते हुये देवरूप हो ग्रहों में मिल गये ॥ ४४ ॥

चौपाई ॥

प्रातकाल उठि वामन केरी। जो शुभकथा सुनिहि हियहेरी॥
सर्वपाप तजिके सोप्रानी॥विष्णुलोकपाइहि तजि ग्लानी॥४५॥
इमि वामन तनुधरि भगवाना। बलिसों तीनलोक हरिआना॥
शचीपतिहि दैकीन प्रसादा॥जलधिगयेहरिकरिशुभनादा॥४६॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेवामनावतारचरितेपञ्च चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४५ ॥

छियालीसवां अध्याय ॥

दो० छयालिसयें महँ परशुधर, हरिको चरित विचित्र।
जिनकीन्हीं निःक्षत्रमहि, दीन्ह द्विजनशुनिमित्र ॥ १ ॥

मार्कण्डेयजी बोले कि, इसके पीछे परशुराम नाम श्रीहरिका अवतार कहेंगे जिन्हों ने क्षत्रियों का बहुधा नाश करदिया १ पूर्वकाल में क्षीरसमुद्रके तीरपर जाय देवताओं व ऋषियों ने श्रीविष्णुभगवान् की स्तुति की तो श्रीहरि आकर जमदग्निमुनि के पुत्रहुये २ व परशुराम के नाम से प्रसिद्धहो सबलोकों में विख्यात हुये ये दुष्टों को दण्ड देनेके लिये महीतल में अवतरे ३ पूर्वकाल में कृतवीर्य का पुत्र बड़ा श्रीमान् कार्तवीर्य नाम महाराज हुआ वह दत्तात्रेयजी की आराधना करके चक्रवर्ती महाराजाधिराज हुआ ४ व वह किसी समय जमदग्निजी के आश्रमपर गया जमदग्निजी

उसको चतुरंगिणी सेनासमेत देखकर ५ कार्तवीर्य नृ-
पोत्तम से मधुर वचन बोले कि अब यहां तुम्हारी सेना
उतरे क्योंकि तुम हमारे अतिथि होकर आयेहो हमारे
दियेहुये वन के फल मूलादि भोजन करके फिर चले
जाना ६ मुनि के वचन के गौरव से वहां सेना उतार
महानुभाव राजा आपभी स्थितहुआ व राजाका निम-
न्त्रणकर अलंध्यकीर्तिवाले मुनि ने अपनी धेनु को
दुहा ७ उसमें से विविध प्रकारके हाथियों व घोड़ों के
रहने के व मनुष्यों के रहने के विचित्र गृह व तोरणादि
निकले व राजाओं के योग्य बहुतसे सुन्दर वन पुष्प
टिकादि भी निकले ८ व कई महले बहुत से गृह
राजयोग्य सामग्री समेत निकले इन सब पदार्थ
दुहकर मुनिराज महाराज से बोले कि हे राजन्! तु
रहने के लिये गृह बनाया है इसमें प्रवेश कीजि
व तुम्हारे ये सब श्रेष्ठ मन्त्र्यादिक इन दिव्यगृ
निवास करें व हाथी गजशालाओं में घोड़े बाजि-
शालाओं में बँधे भृत्यलोग इन छोटे २ गृहों में रहें १०
ऐसा जैसे मुनि ने कहा है कि सब से उत्तम मन्दिर में तो
राजाने प्रवेश किया व और लोग अन्य गृहों में उतरे
तब फिर मुनि राजा से बोले कि ११ हे राजन्! तुम्हारे
स्नान कराने के लिये ये सौ स्त्रियां हमने उत्पन्न की हैं
इससे यथेष्ट यहां तुम स्नान करो जैसे स्वर्ग में गीत
नृत्यादिकों के साथ इन्द्र स्नान करते हैं १२ तब राजा
ने इन्द्र के समान गीतादिकों व मधुर बाजाओं के साथ
स्नान किया जब राजा स्नानकरचुका तो मुनिने राजा

के योग्य दो अत्युत्तम विचित्र वस्त्र दिये १३ एक को पहिनकर व दूसरे को उत्तरीय अर्थात् अँगौछा बना-कर सन्ध्या तर्पणादि क्रिया कर राजा ने श्रीविष्णुजी की पूजा की इतने में मुनि ने नाना प्रकारका अन्नमय पर्वत उसमें से दुहा वह राजा व उनके भृत्यों को य-थोचित दिया १४ जब तक राजा भोजन करचुके तब तक सूर्य अस्त हुये फिर रात्रि में मुनि के बनाये हुये गृह में राजा नृत्यगीत देखता सुनता हुआ शयन कर ग १५ जब प्रभातकाल हुआ तो यह सब स्वप्न के न्य होगया केवल एक भूमि का भाग रहगया उसे । राजाने बड़ी चिन्ता की १६ यह महात्मा मुनिके दो० की शक्ति है वा इस धेनुकी है यह अपने पुरोहित छा १७ जब कार्तवीर्य ने पुरोहित से ऐसा पूछा पुरोहित उससे यह वचन बोला कि मुनि को भी श्री सामर्थ्य है परन्तु यह सामर्थ्य इस धेनुकी है १८ तथापि हे राजन्! मारे लोभ के देखना यह धेनु न हरलेना क्योंकि जो कोई उसके हरने की इच्छाकरे उसका नाश अवश्य होजाय १९ इस बातको सुनकर सब से श्रेष्ठ मन्त्री राजा से बोला कि ब्राह्मण ब्राह्मण का प्रिय करते हैं इससे यह ब्राह्मण भी अपने पक्षका पालन करने के कारण राजकार्य नहीं देखता २० हे राजन्! कल से व अबतक तुम्हारे पास नाना प्रकार की सामग्री समेत गृह थे व सुवर्ण के सब पात्र व श-य्यादिक भी थे नानाप्रकार की स्त्रियां थीं २१ वे सब इसी धेनु में लीन होगये इससे इसी में हैं हम लोगों

ने देखा है इससे यह उत्तम धेनु आप अपने यहां लेते चलें २२ क्योंकि राजेन्द्र यह तुम्हारेही योग्य है जो इच्छाहो तो हम मुनि के यहां जाकर लावेंगे केवल आपकी आज्ञा होनी चाहिये २३ जब मन्त्री ने राजा से ऐसा कहा तो राजाने कहा अच्छा धेनु लेआओ मन्त्रीने वहां जाकर धेनु के हरने का आरम्भ किया २४ जमदग्नि जी ने उस मन्त्री को रोंका तब उसने कहा कि हे ब्रह्मन्! यह राजा केही योग्य है इससे राजा को देदो २५ तुम तो शाकफल का आहार करते हो धेनु से तुम्हारा कौन प्रयोजन है इतना कह बल से धेनु को पकड़कर मन्त्री ने लेचलने का विचार किया २६ तब मुनि व मुनिकी स्त्री ने भी राजा को रोंका तब उस दुष्ट मन्त्री ने मुनि को मारकर २७ उस ब्रह्मघाती ने धेनु को लेजाना चाहा कि इतने में धेनु पवन होकर स्वर्ग को चलीगई व वह लोभी राजा अपनी माहिष्मती पुरीको चला गया २८ व मुनिकी स्त्री बड़े दुःख से पीड़ित हो बार २ रोदन करतीहुई अपनी छाती इक्कीस बार उन्होंने पीटी २९ इसको सुन वनसे पुष्पादिक लेकर परशुराम जी आये व परशा लियेहुये अपनी माता से बोले ३० कि हे अम्ब! अब छाती पीटने से कुछ नहीं है हमने कारण से जान लिया है इससे उस दुष्ट मन्त्रीवाले कार्तवीर्य को मार डालेंगे ३१ जिससे कि तुमने इक्कीसबार अपनी कुक्षि पीटी है इससे हम इक्कीसबार तक पृथ्वी पर के सब राजाओं को मार डालेंगे ३२ इस प्रकार प्रतिज्ञाकर व परशाले परशुरामजी माहिष्मती पुरी को

गये व पहुँचतेही राजा कार्त्तवीर्य को पुकारा ३३ वह युद्धकरने के लिये इक्कीस अक्षौहिणी सेना लेकर निकला इसलिये उस का व परशुरामजी का वैर व रोमहर्षण युद्धहुआ ३४ यह युद्ध मांस भक्षण करने वालों को अति आनन्द देनेवाला हुआ व नाना प्रकार के शस्त्रास्त्रों की गचापची हुई तब परशुरामजी ने महाबल पराक्रम धारण किया ३५ क्योंकि वे तो परंज्योति अदीनात्मा विष्णु थे केवल कारण के लिये मनुष्यमूर्ति को धारणकिये थे इससे अनेक क्षत्रियों समेत सब कार्त्तवीर्य की सेना ३६ मार व भूमि में गिराकर परम अद्भुत विक्रमवाले परशुरामजी ने कार्त्तवीर्य के बाहुओं का वन मारे रोष के काटडाला बाहुवन के कट जानेपर भार्गवजी ने उसका शिर भी काटडाला ३७ विष्णुजी के हाथ से वध को प्राप्त हो चक्रवर्त्ती वह राजा दिव्यरूप धारण कर श्रीमान् दिव्यगन्ध अनुलेपन कियेहुआ ३८ दिव्य विमानपर चढ़ विष्णुलोक को गया व महाबली व महापराक्रमी परशुरामजी ने भी मारेक्रोधके ३९ इक्कीसबार तक पृथ्वीपरके राजाओं को मारडाला इससे क्षत्रियों का वधकरने से भूमिका भार उतारडाला ४० व सब पृथ्वी महात्मा कश्यपजीको देदी यह परशुरामजीके अवतारकी कथा हम ने कही॥४१॥

चौपाई॥

जो यहि सुनिहि भक्तिसों प्राणी। मनअरुकर्मसहितनिजबाणी॥
करि पवित्र तजि पापसमूहा। हरिपद लहिहि नियामहिंऊहा॥४२
इमि महि लहि अवतार महाप्रभु। इक्कइसवार हते क्षत्रिय विभु॥

क्षात्रतेजहतिअबहुँविराजत।गिरिमहेन्द्रपररामसुभ्राजत१४३
इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेपरशुरामप्रादुर्भावोनाम षट्चत्वारिंशोऽध्यायः॥ ४६॥

सैंतालीसवां अध्याय॥

दो० सैंतालिसयें महँ कहन, लग्यो मुनीश विचारि।
रामचन्द्रकर विशदयश, सुनत पढ़त अघहारि॥ १॥
बालकाण्डकी सबकथा, क्रमसों यामहँ नीक।
कही जन्मसों ब्याहिघर, फिर आये तक ठीक॥ २॥

श्रीमार्कण्डेयजी बोले कि हे राजन्! जिन परमेश्वर ने मनुष्य का अवतार ले देवताओं के शत्रु सहित परिवार रावण को मारा उनके जन्म की अति शुभकथा कहते हैं सुनो १ ब्रह्माजी के मानसी पुत्र पुलस्त्यजी हुये उन के विश्रवसनाम पुत्र हुये उनके एक राक्षस पुत्रहुआ२ जिसका लोगों के रोदन करानेवाला रावण नाम हुआ वह बड़ा तपकर वर पाय सब लोकों में गया ३ व उस ने इन्द्रसहित सब देवता, गन्धर्व, किन्नर, यक्ष, दानव, मनुष्यादिकों को युद्धमें जीतलिया ४ व उस दुष्ट ने देवादिकों की जितनी सुरूपवती स्त्रियां थीं सबको हर लिया व उन देवादिकों के विविधप्रकार के रत्नभी हर लिये ५ व बल से महा अहंकारी उस रावण ने युद्ध में कुबेरजी को जीतकर उनकी लङ्का नाम पुरी व पुष्पक नाम विमान छीनलिया ६ उस पुरी में रावण सब राक्षसोंका स्वामी होकर रहनेलगा उसके अमित पराक्रमी बहुत से पुत्र उत्पन्न हुये ७ व महाबल पराक्रमवाले राक्षसलोग जो लङ्का में बसते थे व अनेक कोटि थे वे

शवण का आश्रयण करके ८ देवता, पितर, मनुष्य, विद्याधर व यक्षादि बहुतों को दिन रात्रि में मारडालने लगे ९ यहां तक कि उनके भय से चर अचर सब जगत् अत्यन्त दुःखित हुआ १० उसी काल में इन्द्रादि देवता, महर्षिलोग, सिद्ध, विद्याधर, गन्धर्व, किन्नर ११ गुह्यक, नाग, यक्ष व और भी जो स्वर्गवासी थे सब के सब ब्रह्माजी व महादेवजी को भी आगेकर १२ हतविक्रमवाले वे लोग क्षीरसागर के तटपर गये व वहां श्रीपरमेश्वर की आराधना करके हाथ जोड़ खड़े हुये १३ तब ब्रह्माजी श्रीविष्णु भगवान् की पूजा गन्ध पुष्प धूपादिकों से कर हाथ जोड़ प्रणाम करते हुये श्रीनारायणजी की स्तुति करने लगे॥ १४॥

ब्रह्मोवाच॥ चौपाई॥

क्षीरजलधिवासी भगवाना। नागभोगशायी गुणवाना॥
कमलाकर लालित पदपंकज। नमोनमोअबकरततुम्हेंअज१।१५
योगान्तर्भावित भगवन्ता। योगनिद्रगत विष्णु अनन्ता॥
गरुड़ासन गोविन्द सुदेवा। नमत तुम्हें करिके बहुसेवा२।१६
क्षीरोदधि कल्लोललग्नतन। शार्ङ्गपाणि पंकजपदगतमन॥
पद्मनाभ श्रीविष्णु तुम्हारे। नमोनमोहम करतपुकारे३।१७
भक्तार्चितपद सुनयन माधव। योगप्रिय शुभांग अब मामव॥
नमोनमो हम नमो मुरारे। करत तुम्हें वच दीन उचारे४।१८
सुकच सुनेत्र सुमस्तकचक्री। सुमुख सदा कबहूं नहिं वक्री॥
श्रीधर सुन्दर वर्ण तुम्हारे। नमोनमो है दीन उधारे५।१९
सुभुजसुगण्डसुकण्ठसुनाभा। पद्मनाभ शुभवक्ष सदाभा॥
करतप्रणामजोरियुगपानी। विनयकरनहमबहुनहिंजानी६।२०

चारु देह शार्ङ्गी भ्रुकुटीबर। चारुदन्त केशव जनदरहर।क
चारुजंघ अरु दिव्य स्वरूपा।तवपदनमतसकलसुरभूपा७।रूप
सुनख सुशान्त सुविद्याधारी। गदापाणि वामन तनुकारी॥न
देव धर्म प्रिय बारम्बारा। करतप्रणतियहअनुगतुम्हारा८।२२
उग्र असुरनाशक राक्षसहर। देवदुःख नाशन करुणापर॥
भीमकर्मकारी भयहारी। तुम्हें नमतहम दीनपुकारी९।२३
रावणनाशक लोक सुपाली। सकलअसुरराक्षस जिन घाली॥
करत प्रणाम तिन्हें हम नीके। सकलमर्मजानतजोजीके१०।२४

मार्कण्डेयजी बोले कि जब ब्रह्माजी ने ऐसी स्तुति की तो श्रीभगवान् करुणानिधान सन्तुष्टहुये व अपना रूप दिखाय ब्रह्माजी से बोले कि हे पितामह! देवताओं के साथ तुम किस अर्थ आये २५ हे ब्रह्मन्! जिस कार्य के लिये तुम ने स्तुति की वह कार्य बताओ जब देवदेव प्रभविष्णु श्रीविष्णुजी ने इस प्रकार से कहा तो २६ सब देवगणों के साथ ब्रह्माजी जनार्दनजी से बोले कि दुष्टात्मा रावण ने सब जगत् का नाश करडाला २७ उस राक्षस ने इन्द्रादि देवताओं को अनेक बार पराजित करलिया व राक्षसों ने बहुत से मनुष्यों का भक्षण करलिया व यज्ञ सब दूषित करडाले २८ व बलसे उसने सहस्रों लक्षों देवकन्या हरलीं इससे हे कमलनयन! आपको छोड़ और किसी की सामर्थ्य रावण के मारनेकी २९ नहीं है क्योंकि अन्यदेव इस विषय में असमर्थ होचुके हैं इससे आप उसका वध करें जब ब्रह्माजी ने ऐसा कहा तो श्रीविष्णु भगवान् ब्रह्मा से यह बोले कि ३० हे ब्रह्मन्! एकाग्रमन होकर

सो हम कहते हैं सुनो सूर्यवंशमें उत्पन्न अतिवीर्यवान् श्रीमान् पृथ्वीपर एक महाराज ३१ दशरथ नाम से प्रसिद्धहैं हम उनके पुत्र होंगे व हम तो आप होहींगे अपने तीन अंश और भी संग लेजायँगे क्योंकि दुष्ट रावण को मारना है ३२ परन्तु तुम सब देवगण भी अपने२ अंशों से वानररूप होकर पृथ्वी पर अवतार लो तब रावण का नाश होगा३३जब देवदेव श्रीविष्णु भगवान् जी ने ऐसा कहा तो लोक के पितामह ब्रह्माजी व सब अन्य देवगण प्रणाम करके सुमेरुपर्वत परको चले गये ३४ व अपने २ अंशों से वानररूप हो सब पृथ्वी पर उत्पन्न हुये व महाराज दशरथजी के कोई पुत्र नहीं था इससे उन्होंने वेदपारगामी मुनियों से ३५ पुत्र प्राप्त होने के लिये पुत्रेष्टि यज्ञ कराया तब सुवर्ण के पात्र में पायस लेकर ३६ श्रीविष्णुजी की प्रेरणा से अग्निकुण्ड से निकला मुनियों ने वह पायस लेकर मन्त्र पढ़कर दो भाग समान करडाले ३७ व मन्त्र से मन्त्रित दोनों पिण्ड कौसल्या व कैकेयी नाम महाराज की स्त्रियोंको दिये व पिण्ड खाने के समय में उन दोनों महारानियों ने सुमित्रा को ३८ अपने २ पिण्डों से थोड़ा २ निकालकर दिया क्योंकि वे भी सुन्दर भाग पाने की अधिकारिणी थीं इस रीति से दे ले उन राजपत्नियों ने अपने २ भाग भोजन किये ३९ सो देवदेव श्रीविष्णु भगवान्जी के कियेहुये निन्दारहित उन पिण्डों को खाकर वे तीनों महारानियां गर्भवती हुईं इस प्रकार श्रीविष्णु भगवान् दशरथजी से उन तीनों स्त्रियों

में उत्पन्नहुये ४० हे जगतीनाथ ! अपने रूप से एक साक्षात् आपही व तीन अंश और ये सब चाररूप प्रकटहुये उनके नाम रामचन्द्र, लक्ष्मण, भरत व शत्रुघ्न ये चारहुये ४१ वसिष्ठादि मुनियोंने चारों महाराजकुमारों के संस्कार वेदविधि से किये व मन्त्र पिण्ड के अनुसार चारों महाराजकुमार विचरने लगे ४२ जैसे कि श्री रामचन्द्रजी व लक्ष्मणजी ये दोनों जन तो नित्य एक संग विचरते थे व भरत शत्रुघ्न ये दोनों प्रायः एक संग रहते थे जब इनके जन्मादि सब संस्कार होगये तो अपने पिता के बड़े प्रीतिकारक हुये ४३ व वेद शास्त्रादि पढ़ कर सुलक्षण तथा महा वीर्यवाले होकर बड़े हुये उनमें कौसल्याजी में तो श्रीरामचन्द्रजी हुये व कैकेयी में भरत व लक्ष्मण शत्रुघ्न दोनों सुमित्रा में हुये भरत व शत्रुघ्न का श्रीरामचन्द्र व लक्ष्मण का एक संग रहने का यही कारण था कि कौसल्याजीने जो खीर सुमित्रा जीको दी थी उससे लक्ष्मणजी व जो कैकेयी ने दी थी उससे शत्रुघ्नजी हुये थे ४४ इन सब महाराजकुमारों ने वेदशास्त्र व शस्त्रशास्त्र अच्छे प्रकार पढ़े थे उसी काल में महातपस्वी विश्वामित्रजी ने ४५ विधिपूर्वक यज्ञसे श्रीविष्णु भगवान् की पूजा का आरम्भ किया पर राक्षसों ने उस यज्ञ में बहुतबार बड़े २ विघ्न किये ४६ इसलिये यज्ञकी रक्षाकराने को रामचन्द्रजी व लक्ष्मणजी के लेजाने के लिये विश्वामित्रजी अयोध्या जी में आये व हे नृपश्रेष्ठ ! उनके पिता दशरथजी के शुभमन्दिर में आये ४७ व महामतिवाले दशरथजी

ने उनको आयेहुये देख उठकर आदर से बैठाकर उन की अर्घ्य पाद्याचमनीयादि से बड़ी पूजा की ४८ जब मुनिराज प्रजानाथ से विधिपूर्वक पूजित हुये तो राजा के बनाय निकटजाय राजा से बोले कि, हे महाराज, दशरथजी! हम जिस लिये आये हैं सुनो ४९ हे नृप-शार्दूल! वह कार्य तुम्हारे आगे कहते हैं दुष्ट राक्षसों ने हमारा यज्ञ बहुतबार नष्ट भ्रष्ट करडाला ५० सो यज्ञ की रक्षाकरने के लिये राम लक्ष्मण दोनों अपने पुत्रों को हमें दो तब राजा दशरथजी विश्वामित्र का वचन सुन ५१ बहुत उदासीन हो विश्वामित्रजी से बोले कि हमारे इनबालक पुत्रों से तुम्हारा कौन कार्य होगा ५२ हम तुम्हारे साथ चलकर अपनी शक्ति से तुम्हारे यज्ञ की रक्षाकरेंगे राजाके वचन सुन राजा से मुनिजी बोले ५३ हे राजन्! श्रीरामचन्द्र सबको नाश करसक्ते हैं इससे वे राक्षस श्रीरामचन्द्रही के मारनेके योग्यहैं व तुम्हारे मारे वे राक्षस नहीं मरसक्ते ५४ इस से हमको श्रीरामचन्द्र को देदो आप चिन्ताकरनेके योग्य नहीं हैं जब धीमान् विश्वामित्र मुनि ने ऐसा कहा तो राजा एक क्षणभर मौनरहकर फिर विश्वामित्र जी से बोले कि ५५ हे मुनिश्रेष्ठ! जो हम कहते हैं प्रसन्न हो आप सुनें हम तो कमलनयन रामचन्द्र को उनके भाईसहित आप को देंगे ५६ किन्तु हे ब्रह्मन्! इनकी माता बिना इनके देखे मरजायगी इससे हम चतुरंगिणी सेना लेकर ५७ वहां आय सब राक्षसों को मारेंगे यह बात हमारे मनमें स्थितहै विश्वामित्रजी

अमित पराक्रमी राजादशरथजीसे फिर बोले कि ५८ हे नृपश्रेष्ठ! रामचन्द्र अनारी नहीं हैं किन्तु ये सर्वज्ञ समदर्शी व सब कुछकरनेमें समर्थ हैं क्योंकि ये दोनों जने श्रीनारायण व शेषनागजी हैं तुम्हारे पुत्र हुये हैं इसमें कुछ भी संशय नहीं है ५९ हे राजन्! न इनकी माता को शोक करना चाहिये न तुम्हींको थोड़ाभी शोक करना चाहिये क्योंकि हम जितने कार्यके लिये लियेजाते हैं उसके होजानेके पीछे फिर तुमको सौंप जायँगे जैसे कोई किसी की थाती धर रखताहै व उसके मांगनेपर तुरन्त देदेताहै ६० जब धीमान् विश्वामित्रजी ने ऐसा कहा तो मन में उनके शाप से डरकर राजा दशरथजी ने कहदिया कि अच्छा लेजाओ ६१ इस रीति से बड़े कष्ट से जब दशरथजी ने रामचन्द्रजी को छोड़ा तो लक्ष्मण सहित रामचन्द्रजी को ले विश्वामित्रजी अपने सिद्धाश्रमनाम स्थानको चले ६२ उनको चलतेहुयेदेख राजा दशरथजी बहुत दूरतक पीछे २ जाकर मुनिसे फिर बोले कि ६३ हे ब्रह्मन्! हम प्रथम अपुत्र थे फिर बहुत से काम्यकर्मोंके करने से व मुनिके प्रसाद से अब पुत्रवान् हुये हैं ६४ इससे मनसेभी इनका वियोग हम नहीं सहसक्के इस बातको आप अच्छीतरह जानते हैं इससे लिये तो जातेहो पर शीघ्रही हमको देजाइयेगा ६५ जब ऐसा राजा ने कहा तो विश्वामित्र जी फिर राजा से बोले कि जैसेही यज्ञ समाप्त होजायगा वैसे रामचन्द्र व लक्ष्मण को हम फिर पहुँचाजायँगे ६६ यह बात सत्यता के

साथ प्रतिज्ञा करके कहते हैं आप चिन्ता न करें जब मुनिने ऐसा कहा तो राजा ने रामचन्द्र व लक्ष्मण को भेजा ६७ परन्तु इच्छा से नहीं भेजा मुनिके शापकेही भय से भेजा तब विश्वामित्र जी दोनों जनों को लेकर अयोध्याजी से धीरे २ चले ६८ व सरयूजी के तीर पर जाय जब विश्वामित्रजी अकेले रहगये तो दोनों जनों को दो विद्या मुनि ने दीं ६९ एक विद्या का वला नाम था दूसरी का अतिवला सो मन्त्रसहित व संग्रह सहित दीं इन दोनों विद्याओं में यह गुण था कि पढ़नेवाले को क्षुधा पिपासा कभी नहीं लगती थी उनके पीछे फिर भी उन महामति ७० मुनिराजने बहुत से अस्त्रसमूह सिखाये व मार्ग में बड़े २ मुनियों के बहुत से दिव्य आश्रम दिखाते ७१ हुये व उनमें बसतेहुये व बाजे पुण्यस्थानों को दिखातेहीहुये गंगाजीको उतर शोणभद्र नद के पश्चिम के तट पर पहुँचे ७२ इस प्रकार सिद्ध धर्मात्मा मुनियों को देखते हुये व उनसे आशीर्वाद व वरपातेहुये रामचन्द्रजी व लक्ष्मणजी मुनि के साथ गये ७३ जाते २ मानों मृत्युका दूसरा मुखही था ऐसे ताटकानाम राक्षसी के वनमें पहुँचे तब महातपस्वी विश्वामित्रजी ७४ सबकर्म सहजही में करनेवाले श्रीरामचन्द्रजी से यह वचन बोले कि हे राम हे राम हे महाबाहो ! ताटकानाम राक्षसी ७५ रावण की आज्ञा से इस महावन में बसती है उसने बहुतसे मनुष्य मुनियों के पुत्र व मृगों को ७६ मारडाला व भक्षण करलिआ है इससे हे सत्तम ! इसे मारो जब मुनि

ने ऐसा कहा तो श्रीरामचन्द्रजी उन मुनि से बोले ७७ कि हे मुनिराज! हम स्त्रीका वध कैसेकरें क्योंकि स्त्रीके वधमें बुद्धिमान् लोग बड़ा पाप कहते हैं ७८ रामचन्द्र जी का ऐसा वचन सुन विश्वामित्रजी उनसे बोले कि हे रामचन्द्र! जिस स्त्रीके वधसे सबजन व्याकुलता रहित ७९ होते हैं इससे उसका वधकरना निरन्तर पुण्यदायक होता है विश्वामित्रमुनि ऐसा कहतेही थे कि इतने में वह महाघोर निशाचरी ८० मुख बाये हुई ताटका आयही गई मुनि से प्रेरित श्रीरामचन्द्रजी ने उसे ८१ एक हाथ उठाये आती हुई व पश्चाद्भाग में पुरुष के आंत की क्षुद्रघण्टिका पहिने व मुहबायेहुई देख स्त्रीके वध में घिनघिनाहट व बाण को साथही छोड़ा ८२ व बड़े वेग से शर धन्वापर सन्धान करके उन्होंने उसकी छाती के दो खण्ड करडाले इससे हे राजन्! वह गिरी व मर भी गई ८३ उसे इस रीति से
मरवाकर व दोनों जनोंको लिवा लेकर मुनि ९
उनको नाना ऋषियों से सेवित ८४ नान र्ग १०५
वृक्ष लताओं से भरा हुआ नाना प्रका पर गिर २
उपशोभित नाना प्रकार के झरनों के हादेवजी का
न्ध्याचल के बीच में स्थित ८५ शाक श्रीरामचन्द्रजी
दिव्य अपने सिद्धाश्रम पर पहुँचाया नेमें विश्वामित्र
१०७ जनकजी
उन दोनों जनों को स्थापितकर व ऋ ऋषियों के संग
कर ८६ उसके पीछे विश्वामित्रजी विधिपूर्वक पूजा
प्रारम्भ किया जब महात्मा व मह ी से राजा जनक
जी यज्ञकर्म की दीक्षा में प्रविष्ट

फैला ऋत्विज्लोग कर्म करनेलगे कि वैसेही मारीच
व सुबाहु तथा और भी बहुतसे राक्षस ८८ रावण
के भेजे हुये यज्ञनाशकरने के लिये आये उनको आये
हुये जान कमललोचन श्रीरामचन्द्रजी ने ८९ बाण
से सुबाहु को तो मारकर धरणीपर गिरा दिया व
रुधिर की धारा बरसाते हुये मारीच को विना गांसी
के बाण से ९० मारकर समुद्र में जा गिराया जैसे
पत्ते को पवन उड़ाकर स्थानान्तर में गिराता है व
और निशाचरों को भी रामचन्द्रजी व लक्ष्मणजी ने
मारडाला ९१ इस प्रकार श्रीरामचन्द्रजी से यज्ञकी रक्षा
पाय विश्वामित्रजीने विधिपूर्वक यज्ञसमाप्तकर ऋत्विजों
की पूजा की ९२ व सदस्यों की भी पूजा यथोचितकरभक्ति
से श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजी की भी पूजा की ९३
तब देवगण यज्ञके भाग से सन्तुष्ट हो श्रीरामदेव
के शिरपर पुष्पों की वर्षा करनेलगे ९४ तब भ्रातास-
शोभा श्रीरामचन्द्रजी राक्षसोंसे उत्पन्न भय निवारणकर
प्रकार सिद्ध को कराय नानाप्रकार की कथा सुन ९५
आशीर्वाद व के साथ वहां पहुँचे कि जहां अहल्या
मुनि के साथ ग न्द्र के संग व्यभिचार करने के कारण
मुखही था ऐसे ता र्वकाल में शापदिया था ९६ व इससे
महातपस्वी विश्वा थी रामचन्द्रजी के दर्शन से व उनके
करनेवाले श्रीरामच परने से वह अहल्या शाप से छूट
हे राम हे महाबाहो जी को फिर प्राप्त हुई ९७ वहां पर
की आज्ञा से इस मह क्षणभर चिन्तना करके यह वि-
मनुष्य मुनियों के पुत्र हिये कि रामचन्द्रजी का विवाह
भक्षण करालिया है इस

कराके तो इन कमललोचन को पहुँचावें ९८ यह विचारांशकर उन दोनों भाइयों को ले व बहुतसे शिष्य गणों के संग विश्वामित्रजी जनकपुरी को चले ९९ व नाना प्रकार के देश मार्ग में नांघते हुये राजा जनकजी के स्थानपर पहुँचे वहां बड़े २ राजपुत्र सीताजी के पाने की इच्छा से प्रथम आचुके थे १०० उनको देख जो जिसके योग्यथा उसकी वैसी पूजाकर राजा जनक जी ने जो सीता से अर्थात् हल के कूँड़से महादेवजी का बड़ा भारी धन्वा उत्पन्न हुआ था १०१ उसे चन्दन मालादिकों से पूजित कर परमशोभायुक्त बड़भारी रंगभूमि स्थान में स्थापित कराया १०२ व राजा जनक वड़े ऊँचे स्वरसे उन राजाओं से बोले कि हे राजपुत्रो! जिसके खींचने से यह धन्वा टूटजायगा १०३ धर्म से उसीकी भार्या सर्वांग शोभन सीता होगी जब उन महात्मा जनकजी ने ऐसा सुनाया तो १०४ सब अपनी २ पारीपर आय २ धन्वा पर प्रत्यञ्चा चढ़ाने लगे पर हे राजन्! सबके सब उस धनुष से ताड़ित होहो १०५ घूम २ लज्जा रहित होकर राजालोग पृथ्वी पर गिर २ पड़े उन सबोंके भागजाने पर वह महादेवजी का धनुष १०६ संस्थापन कर राजा जनक श्रीरामचन्द्रजी के आगमन की इच्छासे स्थित थे इतनेमें विश्वामित्र जी मिथिलेश्वर के स्थान पर पहुँचे १०७ जनकजी ने श्री रामचन्द्र व लक्ष्मणसमेत व ऋषियों के संग विश्वामित्रजी को आये हुये देख १०८ विधिपूर्वक पूजा कर विप्रों के अनुयायी विश्वामित्रजी से राजा जनक

बोले व रघुवंश के पति सुन्दरतादि गुणों से संयुक्त १०६
शील सदाचारादि गुणों से युक्त रामचन्द्रजी व महा-
मति लक्ष्मणजी की भी पूजा यथोचित करके प्रसन्न
मन हो राजा जनक ११० सोने की चौकी पर बैठे हुये
चारों ओर से शिष्यों से घिरे विश्वामित्रजी से बोले
कि हमको इस समय क्या करने की आज्ञा है १११
मार्कण्डेयजी राजा सहस्रानीकजी से बोले कि उनका
ऐसा वचन सुन मुनिजी राजा से बोले कि हे महाराज!
ये श्रीरामचन्द्रजी साक्षात् विष्णु हैं व महीपति हो
कर ११२ देवताओं व सब लोकों की रक्षा करने के
लिये राजा दशरथजी के पुत्र हुये हैं इससे देवकन्या
के समान स्थित अपनी सीता नाम इनको दो ११३
व तुमने इस अपनी कन्या के विवाह में महादेव के धनुष
के भङ्ग कराने की प्रतिज्ञा की है इससे शिव का धन्वा
मँगाओ व उसकी पूजाकरो ११४ बहुत अच्छा ऐसा
कह राजा ने बहुत राजपुत्रों के बलके भङ्ग करनेवाला
अद्भुत शिवका धन्वा पूर्वरीति के अनुसार स्थापित
कराया ११५ तब महाराज दशरथजी के पुत्र कमल-
लोचन श्रीरामचन्द्रजी विश्वामित्रजी के कहनेसे उन
सब लोगों के मध्य में उठकर ११६ ब्राह्मणों व देव-
ताओं के प्रणामकर व उस धन्वा को उठाय प्रत्यञ्चा
चढ़ाय उन महाबाहु ने उसका टंकोर किया ११७ व
जैसेही बल से खींचा है कि वह महाधनुष मध्यसे
टूटगया कि माला लेकर आय सीताजीने श्रीरामचन्द्र
जीके गले में ११८ पहिनाय सब क्षत्रियों के सम्मुख

श्रीरामचन्द्रजी को अंगीकार करलिया तब वे क्षत्रिय लोग बड़े क्रुद्ध होकर श्रीरामचन्द्रजी के ऊपर ११९ गर्जतेहुये बाणोंके समूह छोड़नेलगे उनको देख धनुष ले बड़े वेगवान् श्रीरामजीने १२० प्रत्यञ्चाके शब्दही से उन सब राजाओंको कम्पायमान करदिया व उनके बाण समूहोंको व रथों को अपने अस्त्रोंसे काटडा-ला १२१ व सबोंके धन्वा व पताका भी रामचन्द्रजी ने लीलापूर्वक काटडाला तब राजा जनकजीभी अपनी सब सेना तैयारकर १२२ अपने जामाता श्रीरामचन्द्र जीके साथी हुये व महाबीर लक्ष्मणजीने समरमें उन सब राजाओं को भगाकर १२३ उनके हाथी घोड़े व बहुत से रथ छीनलिये वे सब बाहन छोड़ २ भाग खड़ेहुये १२४ उनको मारनेके लिये लक्ष्मणजी उनके पीछे २ दौड़े तब राजाजनकजी व विश्वामित्रजी ने रोंका १२५ व सेनाको जीतेहुये भाईसहित महावीर श्रीरामचन्द्रजी को साथ ले जनक अपने गृहमें प्रविष्ट हुये १२६ व विश्वामित्रादि सब के सम्मत से महाराज दशरथजी के बुलाने के लिये दूत भेजा दूत के मुखसे सुन सब प्रयोजन जान महाराज दशरथजी ने १२७ अपनी सब स्त्रियों पुत्रों रथ घोड़े हाथियों व सेना समेत वहांसे यात्राकी व सब समाज सहित बड़ी शीघ्रता के साथ जनकपुर में पहुँचे १२८ जनकजीने भी महाराज दशरथजी का बड़ाभारी सत्कारकर तदनन्तर अपनी कन्या विधिपूर्वक यौतुक के साथ श्रीरामचन्द्रजी को दी १२९ उनके यहां तीन कन्या और भी अतिरूपवती

थीं उन्हें अच्छीतरह भूषितकर लक्ष्मणादि तीन भाइयों को तीनों कन्या विधिपूर्वक दीं १३० इसप्रकार विवाह होजाने के पीछे कमलनयन श्रीरामचन्द्रजी अपनी माता व भ्राता व सेना सहित पिता के साथ १३१ विविध प्रकार के भोजन करतेहुये कुछ दिन वहांरहे तदनन्तर जब राजादशरथजी ने अपने पुत्रादिकों समेत अयोध्यापुरी को चलने को मनकिया तो १३२ राजाजनक जी ने देखकर अपनी कन्या सीताजी को बहुत धन दिया व रामचन्द्रजी को भी रत्न दिव्यवस्त्र व बहुतसी अन्य स्त्रियां अतिशोभन वस्त्र हाथी घोड़े व कर्म करने के योग्य बहुतसे दास व बहुतसी दासियां व बहुतसी अन्यभी श्रेष्ठ स्त्रियां दीं १३३ व बहुत रत्नों से भूषित कर सुशीला सीतानाम अपनीकन्या को रथपर चढ़ा कर वेदादि घोषों से व मुनियों के सुमङ्गलों से युक्त करके बलीराजा जनकजी ने भेजा १३४ इस प्रकार जानकीजीको बिदाकर व श्रीरामचन्द्रजी के समर्पणकर व विश्वामित्रजी के नमस्कारकर जनकजी लौटे १३५ व राजा जनकजीकी स्त्रियों ने चलने के समय अपनी कन्याओं को बहुत सिखाया कि अपने पति की सेवा व भक्तिकरना व सासुओं की व श्वशुरकी भी सेवाकरती रहना १३६ व कन्याओं को उनकी सासुओं को सौंप कर लौटीं व अपने गृह में पैठीं तब सेना आदि लिये हुये अयोध्याजी के निकट पहुँचगयेहुये श्रीरामचन्द्रजी को सुन १३७ परशुरामजी ने आकर उनका मार्गरोक लिया १३८ उनको देखकर सब राजा के नौकर चाकर

दीन मन होगये व महाराज दशरथजी भी मारेशोक व दुःख के डूबगये १३९ स्त्री परिवार व मन्त्रिवर्गादि सहित राजा परशुरामजी के भय से बहुत व्याकुल हुये तब सब जनों से व बहुत दुःखित राजा दशरथजी से १४० बड़े तपस्वी ब्रह्मचारी व महामुनि वसिष्ठजी बोले कि तुमलोग रामचन्द्रजी के लिये इस समय कुछ भी दुःख न करो १४१ न उनके पिताही दुःख करें न माता न और भृत्यादिक ही दुःखकरें क्यों कि हे राजन्! ये श्रीराम साक्षाद्विष्णुहैं तुम्हारे गृह में १४२ जगत् के पालन करने के लिये उत्पन्न हुये हैं इसमें संशय नहीं है जिसके नाम के कीर्तन करने से संसारसागर की भीति नष्ट होजाती है १४३ व वे आप मूर्तिधारी ब्रह्म हैं फिर भयादिकी वहां कौनसी कथाहै क्योंकि जहां श्रीरामप्रभुकी कथामात्र कहीजातीहै १४४ वहां महामारी आदि भय नहीं होते न अकाल में मरण मनुष्यों का होताहै वसिष्ठजी ने जैसेही ऐसा कहा है कि परशुरामजी आगे खड़ेहुये श्रीरामचन्द्रजी से बोले १४५ कि कितो तुम अपना राम यह नाम छोड़दो वा हमारे साथ संग्राम करो ऐसा कहनेपर श्रीराघवजी मार्ग में खड़ेहुये परशुरामजी से बोले कि १४६ राम नाम हम क्यों छोड़ेंगे तुम्हारे संग युद्ध करेंगे खड़ेरहो यह कह समाज से बाहर निकल राजीवलोचन भवभयमोचन श्रीरामचन्द्रजी ने १४७ अपने धन्वा की प्रत्यञ्चापर वीर परशुरामजी के आगे टंकोर किया तब परशुराम के देह से श्रीविष्णु का तेज १४८ निकल

कर सब लोगों के देखतेही देखते श्रीरामचन्द्रजी के मुखारविन्द में प्रवेश करगया यह देख परशुरामजी प्रसन्नमुख हो श्रीरामचन्द्रजी से बोले कि १४९ हे महाबाहो, राम, हे राम ! राम तुम्हींहो इसमें कुछ संशय नहीं है आप साक्षात् विष्णुही हैं यहां उत्पन्न हुये हैं हमने आज आपको जाना १५० इससे हे वीर ! आप यथेष्ट जायँ व देवताओं का कार्यकरें व दुष्ट राक्षसादिकों का वधकर शिष्टलोग देव मनुष्यादिकों का पालन करें १५१ हे रामचन्द्रजी ! आप अपनी इच्छा से जायँ व हमभी अब तपोवन को जाते हैं यह कहव मुनि होने के भाव से श्रीरामादिकों से पूजित हो परशुराम १५२ तप करने में मन लगाकर महेन्द्राचल पर चलेगये तब श्रीरामचन्द्रजी के संग के सब जन हर्षितहुये व महाराज दशरथ भी बड़े प्रसन्नहुये १५३ व अपने श्रीरामचन्द्रादिकों के संग अयोध्यापुरी में पहुँच महाराजने उस पुरीकी और भी बड़ी शोभा कराई बड़े २ राजभवन सजाये १५४ व बाजे बाजनेलगे सो सुनकर सब पुरवासीलोग उठधाये शंख नगारे आदि के शब्दों के साथ विवाह कियेहुये व रण जीतहुये श्री रामचन्द्रजीको पुरी में प्रवेश करतेहुये देख १५५ सब बहुत हर्षित हुये व रामचन्द्रजीहीके संग २ पुरीमें पैठे व राजभवनमें जाय अतिहर्षाय रामचन्द्रजी व लक्ष्मणजी विश्वामित्रजी के निकट आये उनको आयेहुये देख १५६ राजा दशरथ व उनकी माताओं को सौंप व सब से अच्छीतरह पूजित हो व राजासे विशेष पूजा

पाकर १५७ विश्वामित्रजी ने एकाएकी बिदा होनेका मन किया राजा ने प्रेम करके और भी कुछ दिन न जाने दिया पर वे चले चलने के समय ॥ १५८ ॥

चौपाई ॥

अनुजसहितरामहिंमुनिराया।पितहिसौंपिहँसिकरिवहुदाया॥
बारबार हँसि वचन सुनाई।निजसिद्धाश्रमगेमुनिराई॥१॥१५६

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेश्रीरामचरितेसप्तचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४७ ॥

अड़तालीसवां अध्याय ॥

दो० अड़तालिसयें महँ अयो, ध्याकाण्डी सब गाथ।
कही नृपतिसोंक्रमहिसों, भलीभांतिमुनिनाथ॥१॥

श्रीमार्कण्डेयजी बोले कि, विवाह करके आने के पीछे महातेजस्वी कमललोचन श्रीरामचन्द्रजी पिता में बड़ी प्रीति करते हुये व अन्य सबजनोंसे भी प्रीति उत्पन्न करते हुये १ अयोध्याजी में सब भोग विलास करतेहुये निवसे इस प्रकार प्रीतिपूर्वक अयोध्याजी में आनन्द करतेहुये श्रीराघवेन्द्रजीके २ अपने भ्राता शत्रुघ्नसहित भरतजी अपने मामा के यहां गये तब राजा दशरथजीने अति सुन्दर ३ युवावस्था को प्राप्त महाबली राजा होने के योग्य महापण्डित पुत्र श्री रामचन्द्रजीको देख विचारा कि अब रामचन्द्र को राज्याभिषेककर व सब राज्यभार इनके ऊपर स्थापित कर विष्णुके ४ पदके प्राप्ति का यत्नकरें यह चिन्तना की व अच्छीतरह इस बातका दृढ़ निश्चयकर उसमें तत्पर हो सब दिशाओंमें जानेके लिये ५ चतुर भृत्यों

को व छोटे २ राजाओं को व मन्त्रियों को आज्ञादी कि तुम सब रामचन्द्र के राज्याभिषेक के लिये मुनि-राज वसिष्ठादि जो २ वस्तु बतावें ६ उन्हें लेकर अति शीघ्रताके साथ आओ हे भृत्यलोगो ! दूत व अमात्य लोगोंने महाराजकी आज्ञासे सब दिशाओंके राजाओं को ७ बुलाकर व सबको इकट्ठेकरके कहा कि तुमलोग सब शोभायुक्त अयोध्यापुर में अतिवेग आओ ८ व हे लोगो ! सब कहीं अपने २ गृहोंमेंभी नृत्यगीतादि का आनन्द करो व पुरवासियों का आनन्द तथा देश-वासियों का भी आनन्द मङ्गलहो ९ क्योंकि प्रातःकाल श्रीरामचन्द्रजी का राज्याभिषेक होगा इस बात को सबलोग जानो इस बात को सुन सब मन्त्रीलोग प्रणाम करके महाराजसे बोले कि १० हे महाराज ! यह जो आपने विचारा है आपका मत बहुत अच्छाहै क्योंकि श्रीरामजी का राज्याभिषेक हम सब लोगोंको भी प्रिय-कारीहै ११ जब मन्त्रियों ने ऐसा कहा तो महाराज दशरथजी फिर उनसे बोले कि हमारी आज्ञासे सब लोग अभिषेक की सामग्री लेआओ १२ यद्यपि यह पुरी सब प्रकार से सारभूत है व सब बनी चुनी है पर आज और भी शोभा युक्त कीजाय व यज्ञ करने के लिये स्थान बनाया जाय १३ जब महाराज ने ऐसा कहा तो शीघ्र कार्य करनेवाले उन मन्त्रियों ने एक दूसरेसे फिर २ कहकर वैसाही सब कार्य बातकी बात में करदिया १४ उस शुभदिन को देखतेहुये महाराज बहुत हर्षितहुये कौसल्या लक्ष्मण सुमित्रा व सब नगर

निवासी भी अत्यन्त हर्षितहुये १५ व रामचन्द्रजी का अभिषेक सुन ये सब परमानन्दित हुये व सासु ससुर की शुश्रूषा में तत्पर १६ सीताजी भी अपने पति का शुभ सुन बहुत आनन्दितहुईं व यह बात सर्वत्र प्रसिद्ध होगई कि विदितात्मा श्रीरामचन्द्रजी का राज्याभिषेक प्रातःकाल होगा १७ तब उसी रात्रि में कैकेयी की दासी मन्थरा नाम थी जोकि रूप में उलटी कूबरी थी अर्थात् अन्य कूबरवालों के पीठपर कूबर होताहै पर उसकी छातीपर था उसने अपनी स्वामिनी कैकेयी से यह वचन कहा १८ कि हे महाभाग्यवाली रानीजी मेरा अच्छा वचन सुनो तुम्हारे पति महाराज जी तुम्हारे नाश करने में उद्यतहुये हैं १९ क्योंकि कौसल्या के पुत्र ये राम प्रातःकाल राजा होंगे इससे धन बाहन खजाना व सब राज्य २० अब रामचन्द्र का होगा भरत का कुछभी नहीं सो भी भरत मामा के यहां गये हैं जोकि बहुत दूर है २१ हा बड़े कष्टकी बातहै तुम बड़े मन्दभाग्यवाली हो क्योंकि अब सौतसे अत्यन्त दुःख पाओगी ऐसा सुनकर कैकेयी उस कूबरी से यह वचन बोली कि २२ हे कुब्जे! आज हमारी चतुरता को देख कि जिससे सब राज्य भरत का होजायगा २३ व रामचन्द्रको वनवास होजायगा वैसाही यत्न अभी हम करती हैं मन्थरा से ऐसा कह अपने सब भूषण उतार २४ व उत्तम वस्त्र तथा पुष्पादि जो धारणकिये थी सब उतारकर मोटे व पुराने वस्त्र धारणकरलिये एक बारके पहिनेहुये पुष्पमाला जो उतारडाले थे फिर

पहिन लिये कष्टयुक्त व विरूप बनाकर २५ भस्म धूलि आदि देह में लगाय व भस्म धूलि संयुक्त पृथ्वी के भागपर विना दीप के स्थान में सन्ध्यासमय अति दुःखित हो २६ व मस्तक में श्वेत फटाहुआ वस्त्र बांधकर क्रुद्धहो वह रानी सोरही व महाराज मन्त्रियों के साथ सब कार्यों के लिये विचारांशकर २७ व पुण्याह स्वस्तिवाचन मङ्गलों के साथ श्रीरामचन्द्र जी को यज्ञशाला के स्थान में वसिष्ठादि ऋषियों स-मेत व यज्ञसामग्री समेत २८ मङ्गलकार्यों में जागने वाले लोगोंसमेत स्थापितकर कि जहां सब ओर से नगारे आदि बाज रहे थे व गाना नाचना होरहा था शंख मृदंगादि बाजे बाजते थे २९ वहां बड़ी बेरतक आप भी रहकर महाराज दशरथजी फिर वृद्ध लोगों से रक्षित कैकयी के द्वारपर आये ३० कि जाकर श्री रामचन्द्र के अभिषेक के मङ्गल समाचार कैकयी को सुनावें परन्तु कैकयी का मन्दिर देखा तो उसमें सब अन्धकार था दीप नहीं बरते थे इससे बोले कि ३१ हे प्रिये ! आज तुम्हारे मन्दिर में अन्धकार क्यों है श्रीरामचन्द्रजी के अभिषेक का हर्ष अन्त्यज कोरी पासी चमारादिकों ने भी किया है ३२ व अन्य सब लोग अपने २ गृहों को मनोहर भूषित करते हैं तुमने आज नहीं किया इसका क्या कारण है यह कह महा-राज ३३ उस गृह में दीपक जलवाकर तो उसमें पैठे वहां अशोभन अङ्ग किये हुई अपनी पत्नी कैकयी को पृथ्वीपर पड़ी सोती हुई ३४ देखकर दशरथजी उसे

उठाकर छपटाय उससे यह प्रिय वचन बोले कि हमारा
परम वचन सुनो ३५ हे शोभने! जो रामचन्द्र अपनी
माता से भी अधिक तुम्हारी भक्ति करते हैं उन रामचन्द्र
का प्रातःकाल राज्याभिषेक होगा ३६ राजाने जब ऐसा
कहा तो वह शुभगुणावती भी थी पर कुछ न बोली
केवल मारे रोष के बड़ी लम्बी व उष्णश्वास बार २
छोड़तीही रहगई ३७ तब रोष कियेहुई उसको दोनों
हाथों से पकड़े उठाये हुये महाराज बोले कि हे शो-
भने, कैकेयि! तुम्हारे दुःख का क्या कारण है हम से
कहो ३८ वस्त्र भूषण व रत्नादि जो २ चाहती हो वह
भाण्डार से लो व सुखिनी होओ ३९ व हमारे भा-
ण्डार की प्रातःकाल सिद्धि होगी जब कि राजीव
लोचन रामचन्द्र का अभिषेक होजाने पर ४० भाण्डार
गृह का द्वार खोल दियाजायगा व जो चाहे उठाले
जाय व अभिषेक के कार्यों में लगायाजायगा फिर जब
रामचन्द्र राजा हो राज्य करने लगेंगे तो फिर भराजा-
यगा ४१ इससे महात्मा रामचन्द्र का अभिषेक बहुत
मानो जब राजवर्य ने ऐसा कहा तो पापलक्षणवाली ४२
कुबुद्धि दयाहीन दुष्टा व मन्थरा की सिखाई हुई वह
कैकेयी अपनेपति राजा से क्रूर व अत्यन्त निठुर वचन
बोली कि ४३ रत्नादि जो कुछ तुम्हारे है वह सब ह-
माराही है इसमें कुछ भी संशय नहीं है परन्तु देवासुर
महायुद्ध में प्रीति से जो वर हमको ४४ दिये थे हे
राजन्! वे दोनों अब इस समय हमें देदो जब उसने
ऐसा कहा तो महाराज अशुभरूपिणी कैकेयी से बोले

कि ४५ हमने न भी दिया हो तो भी तुमको सब देंगे हां और को नहीं पर जो हमने देनेही को कह रक्खा है उसके देने में क्या है हमने दिया ४६ अब शुभाङ्गी होओ अनर्थ कोप छोड़ो रामचन्द्र के अभिषेक से उत्पन्न हर्ष को सेवन करो उठो सुखी होओ ४७ जब राजाने ऐसा कहा तो कलहप्रिया कैकेयी फिर कठोर व राजा के मरजाने का लक्षण वचन बोली ४८ कि पूर्व के दिये हुये दोनों वर जो हमको देतेहो तो प्रातःकाल होतेही कौसल्या के पुत्र ये राम वनको जायँ व तुम्हारे वचन से बारहवर्ष तक दण्डकवन में बसें अभिषेक व राज्य भरत का होवे ४९ कैकेयी का घोर व अप्रिय ऐसा वचन सुनकर महाराज दशरथजी मूर्च्छित हो पृथ्वीपर गिरपड़े व कैकेयी परमानन्दित हुई ५० जो रात्रि बाकी थी उसे बिताय प्रभात होतेही हर्षितहो सुमन्त्रनाम दूत को बुलाकर कहा कि राम को यहां लेआओ ५१ रामचन्द्रजी जानों पुण्याह स्वस्तिवाचन ब्राह्मणों से करारहेथे व यज्ञके मध्य में बैठे हुये शंख नगारे आदि का शब्द सुनरहेथे ५२ उनके निकट जाय सुमन्त्र प्रणामकर आगे खड़ेहो बोले कि हे राम, राम, महाबाहो! पिताजी कुछ आपको आज्ञादेते हैं ५३ इससे शीघ्र उठिये व जहां तुम्हारे पिताजी हैं वहां चलिये उस दूत के ऐसे वचन सुन शीघ्र उठकर श्रीराघव ५४ ब्राह्मण से पूछकर कैकेयी के भवनको गये प्रवेश करते हुये रामचन्द्रजी से निर्दयावाली कैकेयी बोली ५५ कि हे वत्स! तुम्हारे पिता का यह मत तुमसे कहती हैं कि तुम

जाकर बारह वर्षतक वनमें बसो ५६ सो हे वीर! तप करने में मनलगाकर आजही जाओ हे वत्स! इसमें कुछ विचारना नहीं है आदर से हमारा वचन करो ५७ पिता का यह वचन सुन कमलनयन श्रीरामचन्द्र तथा कह आज्ञा को अङ्गीकार कर व माता पिता दोनों के प्रणामकर ५८ उसमन्दिर से निकल अपने गृह से धन्वा ले कौसल्या व सुमित्रा के प्रणामकर चलनेपर उद्यतहुये ५९ इस बात को सुनकर सब अयोध्याबासी दुःख व शोक में डूबगये व अत्यन्तव्यथित हुये व लक्ष्मणजी कैकेयी के ऊपर बड़ेक्रुद्धहुये तब ६० लाल २ नेत्रकिये लक्ष्मणजी को देख महामति व धर्मज्ञ श्री रामचन्द्रजीने धर्मवचनों से उनको रोंका ६१ तदनन्तर जो वहां वृद्धलोग थे उनके व मुनियोंके भी प्रणामकर श्रीराघवजी दुःखित सारथिसे युक्त रथपर जानेकेलिये आरूढ़ हुये ६२ व उन महाराजकुमारजीने अपने सब पदार्थ व विविधप्रकार के वस्त्र ब्राह्मणों को देदिये ६३ व तीनों सासुओं के प्रणामकर व उनकी आज्ञा ले व श्वशुर के भी प्रणाम कर जो कि मूर्च्छित पड़ेहुये नेत्रों से शोक से उत्पन्न आंशुओं की धारा छोड़रहे थे ६४ व सब ओर देखतीहुई सीताजीभी उसीरथ पर चढ़ीं रथ पर चढ़ सीतासहित श्रीराघव को जातेहुये ६५ देख दुःखित होतीहुई सुमित्राजी अपने पुत्रलक्ष्मणजी से बोलीं कि रामचन्द्र को दशरथ जानो व जानकी को हम को जानो ६६ व वनको अयोध्यामानो हे गुणाकर! इन्हीं दोनों पिता माता के समानों के साथ चलेजाओ

स्तनों से दुग्धबहातीहुई माताने जब ऐसा कहा तो ६७ धर्मात्मा लक्ष्मणजी माता के प्रणामकर उसी रथपर आपभी चढ़लिये इस प्रकार वनको जातेहुये रामचन्द्र जी के पीछे भाई लक्ष्मण व पतिव्रता सीताजी भी ६८ चली गईं तब रामचन्द्रजी पुरसे बाहर निकले फिर विधि से छिन्न अभिषेक वाले मेघवर्ण कमललोचन श्रीरामचन्द्रजी जब अयोध्याजी से निकले ६९ तो पुरोहितलोग मन्त्रिगण तथा मुख्य २ सब अयोध्या-बासीलोग सारे दुःख के व्याकुल हो ७० पिता की आज्ञापाकर वनको जातेहुये रामचन्द्र महाराज से यह बोले कि हे राम, राम, शोभन, महाबाहो! आप जाने के योग्य नहीं हैं ७१ हे राजन्! यहां लौटआओ हम लोगोंको छोड़ कहांजातेहो जब उन लोगोंने ऐसा कहा तो दृढ़व्रत धारणकरनेवाले श्रीराघवजी उनसे बोले ७२ कि हे मन्त्रियो! लौटजाओ व हे पुरोहितो! तुम भी लौटो हम पिताजीकी आज्ञा अवश्यही करेंगे इससे वनको जायँगे ७३ व बारहवर्षतक दण्डकवनमें बस यह व्रत बिताकर पिता व माताओं के चरणों के दर्शन करनेकेलिये फिर आवेंगे ७४ यह उनलोगों से कह सत्यपरायण श्रीरामचन्द्रजी चल खड़ेहुये व जाते हुये उनके पीछे २ दुःखित सबलोग फिर चले ७५ तब श्रीरामचन्द्रजीने फिर कहा कि तुमलोग अब पुरी को चलेजाओ व इसपुरीको हमारी माताओं को पिता जीको शत्रुघ्नको ७६ व सब प्रजाओंको राज्य व भरत को पालनकरो हे महाभाग्यवालो! हम तो अब तप

करनेकेलिये वनको जाते हैं ७७ फिर श्रीराघवजी लक्ष्मणजीसे बोले कि, जाकर सीताको मिथिलापुरी के राजाजनकजी को सौंपदो ७८ व तुम माता पिताके वशमेंरहो जाओ हमजातेहैं जब रामजीने ऐसा कहा तो भ्रातृवत्सल व धर्मात्मा लक्ष्मणजी बोले कि ७९ हे करुणाकर, नाथ! ऐसी हमको आज्ञा न दीजिये क्योंकि जहां आप जानाचाहते हैं वहां हम अवश्य चलेंगे ८० जब लक्ष्मणजी ने ऐसा कहा तो श्री राघवजी सीताजी से बोले कि हे सीते! हमारी आज्ञा से तुम अपने पिता के यहां वा हमारेही पिताजी के यहां जाओ तो अच्छा है ८१ चाहे सुमित्राजी के यहां रहना चाहे कौसल्याजी के यहां जबतक हम न आवें तबतक वहीं निवास करो ८२ जब श्रीराघव जी ने ऐसा कहा तो हाथ जोड़ सीताजी बोलीं कि हे महाभुज! जिस वन में आप जाकर बासकरेंगे ८३ वहां आप के साथ चलकर मैं भी बासकरूंगी पर हे राजन्! सत्यवादी आप का वियोग नहीं सहसक्ती ८४ इससे आप की प्रार्थना करती हूं मेरे ऊपर दया कीजिये जहां आप जाया चाहते हैं वहां मैं अवश्य जाया चाहती हूं ८५ इन दोनों जनों से ऐसा कह नानाप्रकार के बाहनों पर चढ़े पीछे २ आते हुये अन्यजनों को देख जिन में कि बहुत सी स्त्रियां भी थीं धर्मज्ञ श्री रामचन्द्रजी ने सबको रोंका ८६ कि हे लोगो! व हे स्त्रियो! तुम सब लौटकर अयोध्याजी में रहो हम तप करने में मन लगाय दण्डकारण्य में जाय कुछ वर्ष

वहां रहकर तब यहां आवेंगे इसके विपरीत न करेंगे सत्यही कहते हैं ८७ वहां भाई लक्ष्मण व सीता भार्या को छोड़ और किसी का निर्वाह नहीं है इस रीति से बड़ी २ युक्तियों से लोगों को लौटाकर श्रीरामजी गुह के आश्रम को गये ८८ गुह तो श्रीरामचन्द्रजी का भक्तही था क्योंकि स्वभावही से परम वैष्णव था हाथ जोड़कर क्याकरूं ऐसा कहकर खड़ा होगया ८९ व कहने लगा कि आप के पूर्वज महाराज भगीरथजी बड़ी भारी तपस्या करके सब पाप हरनेवाली शुभ गङ्गाजी को यहां लाये ९० इनकी सेवा नाना प्रकार के मुनिगण करते हैं व अनेक कच्छप मत्स्यादिकों से ये भरीहुई हैं बड़ी २ ऊंची लहरियों की मालाओं से सब मासों में युक्त रहती हैं जल इनका स्फटिकमणिके समान श्वेत बहता है ९१ गुहसे गङ्गाजी की ऐसी कथा सुन उसकी लाईहुई नौका पर चढ़के उन गङ्गाजी के पार उतर महाद्युतिमान् श्रीराघव भगवान् भरद्वाजजी के आश्रम पर गये ९२ वहां पहुँचकर प्रयागतीर्थ में जाय यथाविधि नहाय लक्ष्मण व सीता भार्यासहित ९३ भरद्वाजजी के आश्रमपर थँभे व उन्हों ने भोजनादि से बड़ी पूजा की रात्रिभर निवासकर विमल प्रातःकाल होने पर उन से पूछ श्रीराघवजी ९४ भरद्वाजजी के बतलाये हुये मार्ग हो धीरे २ चित्रकूट को गये जोकि नाना प्रकार के वृक्षों व लताओं से समाकीर्ण व पुण्य तीर्थ था ९५ तपस्वी का वेष धारणकर गङ्गाजी को उतरकर भार्या भ्राता समेत जब रामचन्द्रजी चले गये

थे तब उनका सारथि ९६ नष्टशोभा व दुःखित जनों से भरी हुई अयोध्यापुरी में लौट आया व यहां मूर्च्छित राजादशरथजी रामचन्द्रजी के वनको जानेके विषय में कैकेयी का कहाहुआ अप्रिय वचन सुनकर एक क्षण भर में जब उनकी मूर्च्छा जागी तो राम २ कह २ रोदन करने लगे ९७। ९८ तब कैकेयी राजा से बोली कि अब भरत का राज्याभिषेक करो सीता लक्ष्मण सहित रामचन्द्र वनको गये ९९ इस बात के सुनतेही राजा दशरथजी पुत्र के शोक से सन्तप्त हो बड़े दुःखसे देह छोड़ देवलोक को चले गये १०० तब उनकी महापुरी अयोध्या में हे शत्रुनाशक ! सब पुरुष व स्त्रियां दुःख शोक से पीड़ितहो रोदन करने लगे व लगीं १०१ कौसल्या व सुमित्रा व कष्टकारिणी कैकेयी मरेहुये दशरथजी के शरीर को घेरकर अपने पतिको पुकार २ रोनेलगीं १०२ तदनन्तर सब धर्म जाननेवाले राजा के पुरोहित वसिष्ठजीने तेलकी नौकामें राजाका मृतक देह धरवाकर १०३ दूतको भेजा व मन्त्रियों सहित आप राजकार्य देखने लगे उस दूतने जहां शत्रुघ्न सहित भरतजी थे वहां पहुंचकर १०४ राजा के मरण का वृत्तान्त न कहकर उन दोनों भाइयों को ले आकर अयोध्याजी में पहुँचादिया १०५ पर मार्ग में भरतजी ने क्रूरनिमित्त देखकर जानलिया कि अयोध्याजी में कुछ विपरीतवृत्त है १०६ यह शोचते भरतजी शोभा रहित श्रीरहित दुःख शोकसे युक्त व कैकेयी के कर्म अग्नि से जलीहुई पुरी में पैठे १०७ उनको देख मारे

दुःख से व्याकुल सबजन अत्यन्त रोदन करने लगे व
कहते कि हा तात! हा राम! हा लक्ष्मण! हा सीते १०८
यह बात कैकेयी के मुखसे सुनकर भरत व शत्रुघ्नभी
हा तात! हा लक्ष्मण! हा राम, हा सीते! कहकर
प्रथम बहुतरोये फिर बड़ाक्रोध उन्होंने किया १०९ व
कैकेयी से कहा कि अरे तू बड़ी दुष्टा व दुष्टचित्ताहै कि
जिसने श्रीरामचन्द्रजी को वनवास कराया कि जिससे
सीता लक्ष्मण सहित श्रीराघव वनको चलेगये ११०
अयेदुष्टे, अल्प भाग्यवाली! तूने यह तुरन्त क्या
साहस किया कि महात्मा लक्ष्मण व सीतासहित
श्रीरामचन्द्रजी को यहां से निकलवाय १११ मेरेही पुत्र
को राजकरो यह तेरीमतिहुई हाय तुझदुष्टा व नष्ट
भाग्यवाली का भाग्य वर्जित मैं पुत्र हुआ पर दुष्टे! भाई
श्रीरामचन्द्रजी से रहितहो मैं तो राज्य करूंगाही नहीं
११२ जहां पद्मपत्र के समान बड़े नेत्रवाले धर्मज्ञ सर्व
शास्त्र जाननेवाले मतिमान् नरव्याघ्र श्रीरामचन्द्रजी
हैं ११३ व महा भाग्यवती सर्व लक्षणसंयुक्त पतिव्रता
नियत व्रतकरनेवाली सीता जहां हैं ११४ व जहां
महावीर्यवान् गुणवान् भ्रातृवत्सल लक्ष्मणजी हैं वहां
मैं जाऊँगा हा कैकेयी! तूने महापापकिया ११५ मति-
मानों में श्रेष्ठ हमारे ज्येष्ठभ्राता रामचन्द्रही हमारे राजा
हैं व हम तो उनके सदा सेवकहैं ११६ माता से ऐसा
कह दुःखितहो अत्यन्त रोदन करने लगे हा राजन्,
पृथिवीपाल! हमको दुःखित छोड़ ११७ हे तात! कहां
गये अब हम क्या करें वह कहो करुणाकर पिता के

समान हमारे ज्येष्ठ भाई कहां हैं ११८ व माताके तुल्य सीताजी कहां हैं व लक्ष्मण कहां गये इस प्रकार विलापकरतेहुये भरतसे मन्त्रियों सहित ११९ वसिष्ठ भगवान् बोले जोकि काल व कर्मके सब विभागजानते थे हे वत्स! उठो २ तुम शोक करने के योग्य नहीं हो १२० कर्म कालके वशसे तुम्हारे पिता स्वर्गीहुये हे शोभन! अब उनके संस्कार कर्मकरो १२१ रामचन्द्रजी भी दुष्टों के नाशकेलिये व शिष्टोंकेपालन के अर्थ अवतरे हैं नहीं तो वेतो जगत्केस्वामी माधव हैं १२२ बहुधा जहां गयेहैं वहां रामचन्द्रजीको व लक्ष्मणजी को भी बहुत कार्य करने हैं वहां जाकर जो कर्तव्य है करके फिर रामचन्द्रजी आवेंगे १२३ कमललोचन श्रीराम नियतसमयसे अधिक वहां न रहेंगे जब महात्मा वसिष्ठजी ने भरतजी से ऐसा कहा तो १२४ उन्होंने वेदके विधान से सब अपने पिता के संस्कार किये प्रथम अग्निहोत्र के अग्नि से विधिपूर्वक पिता के देहका दाहकिया १२५ फिर सरयूजीमें स्नान करके उनकी जलदान क्रियाकी शत्रुघ्नके व माताओं के व बन्धु वर्गों सहित १२६ उनकी ऊर्ध्व दैहिकक्रिया करके मन्त्रियों के नायक वसिष्ठजी को संग ले हाथी घोड़े पैदरों को भी संग ले महामति भरतजी १२७ जिस मार्ग होकर श्रीरामचन्द्रजी गये थे उसी मार्ग होकर सब समाजसहित श्रीराघवेन्द्रजी के ढूँढ़ने व बुलाने को चले महासेनालियेहुये जाते उनभरतको जान व रामचन्द्रजी के विरोधी मानकर १२८ व भरतको उनका

शत्रु समझ श्रीरामजीके भक्त गुह अपनी सेना इकट्ठी कर कवच खड्गादि धारणकरके सन्नद्धहुआ १२९ महाबल परिवारवाले उसने भरतजी को मार्ग में रोक लिया व कहा कि हे दुष्ट! भाई व भार्या समेत हमारे स्वामी रामचन्द्रजी को वनमें भी ग्रासहोकर मारना चाहते हो १३० इससे हे दुरात्मन्! तुम इस बड़ी भारीसेना समेत उनके मारनेहीको जाओगे जब गुह ने राजकुमार भरतजीसे ऐसा कहा तो १३१ विनययुक्त हो व रामचन्द्रजीकी ओर हाथजोड़ भरतजी उससे बोले कि जैसे तुम रामचन्द्रजी के भक्तहो वैसेही हमभी उनके भक्तहैं १३२ हम विदेश में थे तब कैकेयी ने यह कर्म किया है सो हे महामते! अब हम रामचन्द्रजी के आननेकेलिये आज जाते हैं १३३ सत्यपूर्वक हम इसीकार्यकेलिये जाते हैं इससे हे गुह! हमको मार्ग दो जब ऐसी विश्वासकी सत्यवाणी उन्होंने कही तब उसने गङ्गाजी के पार उतारा १३४ बहुतसी नावोंसे उसने इनको उतार पाया तब ये गङ्गाजी में स्नान करके भरद्वाजजी के आश्रमपर पहुँचे व भरतजी उन मुनि के १३५ शिरसे प्रणामकर उनसे जैसे समाचार थे उसके अनुसार बोले भरद्वाजजीने भी उनसे कहा कि कालने ऐसा किया है १३६ इससे रामचन्द्रजी के अर्थ तुम इस समय कुछ दुःख न करो क्योंकि सत्यपराक्रम श्रीरामचन्द्रजी चित्रकूटपर विद्यमान हैं १३७ तुम्हारे वहां जानेपरभी बहुधा तो हम जानते हैं कि वे न आवेंगे तथापि तुम वहां जाओ व जो

वे कहें वह करो १३८ श्रीरामचन्द्रजी सीताके साथ वन में रहते हैं व लक्ष्मण दुष्टों के देखने में तत्पर रहते हैं १३९ जब धीमान् भरद्वाजजी ने भरतजी से ऐसा कहा तो वे यमुना उतर कर चित्रकूटनाम महापर्वतपर गये १४० तब उत्तरदिशा धूलिसहित दूरसे देख श्रीरामचन्द्रजी से कह उनकी आज्ञासे लक्ष्मणजी ने १४१ वृक्षपर चढ़के चारोंओर देखा तो उन्होंने बहुत हर्षित बड़ीभारी एक सेना आतीहुई देखी १४२ वह हाथी घोड़े व रथादिकों से संयुक्त थी उसे देख आकर रामचन्द्रजी से कहा कि हे भ्रातः! आप सीता जी के समीप स्थिर होकर बैठें १४३ क्योंकि कोई बड़ाबलवान् राजा है वह बहुत से हाथी घोड़े रथ पैदरों समेत आता है उन महात्मा लक्ष्मणजी का ऐसा वचन सुनकर १४४ सत्यपराक्रम व वीरशिरोमणि रामचन्द्रजी वीरलक्ष्मणजीसे बोले कि हे लक्ष्मण! बहुधा तो यह है कि भरत हमको देखनेको आते हैं १४५ विदितात्मा श्रीरामचन्द्रजी ऐसा कहते थे कि दूर अपनी सेना ठहराकर भरतजी विनय युक्त हो १४६ ब्राह्मणोंके व मन्त्रियों के साथ रोदन करते हुये आकर रामचन्द्रजी के व सीताजी के व लक्ष्मण जीके भी चरणों पर गिरपड़े १४७ व मन्त्री मातालोग अन्य सब सज्जन बन्धु मित्र वर्गादि चारोंओर से रामचन्द्रजीको घेरमारे दुःखके रोदन करनेलगे १४८ फिर पिताजी को स्वर्ग गयेहुये जान महामतिवाले श्रीरामचन्द्रजी भाई लक्ष्मण व जानकीजी के साथ १४९

पापनाशन उसतीर्थ में स्नानकर व जलाञ्जलि देकर व माता आदिकों के प्रणामकर रामचन्द्रजी बहुत दुःखितहुये १५० व हे राजन्! बड़ेभारी दुःख से संयुक्त भरतजी से बोले कि हे महामतिवाले, भरत! यहांसे शीघ्र अयोध्याको जाओ १५१ विना राजा की अनाथ नगरी का पालन करो जब ऐसा रामचन्द्रजी ने कहा तो भरतजी राजीवलोचन श्रीराघवजीसे बोले कि १५२ हे पुरुषव्याघ्र! बिना तुम्हारे हम यहां से न जायँगे जहां आप जायँगे वहां हम भी जायँगे जैसे कि सीता जी व लक्ष्मण संग जातेहैं १५३ यह सुन आगे बैठे हुये भरतजीसे फिर बोले कि जो मनुष्य धर्मके अनुवर्ती हैं उनको ज्येष्ठ भ्राता पिता के समान होता है १५४ इससे जैसे हम पिता के वचन का उल्लंघन नहीं करते वैसेही तुमको भी हमारे वचन का उल्लंघन न करनाचाहिये हे पण्डिततम! १५५ इससे हमारे समीप से जाकर तुम प्रजाओं का परिपालन करो यह पिताजी के मुख से निकलाहुआ बारहवर्ष का हमारा व्रतहै इससे उतने दिन वन में विचर कर फिर तुम्हारे निकट आवेंगे १५६ अब जाओ हमारी आज्ञा में टिको दुःख करनेके योग्य नहीं हो यह सुन आंशुओं से नेत्र भरेहुये भरतजी बोले १५७ जैसे पिता वैसेही हमारे आप हैं इसमें संशय नहीं है व विचार नहीं करना है तुम्हारी आज्ञा हमको सदा करने योग्य है अब आप अपनी पादुका हमको दें १५८ उन पादुकाओं का अवलम्बन कर बारहवर्ष नन्दिग्राम अर्थात्

भदरसामें बसेंगे जिसवेषसे तुमरहते हो वही हमाराभी वेषहोगा व जो तुम्हारा व्रत है वही हमारा महाव्रत होगा ॥ १५९ ॥

चौपाई ॥

द्वादश वर्ष गये तुम स्वामी। यदि न आइहौ अन्तर्यामी ॥
तोनिजतनुहमहव्यसमाना। हुनबअनलमहँसत्यप्रमाना १।१६०
इमि करिशपथ भरतभे आरत। कीन्ह प्रदक्षिण बहुत पुकारत॥
नमस्कारपुनिपुनिकरिरामहिं। निखिलदीनभयहरणअकामहिं२।१६१
शिरपरधरि हरिपादुक दोई। भरत चले धीरे मग जोई॥
भाइ निदेशकरत नँदिग्रामा। बसे बशी तपसीकृत सामा३।१६२
नियताहार मूलफल शाका। भोजन करत जपत अनुवाका॥
जटाकलापकियेशिरऊपर। तरुत्वचतनुधृतशयनकुभूपर ४।१६३
वनभव भोजन करत न आना। रामवचन आदर मनमाना॥
यासों भूमि भार धरिराजू। करत पादुकामतलै काजू ५।१६४

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेश्रीरामभरतचरिते अष्टचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४८ ॥

उनचासवां अध्याय ॥

दो० उञ्चसयें महँ कहउँ आ, रण्यकाण्डकी गाथ।
सबक्रमसों मुनि नृपतिसों, सोसुनि होहु सनाथ ॥ १ ॥

मार्कण्डेयमुनि राजासहस्रानीकजीसे बोले कि, जब भरतजी चलेगये तो उस महावन में कमललोचन भक्तभयमोचन पूर्णकाम श्रीराम भाई लक्ष्मण व सीता भार्या समेत १ शाकमूल फलाहार करते हुये विचरते थे एक समय लक्ष्मणजी कहीं फलादि लेने गये थे प्रतापवान् भगवान् श्रीरामचन्द्रजी २ चित्रकूटके वन के

उत्तमस्थान में जानकीजी के ऊपर शिरधर एक मुहूर्त भर शयन कररहे उसीसमय एक दुष्टात्मा काक आया ३ व सीताजी के सम्मुखहो उनके अञ्चल के ऊपर टोंट मारकर वृक्ष के ऊपर वह वायसाधम जाबैठा ४ तब रामचन्द्रजी जागे व स्तनों के बीच से रक्त बहता हुआ देख शोकयुक्त सीताजी से वे कमलनयन बोले कि ५ हे भद्रे! अपने स्तनों के मध्य से रक्त बहने का कारण बताओ जब ऐसा महाराज ने कहा तो वे सीताजी विनययुक्त हो पति से बोलीं ६ कि हे राजेन्द्र! दुष्ट चेष्टा वाले वृक्षपर बैठेहुये इस काक को देखिये हे महामते! आपके सोजाने पर इसी दुष्ट ने यह कर्म किया ७ श्रीरामचन्द्रजीने भी उस काकको देख उसकेऊपर क्रोध किया व एक सेंठा का बिना गांसीका बाण बनाय ब्रह्मास्त्रसे संयुक्तकर व वायससे कहकर ८ उस दुष्ट काक के ऊपर छोड़ा व वह भययुक्त हो भागा हे राजन्! वह इन्द्र का पुत्र था इस लिये जाकर इन्द्रलोक में घुसा ९ परन्तु प्रज्वलित श्रीरामचन्द्रजी का वह अस्त्र भी उसीके पीछे वहां पहुँचा जब इन्द्र ने यह समाचार जाना तो सब देवताओं के सम्मतसे १० श्रीराघवेन्द्र के अपकारी उस दुष्ट को निकालदिया तब सब देवताओंने उसे देवलोक से बाहर करदिया ११ तो फिर वह वहांसे भागकर श्रीरामचन्द्रजी के शरण में आया व बोला कि हे महाबाहो! रक्षाकरो रक्षाकरो मैंने अज्ञान से आपका अपकार किया है १२ ऐसा कहतेहुये उससे कमलनयन श्रीरामचन्द्रजी बोले कि हमारा

अस्त्र कभी निष्फल नहीं होता इससे एक कोई अङ्ग हमेंदे १३ तब तू जीवेगा दुष्ट तूने महाअपकार किया है जब प्रभुने ऐसा कहा तो उसने अपना एकनेत्र अस्त्रके लिये दिया १४ तब अस्त्र एक नेत्रको भस्मकर फिर रामचन्द्रजी के निकट आगया तबसे सब काकों के एकही नेत्र होता है १५ व उसी हेतु से वे एकही नेत्रसे देखते हैं बहुत दिन उस चित्रकूटपर रहकर श्रीराघव १६ नानामुनिगणोंसे सेवित दण्डकारण्य को अपने भाई व भार्या समेत तपस्वियों का वेषधरे चलेगये १७ व धनुर्व्बाण तरकस भी महाबल श्री रामचन्द्रजी धारण किये थे जब वहां पहुँचे तब उन्होंने मुनीश्वरों को देखा उनमें कोई तो सदा जल पानही करते थे १८ व बहुत पत्थरोंसे अन्न फलादि कूटकर खाते थे इस लिये अश्मकुट्ट कहाते व कोई दांतों को ही ओखरी बनाये थे कूटा पीसा अन्न नहींखाते केवल अपने दांतों से चबाते इस लिये वे दन्तोलूखली कहाते और कोई दिनके चौथेकाल में भोजनकरते इससे चतुर्थकालिक कहाते ऐसे २ उग्रतपकरनेवाले थे १९ उनसबों को देख श्रीरामचन्द्रजी प्रणाम करते व वे उन को अच्छेप्रकार अभिनन्दित करते इसतरह सब वन देख साक्षात्जनार्दन श्रीरामचन्द्रजी २० भ्राता व भार्या समेत वनमें सीताजीको नाना प्रकार के पुष्पोंसे शोभित सुन्दर २१ नाना प्रकारके आश्चर्योंसे युक्त वन दिखाते धीरे २ चलेजाते थे कि इतनेमें कालेरङ्ग का एकनेत्रवाला व मोटेपर्वतके समान का २२ उजले दांतों

का बड़ी २ बाहोंका सन्ध्यासमय के बादर के समान बालोंवाला व मेघके समान गर्जनेहारा व कुछ अपना अपराध किये हुआ एकराक्षस उन्होंने देखा इस लिये धन्वापर बाण चढ़ाकर श्रीराघवजीने २३ क्रोध से उसे मारा वह औरों से अवध्य था इससे महाप्रभु उस महा शरीरवाले राक्षस को मार पर्वतके एक गढ़े में २४ बहुतसी शिलाओंसे बन्दकर फिर वहां से शरभङ्गजीके आश्रमपर गये उनको नमस्कारकर व विश्रामकर उन की कथा सुन बहुत प्रसन्न मनहुये २५ व विन्ध्याचल के समान वर्तमान उन मुनिको देख भरत के श्रेष्ठभाई श्रीरामचन्द्रजी ने उनको जलदिया क्योंकि उनको जल देकर गर्भपात करनेवाला भी पुरुष पापसे छूटजाता है २६ फिर सुतीक्ष्णजी के आश्रमपर जाकर उन महा मुनि सुतीक्ष्णजी को देखा व उनके बताये हुये मार्ग होकर जाय अगस्त्यजीके दर्शन किये २७ उनसे श्री रघुनन्दनजीने एक विमल खड्ग पाया व एक इषुधि अर्थात् तरकस पाया जिसमें बाण सदा भरेरहते खर्च करने से नहीं चुकते थे व एक श्रीविष्णु का धन्वा पाया २८ फिर अगस्त्यजी के आश्रमपर से भ्राता व भार्या समेत श्रीरामचन्द्रजी जाकर गोदावरी नदी केतीर पञ्चवटी में बसे २९ तब वहां गृध्रोंका राजा जटायुनाम पक्षी आकर व रामचन्द्रजी के प्रणामकर अपने कुल की कथा कहकर स्थितहुआ ३० श्रीरामचन्द्रजी भी उसे वहां देख व उससे अपने सब समाचार विशेषरीति से कह उससे बोले कि हे महामतिवाले ! तुम सीता को

सदा रखाते रहना ३१ जब रामचन्द्रजी ने ऐसा कहा तो जटायु आदर से उनको छपटाकर आनन्दित हुआ जब रामचन्द्रजी किसी कार्य के लिये दूसरे वनको एक समय चलनेलगे तो ३२ जटायु ने कहा कि हम तुम्हारी भार्याकी रक्षाकिये रहेंगे यह शोभन आचरणवाली आप की भार्या यहां टिकी रहै ऐसा रामचन्द्रजी से कहकर जटायु अपने आश्रमपर चलागया ३३ व उसी जटायु के आश्रम के समीप दक्षिण ओर नाना प्रकार के पक्षियों से सेवित स्थानपर सीतासहित निवास करते हुये ३४ काम के समान रूपवान् श्री भगवान् रामचन्द्रजी महाकथा कहरहे थे कि सुन्दरता के गुणों से संयुक्त मायामयरूप बनाकर ३५ मदन से व्याकुल हृदय रावण की छोटी भगिनी अच्छेराग से गीत गातीहुई धीरे से किसी समय वहां आकर ३६ सीतासहित श्रीराघवजी को वनमें बैठेहुये उसने देखा फिर माया से सुन्दररूप धारण कियेहुई निश्शङ्क व पुष्ट चित्तवाली शुभ वेषधारिणी वह घोर शूर्पणखा राक्षसी श्रीराघवजी से बोली कि हे सुन्दर! कल्याणी व भजती हुई मुझ कामिनी को आपभजें ३७।३८ क्योंकि जो भजतीहुई स्त्रीको छोड़ता है उसके सङ्ग भोग नहीं करता उसको महादोष होता है जब शूर्पणखाने ऐसा कहा तो महाराज श्रीरामचन्द्रजी उससे बोले ३९ कि हे बाले! हमारे स्त्री है इससे हमारे छोटे भाई को तुम जाकर भजो क्योंकि जब हमारे सदन में भार्या है तो तुम से हमारा प्रयोजन नहीं है ४० यह सुनकर कामरूपिणी वह

शूर्पणखा फिर रामचन्द्रजी से बोली कि हे राघव! हम रतिके कर्ममें अतीव निपुण हैं ४१ इससे रतिकर्म न जानती हुई इन सीता को छोड़ हमको अङ्गीकारकरो क्योंकि हम अतिशोभन हैं यह सुनकर धर्ममें तत्पर श्रीरामचन्द्रजी फिर उस से बोले ४२ कि हम परस्त्री के सङ्ग नहीं भोगकरते तू यहां से लक्ष्मण के पास जा उनके यहां वन में भार्या नहीं है इससे वे तुझे ग्रहण करलेंगे ४३ जब ऐसा उन्होंने कहा तो राजीवलोचन श्रीरामचन्द्रजी से फिर वह बोली कि अच्छा जिस में लक्ष्मण हमारे भर्त्ता हों वैसा एकपत्र आप लिखदें ४४ जब उस ने ऐसा कहा तो कमलनयन व मतिमान् श्री रामचन्द्रजी ने इसकी नासिका काटलो छोड़ना नहीं इसमें कुछ संशय नहीं है ४५ यह लिखकर महाराज रामचन्द्रजी ने उसे पत्र देदिया ४६ उसने उस पत्र को लेकर व आनन्दयुक्त हो वहां से जाकर लक्ष्मणजी के निकट पहुँच उन महात्मा को वह पत्र देदिया ४७ वह पत्र देख कामरूपिणी उस राक्षसी से लक्ष्मणजी बोले कि हे काम से दुःखित हमको रामचन्द्रजी के वचन का उल्लंघन नहीं करना है इससे ठहरजा ४८ यह कह उसे पकड़ विमल व सुन्दर खड्ग निकाल उससे उसके दोनों कान व नासिका काटलिया ४९ जब वह नकटी व कनकटी होगई तो अति दुःखित हो रोनेलगी कि हा सब देवोंके मर्दन करनेवाले हमारे भाइ रावण ५० हा कुम्भकर्ण बड़े कष्टकी बात है कि हम को यह महा आपदा पड़ी हा हा कष्ट है हे गुणनिधि, महामति,

बिभीषणजी ! कहां हो ५१ इस प्रकार ऐसा रोतीहुई शूर्पणखा खरदूषण व त्रिशिर के पास जाकर व उनको देखकर अपने निरादर के वृत्तान्त उसने कहे ५२ व महाबली श्रीरामचन्द्र को भाई सहित जनस्थान में निवास किये हुये बताया उनलोगों ने जानकर श्री राघवजी के पास को बड़े बलवान् ५३ चौदहसहस्र राक्षसों को ले व उनके आगे वे तीनों राक्षसों के अधिपति भी चले ५४ क्योंकि उन महाबलवानों को रावण ने शूर्पणखा की रक्षाके लिये पूर्वकाल में नियत किया था सो वे महाबल से घिरे हुये राक्षस जनस्थान में आये ५५ क्योंकि वे लोग नकटी व कनकटी शूर्पणखा को देखकर बड़े क्रुद्ध हुये थे वह रावण की भगिनी रोदन करने के कारण आंसुओंसे भीगी जाती थी ५६ रामचन्द्रजी ने भी जब उन बलवान् राक्षसों की बड़ी भारी सेना देखी तो सीताजी की रक्षा के लिये वहां लक्ष्मणजी को संस्थापितकर ५७ व वहां जाकर बल से दर्पित उन महाबलवान् तीनों राक्षसों की भेजी हुई महाबलवती उस राक्षसों की सेना को ५८ अग्नि की शिखा के समान चमकते व जलते हुये बाणों से एक क्षणभर में मारडाला व खर व दूषण इन दोनों महाबलवानों को भी मारडाला ५९ व रण में त्रिशिर का भी बड़े रोष से श्रीराघवजीने वध किया उन सब दुष्ट राक्षसों को मारकर श्रीरामचन्द्रजी अपने आश्रमपर आये ६० तब रोती हुई शूर्पणखा रावण के निकटगई तब नकटी अपनी भगिनी को देख रावण ६१ दुर्बुद्धि

ने सीता के हरने के विचार से मारीच नाम राक्षस से कहा कि हे मामा! हम व तुम पुष्पक विमान पर चढ़ के जाके ६२ जब जनस्थान के समीप पहुँचेंगे तो हमारी आज्ञा से तुम सुवर्ण के मृगका रूप धरके धीरे धीरे ६३ कार्य के लिये चलना व कहां जाना जहां कि सीता टिकी हो सुवर्ण के मृग को बालक तुम को देख वह तुम्हारे लेने को ६४ इच्छा करेगी व रामचन्द्र को पकड़ने के लिये भेजेगी व उसके कहनेसे तुम्हारे पीछे जब रामचन्द्र दौड़ें तो तुम गहनवनमें दौड़ जाना६५ फिर लक्ष्मण के बुलाने के लिये तुम कोई श्रम होजाने का शब्द बोलना तब हम पुष्पक पर चढ़े हुये माया-रूप से ६६ उस सीता को लावेंगे क्योंकि हमारा मन उसमें आसक्त है व तुम भी फिर अपनी इच्छा से पीछे से चले आना हे शोभन ६७ जब ऐसा रावण ने कहा तो मारीच वचन बोला कि हे पापिष्ठ! तूही जा हम तो वहां न जायँगे ६८ क्योंकि पूर्वकालहीं में विश्वामित्र मुनि के यज्ञ में इन राम ने हमको व्यथित करदिया था जब मारीच ने ऐसा कहा तो रावण मारे क्रोध के मूर्च्छित हो ६९ मारीच के मारडालने पर उतारू हुआ तब मारीच रावण से बोला कि तेरे हाथ से मरने से वीर श्रीराम के हाथ से मरना श्रेष्ठ है ७० इस से जहा तुम हमको लेजाना चाहतेहो वहां हम जायँगे तो पुष्पकपर चढ़के जनस्थान में मारीच आया ७१ व सुवर्ण का मृग बनके जहां जनक की पुत्री श्रीसीता जी थीं वहां गया ७२ व सुवर्ण का मृग का बालक

देख यशस्विनी श्रीजानकीजी होनेवाले कर्म के वश से श्रीरामचन्द्रजी से बोलीं ७३ कि हे महाराजकुमार! यह मृग का बच्चा पकड़कर हमको दो अयोध्याजी में हमारे मन्दिर में यह खेलने के लिये होगा ७४ जब उन्होंने ऐसा कहा तो श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मणजी को वहीं सीताजी की रक्षा के लिये स्थापितकर आप उस मृग के पीछे गये ७५ जब रामचन्द्रजी उसके पीछे चले तो वह मृग वनमें भागा तब रामचन्द्रजी ने बाण से उस मृग के बच्चे को मारा ७६ वह हे लक्ष्मण! ऐसा जोरसे कहकर पृथ्वी पर गिरपड़ा व पर्वताकार वह मारीच उन रामचन्द्रजी के मारने से मृतक होगया ७७ हे लक्ष्मण! ऐसा कहकर रोतेहुये का शब्द सुनकर सीताजी लक्ष्मण से बोलीं हे पुत्र, लक्ष्मण! तुम वहां जाओ जहां यह शब्द उत्पन्न हुआ है ७८ तुम्हारे ज्येष्ठ भ्राता के रोदन का शब्द सुनाई देता है हम बहुधा रामचन्द्रजी को किसी सन्देह में पड़ेहुये लक्षित करती हैं ७९ जब उन्होंने ऐसा कहा तो लक्ष्मणजी निन्दारहित उन सीताजी से बोले कि श्रीरामचन्द्रजी को कहीं न कुछ सन्देह ही होसक्ता है न भयही होसक्ता है ८० ऐसा कहते हुये लक्ष्मणजी से भावी कर्मके बल से राजा विदेहकी भी कन्या जानकीजी विरुद्ध वचन बोलीं जो उनको लक्ष्मणजी के विषय में कहना उचित न था ८१ रामचन्द्रजी के मरजानेपर हमको चाहतेहो इससे तुम न जाओगे जब उन्होंने ऐसा कहा तो विनीतात्मा श्रीलक्ष्मणजी वह निन्द्य वचन न सहसके

के ८२ राजकुमार श्रीरामचन्द्रजी के ढूँढ़ने के लिये च-
लदिये व उसी बीच में सन्न्यासीका वेष बनाय दुष्टात्मा
रावण भी ८३ सीताजी के पास आकर यह वचन बोला
कि श्रीमान् भरतजी अयोध्याजी से आये हैं ८४ व
रामचन्द्रजी के साथ सम्भाषण करके उसी वनमें ठहरे
हैं सो रामचन्द्रजी ने हमको तुम्हारे समीप भेजा है
तुम इस विमानपर चढ़ो ८५ अब भरतने प्रसन्न किया
है इससे रामचन्द्रजी अयोध्याजी को जाते हैं व कहा
है कि तुम्हारे लिये मृग का बच्चा हमने पकड़ा है ८६
तुम इस महावन में बहुत दिनों से रहते २ क्लेशित हो
गई थीं अब तुम्हारे स्वामी रुचिर मुखारविन्दवाले
श्रीरामचन्द्रजी को राज्य मिलगया ८७ व विनीतात्मा
लक्ष्मण भी जाते हैं इससे तुम इस विमानपर चढ़ो
जब उसने ऐसा कहा तो वे विमानपर चढ़ीं व दुरात्मा
रावण ले भागा ८८ ये तो उसके छलसे विमानपर
चढ़गई थीं देखा तो वह विमान बड़ी शीघ्रता से द-
क्षिण दिशा को चला ८९ तब दुःखार्त्त होकर सीता
जी उसी विमानपर विलाप करने लगीं पर विमान
चढ़ीहुई आकाशमार्ग होकर रोदन करती हुई भी
सीताजी को रावण ने स्पर्श नहीं किया ९० व
सन्न्यास वेष छोड़ रावण अपने राक्षस के रूप में
होगया जिसके दश तो शिर थे व बड़ा भारी देह
था उसे देख सीताजी और भी दुःखितहुईं ९१ व
पुकारकर कहने लगीं कि हा राम! घोररूप कपट वे-
षधारी किसी राक्षस ने हमको छला है हमारी रक्षाकरो

हम बहुत भय से पीड़ित हैं ९२ हे महाबाहो, लक्ष्मण! हमको दुष्टराक्षस लिये जाता है इससे शीघ्र आकर लेजातीहुई व अतिव्याकुल हमारी रक्षाकरो ९३ इस प्रकार प्रलाप करतीहुई सीताजी की वह बड़ी भारी पुकार सुन जटायु नाम गृध्रराज वहां आपहुँचे ९४ व बोले कि हे दुष्ट, रावण! खड़ा हो व यहीं मैथिलीजी को छोड़दे इतना कह वीर्यवान् जटायुजी उससे युद्ध करने लगे ९५ पहिले उड़कर अपने दोनों पंखों से रावण की छाती में आघात किया मारने पर जटायुको रावण ने बड़ा बलवान् जाना ९६ व जटायु ने फिर अपनी वड़ी ऊँची चञ्चु से बार २ प्रहार किये तब रावण ने बड़ेवेग से चन्द्रहास नाम अपना खड्ग उठाकर ९७ उसीसे उस दुष्टात्मा ने धर्मचारी जटायुको मारा कि मूर्च्छितहो जटायु पृथ्वी पर गिरपड़े ९८ व रावण से बोले कि, हे दुष्टात्मन्! तूने हमको नहीं मारपाया किन्तु चन्द्रहास के वीर्य से हम मारेगये हे राक्षसाधम ९९ हे मूढ! आप आयुधलिये हो व दूसरा विना आयुध का हो तो तुझको छोड़ अन्य कोई नीच भी उस विना आयुधवाले को न मारेगा पर हे दुष्ट, राक्षस! इस सीताहरण को अपनी मृत्यु तू जाने १०० हे दुष्ट, रावण! तुझको श्रीरामचन्द्रजी मारडालेंगे इस में कुछभी संशय नहीं है फिर दुःखशोक से पीड़ित रोतीहुई श्रीमैथिलीजी जटायुसे बोलीं कि १०१ हे पक्षियों में उत्तम! हमारे लिये जिससे तुम ने मरण पाया है इससे तुम रामचन्द्रजी के प्रसाद से विष्णुलोक को

जाओगे १०२ व हे खगोत्तम ! जबतक तुम्हारा रामचन्द्रजी का सङ्ग न होगा तबतक तुम्हारे प्राण अभी देह में रहें उनसे ऐसा कह १०३ फिर अपने अंगों से कुछ भूषण झट उतार व वस्त्र में बांध श्रीराम के हाथ में जाना १०४ यह कहकर सीताजी ने भूमि पर फेंकदिया इस प्रकार सीता को हर व जटायु को मरणप्राय करके १०५ पुष्पक पर चढ़ा हुआ दुष्ट निशाचर लङ्काको चला गया व अशोकबनिका के मध्य में मैथिलीजी को स्थापित कर १०६ व इनको यहीं रखाओ ऐसा घोर राक्षसियों से कहकर राक्षसों का ईश्वर रावण अपने गृह को चलागया १०७ व लङ्का के सबनिवासी एकान्त में आपस में कहने लगे कि इस दुष्ट रावण ने इस पुरी के विनाश के लिये इनको यहां स्थापित किया है १०८ भयंकररूपवाली राक्षसियों से रक्षित सीताजी रामचन्द्रजीका स्मरण करती हुई अतिदुःखित वहां रहनेलगीं १०९ व बार २ अतिदुःख से पीड़ित हो अत्यन्त रोदन करतीं जैसे अज्ञानी खल के पास रहने से हंसपर चढ़नेवाली सरस्वतीजी दुःखित होती हैं ११० यहां जो भूषण सीताजी ने वस्त्र में बांधकर भूमि पर डाले थे कहीं सुग्रीवके चार सेवक वानर घूमते २ वहां गये थे उन्होंने उन को वैसेही वस्त्र से बँधेहुये लेकर १११ सुग्रीवजी को देदिये व कहा कि वन में आज जटायु व रावण से महायुद्ध हुआ ११२ यहां माया से आयेहुये मारीच को मार श्रीरामचन्द्रजी लौटे आते थे कि देखा

तो लक्ष्मणजी आते थे उन के साथ अपने आश्रम
पर आये ११३ सीताजी को वहां न देखतेही दुःखार्त्त
होकर श्रीराघवजी नरनाट्यलीला के अनुकरण करने
के लिये रोदन करने लगे व महातेजस्वी लक्ष्मणजी
भी अत्यन्त दुःखित हो विलाप करने लगे ११४ जब
रामचन्द्रजी रोदन करतेहुये बहुत अस्वस्थ होकर भूमि
पर गिरपड़े तो धीमान् लक्ष्मणजी उनको उठाय व
समझाकर ११५ समय के अनुसार जो वचन बोले
वह हम से सुनो हे महाराज! बार २ आप ऐसा दुःख
करने के योग्य नहीं हैं ११६ हे महाराज! उठिये २ च-
लिये सीताजी को ढूंढ़ें जब महात्मा उन लक्ष्मणजी
ने ऐसा कहा ११७ व दुःखित महाराज को दुःखित
भ्राता लक्ष्मणजी ने उठाया तब भाई के साथ श्री
रामचन्द्रजी सीताजी के ढूंढ़ने को वनमें गये ११८ व
प्रथम सब वन ढूंढ़े फिर सब पर्वत व उनके कँगूरे ढूंढ़े
फिर मुनियों के बहुत से आश्रम ढूंढ़े भूमिपर जहां
कहीं तृण वल्ली आदि से सघन स्थान था वहां भी
ढूंढ़ा ११९ नदी के तटपर व अन्यभूमि के श्रेष्ठ भागपर व
गुहाओं में इन सब स्थानों में महानुभाव श्रीरामचन्द्रजी
ने अपनी प्राणप्रिया को देखा पर न देखकर फिर
वे अतिदुःखित होगये कि तबतक देखा तो मारे
हुये जटायु पड़े थे १२० उन को देख बोले कि आपको
किसने मारा जो तुम ऐसी दशा को प्राप्त हुये अये म-
रगये हो कि जीते हो हम भी इस समय आपही के
समान दुःखित हैं क्योंकि पत्नी के वियोगसे यहां आये

हैं १२१ जब श्रीरामचन्द्रजी ने ऐसा कहा तो जटायु बड़े कष्ट से मधुरवाणी बोले कि हे राजन्! हमारा वृत्त सुनो जो हमने यहां देखा व किया है कहते हैं १२२ रावण माया से उन सीता को हरकर विमानपर चढ़ाय आकाशमार्ग होकर दक्षिणादिशा को मुख करके चला तब सीता माता ने दुःखित हो बड़ा विलाप किया १२३ हे राघव! तब सीताजी का शब्द सुन अपने बल से उनको छुटाने के लिये हम यहां आये व उस दुष्ट के साथ बड़ा भारी युद्धभी किया परन्तु खड्ग के बल से उस राक्षस से मारे भी गये १२४ सो वैदेहीजी के वाक्य से जीते हुये हमने आप को देखा अब यहां से स्वर्ग को जायँगे हे भूमिपाल, श्रीराम! आप शोक न करें अब परिवार सहित उस दुष्ट राक्षस को मारें १२५ जब जटायु ने ऐसा कहा तो रामचन्द्रजी शोक से फिर उनसे बोले कि हे पक्षियों में उत्तम! तुम्हारे लिये स्वस्ति हो व तुम्हारी उत्तम गति हो १२६ तब जटायु अपना देह छोड़कर दिव्य व रम्य विमानपर चढ़ अप्सराओं से सेव्यमान हो स्वर्ग को चलेगये १२७ तब रामचन्द्रजी अपने हाथों से जटायु की दाहक्रिया कर स्नानकर व तिलाञ्जलि दे भ्राता के साथ दुःखित जाते थे कि मार्गमें एक मानुषी स्त्री को उन्हों ने देखा १२८ जोकि प्रथम मुख्य मुनियोंको मुख फैलाकर भयकराती व मुख से अग्निकी ज्वाला उगिलती व अन्य जन्तुओं का भी नाश करती व क्रोध से गिरादेती व शबरी उस का नाम था उसने रामचन्द्रजी को बेर आदि फलोंसे

बहुत सन्तुष्ट किया इससे उसे स्वर्गको पहुँचाकर फिर
श्रीरामचन्द्रजी अन्यत्र को गये १२६। १३१ एक वन
में चले जातेहुये श्रीरामचन्द्रजी ने कबन्धनाम राक्षस
को देखा जिसका बहुत विरूप रूप था क्योंकि पेट में
तो उस का मुख था व बड़े लम्बे बाहु थे बादरकासा
गर्जनाथा १३२ उसने आकर रामचन्द्रजी का मार्ग
ही रूँधलिया इससे देखकर रामचन्द्रजी ने धीरे से
उसे जलादिया तब वह दिव्यरूपी व स्वस्थचित्त हो
श्रीराघवजी से बोला १३३ हे राम, राम, महाबाहो,
महामते! तुम ने बहुत दिनों से मुनि के शापसे हुआ
हमारा विरूप नाशित करदिया १३४ अब तुम्हारे प्र-
साद से स्वर्ग को जाता हूं इससे धन्य हूं तुम सीताके
मिलने के लिये सुग्रीव से मित्रताकरो १३५ क्योंकि वह
सुग्रीव वानरों का राजा है उसके समीप जाय अपना
सब वृत्तान्त कहो वह हे नृपश्रेष्ठ! ऋष्यमूक पर्वत पर
होगा इससे आप वहीं जायँ १३६ यह कह जब वह चला
गया तो लक्ष्मण सहित श्रीरामचन्द्रजी एक आश्रम
पर पहुँचे जोकि सिद्धमुनियोंसे शून्य पड़ाथा॥ १३७॥

चौपाई॥

तहँ तापसी विराजत एका। जपत सदा हरिसुगुण अनेका॥
त्यैंरामहिपूजतबिलँभावा। ताहिपूजिनिजकथासुनावा १॥१३८
सीताहि तुम पैहौ रघुनाथा। असकहि गहि धरि पदपर माथा॥
अग्निप्रवेशकीनतनुअपना।स्वर्गगईजगतजिगुनिसपना२॥१३९॥

हरिगीतिका॥

गुण सहित बहुत विनीत भ्राता सहित जगदीश्वर हरी।

दयिता वियोगे अयोग दुःखित रामनदिशिकी मगधरी ॥
श्रीरामदेव सुदेव सेवित जिन्हें दुख सपन्यो नहीं ।
सो करत हैं नरनाट्यलीला होत दुःखित हैं कहीं २ । १४०

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेरामचरिते
एकोनपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ४६ ॥

पचासवां अध्याय ॥

दो० कहब पचसयें महँ सकल, किष्किन्धावर काण्ड ।
जहँ सुकण्ठ भेजे कपिन, हते जिते ब्रह्माण्ड ॥ १ ॥

मार्कण्डेयजी सहस्रानीकराजा से बोले कि बाली से बैर किये दुर्गमस्थानमें बैठेहुये वानरोंके राजा सुग्रीव दूरहीसे श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजी को देख पवन के पुत्र हनुमान्जी से बोले १ कि धनुष हाथों में लिये चीर वल्कल धारण किये कमलयुक्त दिव्य पम्पासर को देखतेहुये ये दोनों किसके पुरुष हैं २ नाना प्रकार के रूपधारी ये दोनों इस समय तपस्वी के वेष धारण किये बाली के दूत हैं यहां आये हैं यह सुग्रीव ने निश्चय किया ३ इसलिये ऋष्यमूकपर्वत परसे वे उछले व अन्यवनकी ओर चले सब वानरों के सङ्ग उत्तम अगस्त्याश्रम की ओर बढ़े ४ वहां ठहरकर सुग्रीव पवनतनय से फिर बोले हे हनुमान्जी ! तुम तापस वेष धारण कर शीघ्र वहां जाओ व पूछो कि ५ वे कौन व किस के पुत्र हैं व यहां किस अर्थ आये व ठहरे हैं यह जान कर हे महामति, वायुपुत्र ! सब हम से सत्य २ कहो ६ जब सुग्रीव ने ऐसा कहा तो भिक्षुक का रूप धारणकर हनुमान्जी पम्पा के तीर पर जाय भ्राता

समेत श्रीरामचन्द्रजी से बोले ७ कि हे महामतिवाले! आप कौन हैं हम से सत्य कहें इस घोर वन में कैसे प्राप्त हुये हैं व क्या प्रयोजन है व कहां से यहां आये ८ ऐसा कहते हुये हनुमान्‌जी से अपने भ्राता की आज्ञा से लक्ष्मणजी बोले हम कहते हैं तुम रामचन्द्रजी के वृत्तान्त आदि से सुनो व समझो ९ महाराज दशरथ नाम पृथ्वी पर प्रसिद्धहुये हैं उन के ज्येष्ठ पुत्र ये श्री रामचन्द्रजी हमारे ज्येष्ठ भाई हैं १० इनका राज्याभिषेक होने लगा था कैकेयी ने उसे रोकदिया सो पिता की आज्ञा करने के अर्थ ये हमारे ज्येष्ठभ्राता रामचन्द्रजी ११ हमारे व अपनी भार्या सीताजी के सङ्ग वहां से निकलकर दण्डकारण्य में आये जहां कि नाना प्रकार के मुनिगण रहते हैं १२ सो जनस्थान में बसते हुये इन महात्मा श्रीरामचन्द्रजी की भार्या को कोई पापी हर लेगया १३ सीता को ढूंढ़तेहुये श्रीरामचन्द्रजी यहां आये तब तुमने देखा बस यह हमने वृत्तान्त कहा १४ लक्ष्मण महात्माके ऐसे वचन सुनकर पवन के पुत्र हनुमान्‌जी विश्वास से आनन्दहुये १५ व तुम हमारे स्वामी हो ऐसा रघुपति श्रीरामचन्द्रजीसे कहते हुये समझाकर व अपने सङ्ग ले आकर सुग्रीव से उन्हों ने इनकी मैत्री कराई १६ तब विदितात्मा श्रीरामचन्द्रजी के चरणारविन्द अपने शिरपर धर वानरेन्द्र सुग्रीव जी मधुर वचन बोले १७ कि हे राजेन्द्र! इस समय से आप अब हमारे स्वामी हैं इसमें कुछ संशय नहीं है व हे प्रभो! हम वानरों सहित आपके भृत्य हैं १८

हे राघव! आज से जो तुम्हारा शत्रु है वह हमारा शत्रु है व जो तुम्हारा मित्र है वह हमारा सन्मित्र है जो आप को दुःख है वह हमको भी है १९ व तुम्हारीही प्रीति हमारी प्रीति है यह कहकर फिर राघवजी से बोले कि महाबल पराक्रमी हमारा ज्येष्ठ भाई बाली है २० कामासक्त मन हो उसने हमारी नारी हरली है सो हे पुरुषव्याघ्र! तुमको छोड़ इस समय और कोई बाली के मारनेवाला नहीं है २१ इससे हे रघूत्तम, महाबाहु श्रीरामदेवजी! उसे आप मारें जब सुग्रीव ने ऐसा कहा तो उन कपीश्वर से रामचन्द्रजी ने कहा हम उसे मारडालेंगे २२ उसे मारकर बाली का राज्य व पत्नी व तुम्हारी पत्नी तुमको देंगे तब विश्वास के लिये सुग्रीव श्रीरामचन्द्रजी से बोले २३ व रामचन्द्रजी से क्षमा करातेहुये बाली का बल बतानेलगे कि एकही संग जो साततालके वृक्ष गिरावेगा वह बाली को मारसकेगा यह पुराणजाननेवाले लोगों ने कह रक्खा है हे महाराजकुमार २४ सुग्रीव का प्रिय करने के लिये श्री रामचन्द्रजी ने आधीही दूरतक खींचेहुये एकही बाण से उन बड़े भारी सातो वृक्षों को काटकर एकही संग गिरादिया २५ व उनमहावृक्षों को काटकर सुग्रीवसे श्रीरामचन्द्रजी बोले कि हे सुग्रीव! अपने में कुछ चिह्न बनाकर चलो बाली के संग युद्धकरो २६ जब श्रीरामचन्द्रजीने ऐसा कहा तो कुछ चिह्न करके सुग्रीव जाकर बाली के संग लड़े श्रीरामचन्द्रजी ने भी वहां जाय एकही बाण से बाली को २७ मारा यद्यपि वह

बड़ा वीर्य्यवान् था पर बाण के लगतेही गिरा व मर भी गया फिर डरेहुये बाली के पुत्र अङ्गद को जिसने कि बड़ी विनय की २८ व जो रणकर्म में बड़ा चतुर था श्रीराघवजी उसे युवराजपदवीपर स्थापित कर व तारा को व उनकी स्त्री को भी सुग्रीव को दे २९ फिर धर्मात्मा कमललोचन श्रीरामचन्द्रजी सुग्रीव से बोले कि अब तुम फिर वानरों के राजा होओ ३० व हे वानरेन्द्र! अब सीता के खोजने में बहुत शीघ्र यत्न करो ऐसा कहने पर सुग्रीव लक्ष्मण संयुक्त श्रीरामचन्द्रजी से बोले कि ३१ हे रघुनन्दनजी! इस समय अब बड़ाभारी वर्षाकाल आगया है इससे वनमें इन्द्र बसते हैं वानरों की गति इधर उधर जाने की नहीं रही ३२ जब वर्षाकाल बीतजायगा व निर्मल शरदकाल आवेगा तब हे राघवजी! सब दिशाओं में वानरों को दूत बनाकर भेजेंगे ३३ यह कहकर श्रीरामचन्द्रजी के प्रणाम कर कपीश्वर सुग्रीव पम्पापुर में प्रवेशकर ताराादिकों के संग क्रीड़ा करनेलगे ३४ व रामचन्द्रजी भी अपने भाई लक्ष्मण के साथ विधिपूर्वक उस नीलकण्ठनाम पर्वत के शृंग के ऊपर अतिमनोहर वन में बसे ३५ बड़े २ कष्टों से जब वर्षाकाल बीता व निर्मल शरदऋतु आया तो सीताजी के वियोग से व्यथित श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मण से बोले कि ३६ सुग्रीव ने समय का उल्लंघन करदिया इससे हे लक्ष्मण! तुम जाओ ३७ वह दुष्ट वानरराज अबतक नहीं आया उसने कहा था कि वर्षाकाल बीतजानेपर हम तुम्हारे समीप आवेंगे ३८

सो अकेले नहीं अनेक वानर संग लेकर आवेंगे यह कहकर उस समय वह गया था इससे अब जहां वह कपिनायक हो वहां तुम बड़ी शीघ्रता से जाओ ३९ व तारा के संग विहार करतेहुये उस दुष्ट को आगे कर सेना सहित शीघ्र यहां लाओ ४० जो कदाचित् ऐश्वर्य पाकर सुग्रीव यहां न आवे तो उस क्रुद्ध सुग्रीव से तुम यह कहना ४१ कि हे दुष्ट! बालीके मारडालनेवाला बाण अब भी हमारे हाथ में है इससे उसका स्मरण करके तूने श्रीरामचन्द्र के वचन को भुलादिया ४२ जब श्रीराघवजी ने ऐसा कहा तो लक्ष्मणजी श्रीरामजी के प्रणामकर व बहुत अच्छा ऐसाही करेंगे यह कह ४३ पम्पापुर को गये जहां कि सुग्रीव रहते थे वहां कपिराज सुग्रीव को देख लक्ष्मणजी बोले ४४ कि तुम तारा के भोग में आसक्त हो श्रीरामचन्द्रजी के कार्य से विमुख होगये जो तुमने श्रीरामचन्द्रजी के आगे समय किया था क्या भूल गये ४५ हे दुष्ट! तू ने कहा था कि जहां कहीं होंगी सीता को हम ढूँढ़देंगे जिन्होंने बाली को मार तुझको राज्य दिया ४६ उन रामचन्द्रजी का पापी तुझ वानरराज को छोड़ और कौन अपमान करेगा भार्याहीन श्रीरामचन्द्रजी से प्रतिज्ञा करके अब चुपहो बैठरहा ४७ देवता अग्नि व जल के निकट तूने प्रतिज्ञा की थी कि हम तुम्हारी सहायता करेंगे क्योंकि जो २ तुम्हारे शत्रु हैं राजन् वे २ हमारे भी शत्रु हैं ४८ व हे देव! जो तुम्हारे मित्र हैं वे हमारे भी सदामित्र हैं इससे सीता के खोजने के लिये हम

बहुत से वानर संग लेकर ४९ तुम्हारे पास को आवेंगे यह सत्य कहते हैं भला ऐसा कहकर उसके विपरीत कौन करेगा हा पापी तुझको छोड़कर कि रामदेव के समीप भी कहकर फिर न किया ५० हे दुष्ट वानर! उनसे अपना कार्य करालिया व आप चुप होरहा हम ने ऋषियों कासा सत्यवत् तुझ में इस समय देखा ५१ कि वे लोग सब के आचरणों को जानते हैं महात्मा होते व सर्वज्ञ होते हैं पर किसी के मारने के विषय में कुछ नहीं कहते वैसेही तूभी राक्षस हिंसा से डरता होगा ५२ हम इस लोक में ऐसा पुरुष नहीं देखते जो प्रथम अपना कार्य होजाने पर करनेवाले का प्रत्युपकार आप भी करे क्योंकि जब कार्य होजाता है तो सब की ओर मति होजाती है देखो बछड़ा जब दूध नहीं देखता तो माता को छोड़देता है ५३ शास्त्र में हमने बड़े २ पापियों का उद्धार देखा है परन्तु हे दुष्ट वानर! कृतघ्न पुरुष की निष्कृति हमने कहीं नहीं देखी ५४ इससे कृतघ्नता न कर अपनी कीहुई प्रतिज्ञा का स्मरणकर आर्हितपालक श्रीरामचन्द्रजी के शरण को चल ५५ व यदि न चलता हो तो रामचन्द्रजी का यह वचन सुन उन्होंने कहा है कि जैसे हमने बाली को यमालय को पहुँचाया है वैसे सुग्रीव को भी पहुँचावेंगे ५६ वह बाण हमारे पास अब भी है जिससे बाली वानर को हमने मारा था जब लक्ष्मणजी ने ऐसा कहा तो वानरों का नायक सुग्रीव ५७ अपने मन्त्री हनुमान्जी के कहने से निकलकर उसने लक्ष्मणजी

के प्रणामकिया व वह वानरराज लक्ष्मणजी से बोला भी ५८ कि अज्ञान से पाप करनेवाले हमलोगों के अपराध आप क्षमा करें अमिततेजस्वी श्रीरामचन्द्रजी से जो समय हमने किया है ५९ हे महाभाग ! उसका उल्लंघन अब भी नहीं करते हे महाराजकुमार ! आज सब वानरों को लेकर ६० तुम्हारे साथ श्रीरामचन्द्रजी के पास चलेंगे इसमें कुछ संशय नहीं है व हमको देख श्रीरामचन्द्रजी जो हमसे कहेंगे ६१ वह सब शिरसे ग्रहण करके करेंगे इसमें भी कुछ संशय नहीं है हमारे शूरवीर बहुत वानर हैं सीताजी के खोजने के लिये ६२ उनको सब दिशाओं में भेजेंगे हे राजन् ! जब वानरों के राजा सुग्रीव ने ऐसा कहा तो लक्ष्मणजी ६३ बोले कि अच्छा शीघ्र चलो हम तो अभी श्रीरामचन्द्रजी के पास जायँगे हे वीर ! वानरों व ऋक्षों की सेना बुलाओ ६४ जिसको देखकर श्रीरामचन्द्रजी तुम्हारे ऊपर प्रसन्न हों हे महामते ! जब लक्ष्मणजी ने ऐसा कहा तो वीर्यवान् सुग्रीवजी ६५ पासही में खड़ेहुये युवराज अङ्गद से संज्ञापूर्वक बोले वे भी वहांसे बाहर निकलकर सेनापति से जोकि सब सेना को लेचलता था उस से बोले ६६ कि सेना इकट्ठी करो बस जैसे सब सेनापतियों ने बुलाया कि ऋक्ष व वानरों के झुण्डके झुण्ड आये गुहाओं के रहनेवाले व पर्वतोंपर के व वृक्षोंपर के रहनेवाले सब आये ६७ उन सब पर्वताकार महापराक्रमी वानरों के साथ आकर सुग्रीव ने श्रीरामचन्द्रजी के प्रणाम किया ६८ व लक्ष्मणजी भी

नमस्कार करके भ्राता श्रीराघवजीसे बोले कि महाराज! अब इन विनीत सुग्रीव के ऊपर आप प्रसन्न हों ६९ जब भ्राता ने ऐसा कहा तो श्रीरामचन्द्रजी सुग्रीव से बोले कि महावीर, सुग्रीव! यहां आओ तुम्हारे यहां सब कुशल है ७० ऐसा श्रीरामचन्द्रजी का वचन सुन व महाराज को प्रसन्न जान सुग्रीव श्रीराघवजी से बोले ७१ कि हे राजन्! हमारी कुशल तो तब होगी जबकि श्रीसीतादेवीको लेआकर आपको देदेंगे अन्यथा कुशल कहां है ७२ जब सुग्रीवने ऐसा वचन कहा तो श्रीरामजी के प्रणाम करके पवन के पुत्र हनुमान्जी वानरों के राजा सुग्रीव जी से बोले कि ७३ हे सुग्रीव! हमारा वाक्य सुनो ये महाराज अत्यन्त दुःखित हैं यहां तक कि सीताजी के वियोग से फलादिक भी नहीं भोजन करते ७४ व इन्हीं के दुःख से ये लक्ष्मणजी भी सदा अतिदुःखित रहते हैं इन दोनोंकी जो अवस्था है उसे सुन इनके भाई भरत भी दुःखित होंगे ७५ व उनके दुःख से सब उनके जन अयोध्यावासी व राज्यवासी दुःखित होतेहोंगे जिससे ऐसाहै इससे हे राजन्! अब सीताजी का खोज लगाओ ७६ जब वायु के पुत्र हनुमान्जी ने ऐसा कहा तो तब तेजस्वी जाम्बवान्जी श्रीरामचन्द्रजी के नमस्कार करके आगे खड़ेहुये ७७ व वानरराज से नीतियुक्त वचन बोले क्योंकि वे बड़े नीतिमान् थे कि भो सुग्रीव! वायुपुत्र ने जो कहा उसे वैसाही जानो ७८ जहां कहीं यशस्विनी पतिव्रता महाभागा वैदेही जनकात्मजा श्रीरामचन्द्रजी की भार्या

सीता जी स्थित हैं ७९ हमारे मन में यह निश्चय है कि अब भी वे अपने पातिव्रत धर्ममें टिकी हैं क्योंकि कल्याण चित्तवाली उन सीताजी का निरादर पृथ्वी पर कोई ८० नहीं करसक्ता इससे हे सुग्रीव ! आजही वानरों को भेजो जब उन्होंने ऐसा कहा तो वानरों के नायक सुग्रीवजी बहुत प्रसन्नहुये ८१ व पश्चिम दिशा को प्रथम श्रीरामचन्द्रजी की भार्या सीता जीके ढूँढ़ने के लिये उन महापराक्रमी ने वानरों को भेजा ८२ फिर उत्तर दिशाको उन्होंने बड़े निपुण वानर बहुत से भेजे व उनसे कहा कि सीताजी का अन्वेषण सब जने जा करो ८३ व कपिराज ने पूर्वदिशा को भी श्रीरामचन्द्र जी की भार्या सीताजी के खोजने को बहुत से वानरों को भेजा ८४ इस प्रकार तीन दिशाओं में वानरों को भेजकर वानरों के अधिप बुद्धिमान् सुग्रीवजी बालि के पुत्र अङ्गद से बोले ८५ कि तुम सीताजी के खोजने के लिये दक्षिणदिशा को जाओ व जाम्बवान् हनुमान् मैन्द द्विविद ८६ नीलादि महाबल पराक्रम वानर जाते हुये तुम्हारे पीछे २ हमारी आज्ञा से जावेंगे ८७ सो शीघ्रही जाकर यशस्विनी उन सीताजी को देखआओ स्थानभी देख आना जहां रहती हैं उनका रूप शील विशेष जानआना ८८ कौन लेगया है व कहां हैं यह सब अच्छीतरह जान पुत्र ! शीघ्रही आओ जब महात्मा कपिराज सुग्रीव उनके पितृव्य ने ऐसा कहा तो ८९ अङ्गद ने तुरन्त उठकर उनकी आज्ञा शिरपर धारण करली ऐसा कहनेपर नीतिमान् जाम्बवान्जी सब

वानरों को एकओर स्थापितकर ९० श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजी सुग्रीव व हनुमान्जी को एक ओर स्थापितकरके बोले कि ९१ हे महाराजकुमार! सीताजी के खोजने के विषय में हमारा वचन सुनो व सुनकर जो आपको रुचे तो ग्रहणकरो ९२ सीता को जनस्थान से रावण लिये जाता था तब जटायु ने देखाथा व अपनी शक्तिभर युद्धभी किया था ९३ व सीताजी के फेंके हुये भूषणभी जटायु ने देखे थे उनको हमलोग देखकर उठालाये व सुग्रीव को देदिया ९४ सो जटायु के कहने से लाये थे यह बात सत्य जानिये कि रावण नेही सीता हरी है ९५ तो जब निश्चय है कि रावणही ले गया है तो लङ्का में सीता होंगी व तुम्हारे दुःख से दुःखित वहां तुम्हारा स्मरण करती होंगी ९६ पर हां वहां भी जनकात्मजाजी अपने वृत्त की रक्षा करती होंगी क्योंकि तुम्हारे ध्यानही से वे अपने प्राणों की रक्षा करती होंगी ९७ सो दुःख में परायण आपकी देवी सीताजी वहीं होंगी इससे कुछ सन्देह नहीं है इस में हित वही आपका करेगा जो समुद्र कूद जायगा ९८ सो इस कार्य के लिये आप वायु के पुत्र हनुमान् को आज्ञा दें व हे सुग्रीव! तुमको भी यही चाहिये कि पवनतनय को भेजो ९९ क्योंकि हमारे मन में यह बात आती है कि हनुमान् को छोड़ और किसी वानर में इतना बल नहीं है जो समुद्र को लांघजाय १०० इससे हमारा वचन कीजिये क्योंकि इसमें हम सब लोगों काभी हित व पथ्य है जब जाम्बवान्जी ने नीति-

युक्त व थोड़े अक्षरों से १०१ ऐसा वाक्य कहा तो शीघ्र ही आसनपर से उठकर पवनतनय के समीप जाकर सुग्रीवजी उनसे बोले कि १०२ हे वायु के पुत्र, वीर, हनुमान्जी ! हमारा वचन सुनो ये इक्ष्वाकुवंश के तिलक महाप्रतापवान् राजा श्रीरामचन्द्रजी १०३ पिता की आज्ञा ले भ्राता व भार्यासहित दण्डकारण्य में आये ये साक्षाद्धर्म में परायण हैं १०४ व सर्वात्मा सर्वलोकेश श्रीविष्णु हैं केवल मनुष्य का रूपही धारण किये हैं इनकी भार्या वह दुष्ट दुरात्मा रावण हरलेगया है १०५ उनके वियोग से उत्पन्न दुःख से पीड़ित बन २ में खोजतेहुये इनको हे वीर ! प्रथम तुम्हींने देखा था १०६ व इनके साथ आकर हम से समय भी तुम्हींने कराया था इन्होंने महाबल पराक्रमी हमारे शत्रु को मारडाला १०७ व हे वानर ! इन्हींके प्रसाद से हमने फिर राज्यभी पाया व हमने भी इनकी सहायता करने के लिये प्रतिज्ञा की थी १०८ सो अब वह प्रतिज्ञा तुम्हारे बल से सत्य किया चाहते हैं हे मारुतात्मज ! अब तुम समुद्र को उतर निन्दारहित सीताजी को देखकर १०९ चलेआओ क्योंकि तुमको छोड़ हम और किसी वानर में ऐसा बल नहीं देखते जो सीताजी को देखकर फिर इस पार उतर आवे इससे हे महामते ! स्वामी का कार्य तुम्हीं करना जानते हो ११० क्योंकि प्रथम तो तुम बलवान् हो फिर नीतिमान् फिर दूतता के कर्म में दक्षहो जब महात्मा सुग्रीव ने हनुमान्जी से ऐसा कहा तो १११ हनुमान्जी ने कहा कि स्वामी

के अर्थ क्यों न ऐसा करें उसमें भी आप इस प्रकार कहते हैं जब हनुमान्‌जी ने ऐसा कहा तो समीपही खड़ेहुये उनसे ११२ शत्रुओं के जीतनेवाले महाबाहु श्रीरामचन्द्रजी सीताजी के स्मरण करने से दुःखार्त्तहो नेत्रोंमें आंशुभरके समयके अनुसार वाक्य बोले११३ कि हम सहित सुग्रीव समुद्र के उतरने आदि का भार तुम्हारे ऊपर धरते हैं ११४ इससे हे हनुमान्‌जी ! तुम हमारी प्रीति से निश्चय करके वहां जाओ व अपनी जातिवालों की प्रीति से व विशेष सुग्रीव की प्रीति से ११५ यह तो जानो बहुधा विदितही है कि रावण राक्षस हमारी भार्या को लेगया है इससे हे महावीर ! जहां सीता स्थित हैं वहां जाओ ११६ कदाचित् वे हमारारूप पूछें कि बताओ कैसे हैं तो तुम हमको व लक्ष्मण को बनाय अच्छे प्रकार देखलो ११७ व हम दोनों के सब अंगोंके चिह्न बनया जानलो क्योंकि और किसी प्रकार से सीता विश्वास न करेंगी यह हमारे मन में है ११८ जब श्रीरामदेवजी ने ऐसा कहा तो बली हनुमान्‌जी उठकर आगे खड़े हो हाथ जोड़ बोले ११९ कि हम विशेष रीति से आप दोनों जनों के लक्षण जानते हैं व वानरों के संग जाते हैं आप शोक न करें १२० व औरभी कुछ चिह्न आप हमको दें जिससे सीताजी को विश्वासपड़े हे राजीवलोचन १२१ जब वायुपुत्रने ऐसा कहा तो कमललोचन श्रीरामचन्द्रजी ने अपने नामसे अङ्कित अँगूठी निकाल कर हनुमान्‌जी को दी १२२ उसको ले पवन के पुत्र

हनुमान्‌जी श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजी तथा सुग्रीव के प्रदक्षिणा करके १२३ अञ्जनी के पुत्र हनुमान्‌जी वहां से ऊपर को उछले व चलदिये और भी जो वानर और दिशाओं को भेजेथे व हनुमान्‌जी के संग भी जो जाने को थे जब चलनेलगे तो सुग्रीव सबों से बोले कि १२४ अये आज्ञाकारी, बलसेदर्पित, सब वानरो! हमारी दीहुई आज्ञा सुनो १२५ तुमलोग पर्वतादिकों में कहीं विलम्ब न करना शीघ्रही निन्दारहित उन सीताजी को देखकर चलेआना १२६ जबतक तुम लोग महाभाग्यवती श्रीरामचन्द्रजी की पत्नी को न देख आओगे तबतक हम यहीं श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मण जी के समीप स्थित रहेंगे कदाचित् विनादेखे व विलम्बसे तुम लोग आये तो नाक व कान काटलिये जायँगे १२७ इस प्रकार आज्ञापूर्वक उनसब वानरों को सुग्रीवजी ने भेजा तब वे सब वानर पश्चिम आदि चारोंदिशाओं को गये १२८ वे पर्वतों के सब कँगूरों पर व पर्वतों के ऊपर नदियों के किनारों पर मुनियों के आश्रमों पर १२९ सब कन्दराओं में वनों में व उपवनों में वृक्षों पर व वृक्षों की गांठियों में गुहाओं में व शिलाओं पर १३० सह्यपर्वतकी बगलों में विन्ध्याचल पर व समुद्र के किनारों पर हिमवान् पर्वत परभी व उसके उत्तर किम्पुरुषादि देशों में १३१ मनुष्यों के रहनेवाले सब देशों में व साती पातालों में फिर इसी भरतखण्ड के सब मध्यदेशों में व काश्मीरदेशों में १३२ पूर्वके सब देशों में कामरूप देशों में व अ-

योध्यामण्डल में व सब तीर्थों के स्थानों में सप्तकोङ्क-
नादि दक्षिण पूर्वदेशों में १३३ कहांतक गिनावें सब
कहीं तीनों दिशाओं में देखा पर सीताजी को विना
देखेही लौटआये व रामचन्द्रजी व लक्ष्मणजी के च-
रणों में नमस्कार करके १३४ व सुग्रीव के भी विशेष
प्रणाम करके बोले कि हमलोगों ने कमलसदृश
लोचनवाली महाभाग्यवती सीताजी को नहीं देखा
यह कहकर खड़े होगये १३५ इसके पीछे यह सुन
दुःखित श्रीरामदेवजी से सुग्रीव बोले कि हे महाराज!
दक्षिणादिशा के वन में सीताजी को १३६ धीमान्
वायुपुत्र वानरसिंह हनुमान् अवश्य देख आवेंगे व
देखकर आतेही हैं इसमें कुछ भी संशय नहीं है १३७
हे महाबाहो, श्रीरामचन्द्रजी! आप स्थिररहो यह वचन
सत्य है यह सुन लक्ष्मणजी बोले कि इसविषय में
हमने शकुन भी देखाहै १३८ कि सब प्रकार से सीता
जी को हनुमान् देखही कर आवेंगे यह कह समझा
बुझाकर श्रीरामचन्द्रजी के समीप सुग्रीव व लक्ष्मणजी
स्थितरहे १३९ व जो वानरोत्तम अङ्गद को आगेकर
यशस्विनी रामचन्द्रजीकी पत्नी को यत्न से ढूँढ़नेगये
थे विना जानकीजीके देखे बहुत श्रमित हो दुःखित
हुये १४० भक्षण बहुत दिन न मिलनेके कारण बहुत
क्षुधा से पीड़ित हुये एक अतिघने वन में घूमते २ उन्होंने
तेजस्विनी एक स्त्री देखी १४१ वह एक पर्वत की गुहा
में बैठीथी किसी ऋषि की निन्दा रहित स्त्री थी उसने
अपने आश्रमपर आयेहुये इनवानरों को देख १४२

पूछा कि तुम कौन हो व किसके हो व किस प्रयोजन के लिये आये हो ऐसा कहनेपर उससिद्धा से महामति जाम्बवान्‌जी बोले १४३ कि हमलोग सुग्रीवजी के सेवक हैं व यहां श्रीरामचन्द्रजी की भार्या सीताजीके खोजने के लिये आये हैं १४४ अब मारे भूँखों के मरते हैं निराहार किस दिशा में जानकीजी को ढूँढ़ें जब जाम्बवान् ने ऐसा कहा तो वह शुभरूपिणी उनवानरों से फिर बोली १४५ हे कपीश्वरो ! हम रामचन्द्र व लक्ष्मण व सीता व सुग्रीव को जानती हैं अब हमारे दिये हुये फल यहां भोजनकरो १४६ क्योंकि तुमलोग रामचन्द्रजी के कार्यकेलिये आयेहो इससे हमारेलिये रामचन्द्रहीके समान हो यह कह उसतपस्विनी ने अपने योगाभ्यासके बलसे उन सबों को कुछ अमृत दिया १४७ व भोजन कराकर सबोंसे फिर वह बोली कि सीताजी का स्थान सम्पातिनाम पक्षियों का राजा जानता है १४८ व वह पक्षी महेन्द्राचलपरके वन में रहता है सो हे वानरो ! तुम इस मार्ग होकर जाओ १४९ वह दूरसे देखनेवाला पक्षी सम्पातिहै इस से अवश्य बतावेगा फिर वहांसे उसके बतायेहुये मार्ग होकर जाना १५० व पवनकुमार जनक की कन्या सीताजी को अवश्यदेखेंगे जब उस तपस्विनीने ऐसा कहा तो वे वानर बड़े प्रसन्नहुये १५१ क्योंकि उसको उन लोगों ने सज्जन पाया इससे बहुत हर्षित हुये व उसके प्रणामकरके वहांसे चले व सम्पाति के देखने की इच्छा से सब महेन्द्राचलपर गये १५२ व वहां बैठे

हुये सम्पाति को उनवानरों ने जाकर देखा व उन आये
हुये वानरों से वह सम्पातिनाम पक्षी बोला कि १५३
तुम कौन हो व किसके हो जो यहां आये हो शीघ्र
कहो बिलम्ब न करो ऐसा कहनेपर वानरोंने यथाक्रम
सब वृत्त कहे १५४ हम सब श्रीरामचन्द्रजीके दूत हैं
व सीताजी के खोजनेके लिये वानरों के राजा महात्मा
सुग्रीवजीके भेजेहुये हैं १५५ सो हे पक्षिराज! एक
सिद्धाके कहने से तुम्हारे देखने को यहां आये हैं अब
हे महामति, महाभाग! हमलोगों से तुम सीताजी का
स्थान बताओ कहां हैं १५६ जब वानरों ने ऐसा कहा
तो उसपक्षी ने लङ्काकी ओर दक्षिण दिशा में देखा व
लंका की अशोक बनिका में बैठीहुई जानकीजी को
वहींसे देखलिया १५७ व बताया कि लङ्कामें अशोक-
बाटिका में सीता हैं तब वानरों ने कहा तुम्हारे भाई
जटायु इस प्रकार से मारेगये यह सुन स्नानकरके
उसने उसे तिलाञ्जलि दिया १५८ व योगाभ्यास से
उसने अपना शरीर भी छोड़दिया तब वानरों ने उस की
दाहक्रिया करके तिलाञ्जलि दिया १५९ व महेन्द्राचल
के सब से ऊंचे शृंगपर जाकर सब एकक्षणभर स्थित
रहे समुद्र देखकर सब आपस में बोले १६० कि देखो
रावणही श्रीरामचन्द्रजीकी स्त्रीको हरलेगया था अब
सम्पाति के वचन से बनाय सत्य विदित हुआ १६१
भाई वानरों में ऐसा कौन है जो क्षारसमुद्र उतरकर
लङ्का को जाय व वहां परमयशस्विनी रामचन्द्रजी की
पत्नी को देख १६२ फिर समुद्र उतर आवे भाई जिसे

शक्ति हो कहे ऐसा कहनेपर जाम्बवान्‌जी बोले कि सब वानर इस कार्यके करने में अशक्त हैं १६३ क्योंकि सागर उतरने में और की शक्ति नहीं है सो हमारे मत से इस कार्य के करने में ये हनुमान्‌जी दक्ष हैं १६४ अब काल न बिताना चाहिये क्योंकि आधामास अवधि से अधिक होचुका है व हे वानरो ! यदि विना जानकीजी के देखे चलेंगे १६५ तो कान नाक आदि हमलोगों के सुग्रीव काटलेंगे इससे हम सबों को चाहिये कि वायु के पुत्र की प्रार्थना करें हमारी तो यह मति है ॥ १६६ ॥

चौपाई ॥

जाम्बवान के सुनि इमि वचना। तथा कहा कौशल भलि रचना॥
जाय पवनसुत पहँ सब बोले। वचन सुधासम अतिहि अमोले १।१६७
महाप्राज्ञ यहि कार्यविशारद। पवनतनय नययुत अरु मारद॥
रामभृत्य ताहित भयकारी। राक्षसगणके जाहु बिदारी २।१६८
अञ्जनिसुत वानरकुल पालहु। जाय निशाचरगण अवघालहु॥
यह सुनि एवमस्तु हनुमाना। कहा कपिन सन सब सुख माना ३।१६९

चौपैया ॥

रघुनन्दन प्रेरो कपिपतिकेरो पाय निदेश वहोरी।
सब वानर सम्मत गिरिवर परगत लहि कपि बहुत निहोरी॥
तब अञ्जनिनन्दन तजिगतिमन्दन उदधि उतरने केरी।
कीन्हीं मति अपनी निशिचरदमनी लङ्का जान न देरी ४।१७०

इति श्रीनरसिंहपुराणे भाषानुवादे पञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥५०॥

इक्यावनवां अध्याय ॥

दो० इक्यावनयें महँ कथा, सुन्दर काण्ड समस्त।
मुनि वर्णी नृपसों सुनत, होत पाप सब अस्त ॥ १ ॥

मार्कण्डेयजी राजा सहस्रानीकजी से बोले कि, रावण की हरी हुई सीताजी के रहने का स्थान खोजने के लिये वे हनुमान्जी आकाशमार्ग होकर चले १ चलने के समय पूर्व को मुखकर गणसहित ब्रह्माजी के नमस्कारकर व मनसे श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजी का ध्यानधर २ सागर व सब नदियों के शिर झुकाकर व अपनी जातिवालों को त्याग व प्रणामकरके ३ जब चले तो वानरों ने कहा व पूजाकी कि हे वायुतनय! कल्याणदायक व पुण्यरूप मार्ग में जाओ व फिर कुशलपूर्वक आगमन हो ४ व अनायास तुम वीर्य को पाओ जिसमें अति वीर्यवान् होकर दूरही से ऊपरका मार्ग देखते रहो ५ इस रीति से आशीर्वाद पाकर अपने को सम्पूर्ण मानकर महाबली हनुमान्जी पर्वत व आकाशको जोर से दबाकर ऊपरको उछले ६ जब इस प्रकार वायुमार्ग होकर रामचन्द्रजीके कार्यकेलिये धीमान् पवनतनयजी समुद्र के ऊपर २ चले तो तब समुद्रकी प्रेरणा से ७ उन के विश्राम करनेकेलिये मैनाकनाम पर्वत समुद्रसे उमड़ा उसे देख व दबाकर व आदरसहित सम्भाषण करके ८ और ऊपर को उछलगये उसके आगे सिंहिका नाम राक्षसी का मुख दिखाई दिया उसमें पैठकर व वेगसे बाहर निकल ९ फिर प्रतापवान् श्रीहनुमान् शीघ्रचलेगये इस प्रकार सब सागर का भाग लांघकर पवनतनय १० उसपार त्रिकूटनाम पर्वत के एक शिखर पर के किसीवृक्ष की शाखापर जाकूदे व उसी पर्वतपर दिन बिताकर जब सन्ध्या हुई तो ११ सन्ध्यो-

पासनकर हनुमान्जी धीरे २ रात्रि में लङ्कानाम लङ्कापुरीकी अधिष्ठात्री देवता को जीतकर लङ्कापुरी में पैठे १२ व अनेक रत्नोंसे युक्त नाना आश्चर्य के पदार्थों से भरीहुई लङ्कामें हनुमान्जी सब राक्षसों के सोजानेपर पैठे १३ सबसे प्रथम सब ऋद्धिसिद्धियुक्त रावण के मन्दिर में पैठे देखा तो बड़ीभारी उत्तम शय्यापर रावण शयनकररहा था १४ सब नासिकाओं से बड़ेवेगसे श्वासें आतीजाती थीं ऐसी नासिकाओं व दांतों से युक्त दशमुखों से युक्त था १५ व सहस्रों स्त्रियां नाना प्रकार के भूषण वस्त्र धारण किये चहुंओर सोरही थीं उस रावण के घर में सीताजी को न देखकर १६ व रावण को उन सब स्त्रियोंके बीच में देख दुःखित हो पवनतनय ने सम्पाति के वचन का स्मरणकिया १७ व जाकर नाना प्रकार के पुष्पों से युक्त मलय पवन व सुगन्धित चन्दन से वासित अशोक वनिका में पहुँच १८ व उसमें प्रवेशकरके शिंशपा के वृक्ष के नीचे बैठी राक्षसियों से अच्छे प्रकार रक्षित श्रीरामचन्द्रजी की पत्नी जनकात्मजाजीको देखा १९ मधुपल्लवयुक्त व पुष्पित अशोकवृक्ष की शाखापर चढ़के स्मरण करतेहुये कपीश ने जाना कि बस सीताजी यही हैं २० सीताजी को देखकर वृक्ष के आगे हनुमान्जी स्थितहो थे कि तबतक बहुतसी स्त्रियों को सङ्गलिये रावण भी वहां आया २१ व आकर जानकीजी से बोला कि हे प्रिये ! मुझ कामी को भजो अब भूषित होओ रामचन्द्र में लगेहुये मन को छोड़ो २२

ऐसा कहतेहुये रावण के व अपने बीच में तृणका अन्तरकरके श्रीवैदेहीजी कांपती हुई धीरे से रावण से बोलीं २३ कि हे परदारपरायण, दुष्ट, रावण! यहां से चलाजा बहुतही शीघ्र श्रीरामचन्द्रजीके बाण रण में तेरा रुधिर पानकरेंगे २४ जब ऐसा जानकीजी ने कहा व बहुत अपकार वचन कहके फटकारा तो रावण राक्षसियों से बोला कि दो मास के अन्तरमें इस मानुषी को वश में करो २५ जो हमारी इच्छा सीता न करे तो इस मानुषी को तुम सब भक्षणकरलो इतना कह दुष्ट रावण अपने मन्दिर को चला गया २६ तब भयसे राक्षसियां जानकीजी से बोलीं कि हे कल्याणि! रावण को भजो सधन हो सुखिनी होओ २७ जब उन्होंने ऐसा कहा तो सीताजी बोलीं कि श्रीराघवजी बड़े विक्रमवाले हैं सगण रावण को युद्ध में मारकर हमको लेजायँगे २८ रघूत्तम श्रीरामचन्द्रजी को छोड़ हम और किसी की भार्य्या न होंगी व वे आकर दश शिर के भी रावण को मारकर हमारा पालन करेंगे २९ उनका ऐसा वचन सुनकर राक्षसियों ने भय दिखाया कि मारडालो मारडालो इसे व भक्षणकरो भक्षण करलो ३० तब उनमें एक त्रिजटा नाम राक्षसी थी वह उनसे जो उसने स्वप्न में राक्षसों के लिये अनिन्दित देखा था कहा कि हे दुष्ट राक्षसियो! रावणका विनाश सुनो ३१ वह स्वप्न सब राक्षसों समेत रावण का मृत्युदायक व भाई लक्ष्मणसहित श्रीरामचन्द्रजी को विजयदायक है ३२ व स्वप्न जो हमने देखा है वह सीता

जीको उनके पतिको मिलावेगा त्रिजटाका वाक्य सुन सीताजी का समीप छोड़कर ३३ सब राक्षसियां चली गईं तब हनुमान्‌जी सीताजी से बोले व रामचन्द्रजी का सब वृत्तान्त कहनेलगे ३४ जब उनको विश्वास आया तो पवनकुमार ने श्रीरामचन्द्रजी की अँगूठी दी रामचन्द्रजी व लक्ष्मणजी के सब चिह्न वर्णनकिये ३५ फिर कहा कि बड़ी भारी सेनालिये वानरों के राजा सुग्रीव को संग लिये तुम्हारे पति प्रभु श्रीरामचन्द्र जी ३६ व महावीर तुम्हारे देवर लक्ष्मणजी यहां आकर सगण रावण को मार तुमको लेजायँगे ३७ ऐसा कहनेपर विश्वास में आकर सीताजी वायुपुत्र से बोलीं कि हे वीर! तुम समुद्र उतर कर यहां कैसे आये ३८ उनका ऐसा वचन सुन हनुमान्‌जी फिर सीताजी से बोले कि हे मातः! समुद्र तो हम गोपद के समान उतरआये ३९ क्योंकि राम २ ऐसा जपतेथे सो हमीं नहीं जोई कोई राम २ जपै उसीको समुद्र गोपद तुल्य होजाता है बड़े दुःख में डूबी हुई हो परन्तु हे वैदेहीजी! अब स्थिर होओ ४० हम यह तुमसे सत्यही कहते हैं कि शीघ्रही तुम रामचन्द्रजी को देखा चाहती हो इस प्रकार जनकात्मजा पतिव्रताशिरोमणि सीताजी को समझाकर ४१ व उनसे चूड़ामणि ले व काकजयन्तका पराभव सुन व उनके प्रणाम कर महाकपि ने चलने का विचार किया व विचार करके सब अशोकवनिका उजाड़डाली ४२ व उसके फाटक के ऊपर चढ़कर बड़े ऊंचे स्वरसे पुकारा कि वीर्य्यवान् श्रीरामचन्द्रजी

सब को जीतते हैं यह कह अनेक राक्षसों को व सेनाओं को व सेनापतियों को मारडाला ४३ फिर रावण के पुत्र व सेनापति अक्षकुमार को सेना सारथि अश्वसमेत मारा तब मेघनाद आया ४४ व उसके संग रावण के समीप जाय रामचन्द्रजी व लक्ष्मणजी तथा सुग्रीव का वीर्य कहकर व सब लङ्का जलाय रावण का अपमान कर फिर जानकीजी से वार्त्ता करके ४५ फिर समुद्र उतरकर अपनी जातिवालों को मिलकर सीताजी का दर्शन सब से कह व उनसे पूजित होकर ४६ वानरों के संग आकर बड़ा भारी मधुवन उजाड़ फल खाकर रक्षकों को मार हनुमान्जी सब वानरों को मधुपान कराय ४७ व दधिमुखको मार हर्षित हो सब आकाशमार्ग होकर रामचन्द्रजी व लक्ष्मणजी के चरणों पर ४८ नमस्कारकर व हनुमान्जीने विशेष रामचन्द्रजी व लक्ष्मण के प्रणाम करके फिर सुग्रीव के प्रणाम किया व सब समुद्र उतरने आदिकी कथा कहकर ४९ फिर श्रीरामचन्द्रजीसे कहा कि हमने सीताजी को देखा अशोकवनिका के बीच में सीतादेवी अति दुःखित ५० रहती हैं व राक्षसियों के मध्य में घिरीहुई सदा आप का स्मरण करती हैं नेत्रों से आंशु बहाती हैं दीनमुखी सदा आपकी पत्नी रहती हैं ५१ व वहां भी श्रीजनकनन्दनीजी अपने शील व पातिव्रत्यादि वृत्तसे युक्तही हैं सब कहीं हमने ढूँढ़ा तब जाकर उन पतिव्रताजी को अशोकवनिका में देखा ५२ हमने अच्छीतरह देखा व

विश्वस्त किया है रघुनन्दनजी!व उन्होंने मणियुक्त एक भूषणभी आपके पास हमारे हाथों से प्रेषित किया है ५३ इतना कह उनका दियाहुआ चूड़ामणि श्रीरामचन्द्रजी को दिया व कहा कि आपकी महाराज्ञी जीने एक वचन भी आपसे कहा है ५४ कि॥

चौपाई॥

चित्रकूटपर जब तुम स्वामी। शयन कीन तब हरिसुतवामी॥
ममतनुचिह्नकीन्हहैकाका।स्मरणकरहुत्याहिहतिकीशाका१।५५
लघु अपराधहुपर महराजा। कीन्ह काक सँग जो वरकाजा॥
सो न असुरसुर करिसक कोई। चहै ब्रह्म शंकर किन होई २।५६
ब्रह्मअस्त्र कियगत यकलोचन। अब रावण वधकर कुछशोचन॥
इमि बहुवचन कहे वैदेही। रोदन करि सुनु रामसनेही॥३।५७॥

चौपैया॥

इमि दुःखित सीता अति सुपुनीता तासु उधारण कीजे।
यह सुनि वरवाणी पवनज भाणी राघव बहुत पसीजे॥
चूड़ामणि देखी विलपि विशेखी वायुतनय हियलावा।
पुनिकरुणासागर रामवलाकर चलनकाहिंजियभावा॥४।५८॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेश्रीरामचरिते एकपञ्चाशत्तमोऽध्यायः॥ ५१॥

बावनवां अध्याय॥

दो० बावनयें महँ युद्ध अरु, उत्तर काण्ड बखान।
नृपसों किय मुनिराजदै, नाना भांति प्रमान॥ १॥

मार्कण्डेयजी राजा सहस्रानीकजी से बोले कि इस प्रकार हनुमान्‌जीकी कहीहुई अपनी प्राणप्रिया जानकी

जी की वार्त्ता सुन बड़ी भारी वानरों की सेनासमेत श्रीरामचन्द्रजी समुद्र के तीरपर पहुँचे १ व ताली के बन से युक्त अतिरमणीक समुद्र के किनारे पर सुग्रीव जाम्बवान् व अतिहर्षित औरभी बहुत वानर २ जो कि असंख्य थे व अपने छोटेभाई लक्ष्मण के बीच में बैठे हुये श्रीराघवजी समुद्र के तटपर नक्षत्रों के मध्य में चन्द्रमा के समान शोभितहुये ३ उसी समय लङ्का में राजनीति व धर्मशास्त्र कहने में निपुण अपने छोटेभाई विभीषण को कुछनीति कहनेपर अप्रसन्नहो रावण दुष्ट ने पादप्रहारकर बहुत अपकार वचनकहे ४ इसलिये वे अपने मन्त्रियोंसमेत नरसिंह महादेव श्रीधर भक्त-वत्सल श्रीरामचन्द्रजीमें अचलभक्तिकरके इसपार चले आये ५ व सब कार्य सहजहीमें करनेवाले श्रीरामचन्द्रजी से यह वचन बोले कि हे महाबाहु, रामचन्द्रजी! हे देवदेव, हे जनार्दन ६ मैं विभीषणहूं आप के शरण में आयाहूं इससे मेरी रक्षाकीजिये यह कह हाथजोड़ रामचन्द्रजी के चरणोंपर विभीषण गिरपड़े ७ उनके समाचार जान कर श्रीरामचन्द्रजी ने उन महामति को उठाकर समुद्र के जलसे विभीषण का अभिषेक किया ८ व कहा कि लङ्काका राज्य तुम्हाराही है फिर स्थित होगये तब विभीषण ने कहा कि आप सब भुवनों के ईश्वर साक्षात् विष्णु भगवान् हैं ९ इससे चलके सबजने समुद्र से कहें वह आपको लङ्काजाने के लिये मार्गदेगा ऐसा सुन सब वानरों को सङ्गले श्रीरामचन्द्रजी १० समुद्र के किनारेपर निवसे व तीनदिन बीतगये समुद्रने कुछभी

न कहा तब जगन्नाथ राजीवलोचन श्रीरामचन्द्रजी क्रुद्ध हुये ११ व जल सुखाडालने के लिये आग्नेयास्त्र हाथमें ग्रहणकिया तब क्रोधयुक्त श्रीराघवजी से लक्ष्मण जी यह वचन बोले कि १२ हे महामतिवाले! आपका यह क्रोध तो प्रलय करनेवाला है इसे संहारकीजिये क्योंकि प्राणियों की रक्षा के लिये आपने अवतार लिया है १३ हे देवदेवेश क्षमा कीजिये यह कह बाण पकड़लिया जब तीनरात्रि बीतगईं तब रामचन्द्रजीको क्रोध किये हुये देख १४ व आग्नेयास्त्र से अतिसयभीत हो मूर्तिधारणकर समुद्र श्रीरामचन्द्रजीसे बोला कि हे महादेव! अपकार कियेहुये मेरी रक्षाकीजिये १५ व मैंने आपको मार्ग देदिया व सेतुकर्म करने में कुशल नलनाम वानर को भी बतादिया इससे हे राघवेन्द्र! अब उसी वीर नल से सेतु बनवालीजिये १६ जितना चौड़ा सेतु बांधना इष्टहो उतना बँधवाइये तब अमितपराक्रमी नलादि वानरों से १७ समुद्र में महासेतु बँधवाकर उसीपर हो सब वानरों समेत उतर श्रीरामचन्द्रजी उसपार सुवेलनाम पर्वतपर सेनासमेत उतरे १८ उसीसमय हर्म्यपर स्थित दुष्टरावण को देख श्रीरामचन्द्रजी की आज्ञासे उछलकर दूतकर्म करनेमें भी तत्पर सुग्रीव लङ्कामें गये १९ व मारेरोषके रावण के शिरमें एक लातमारा देवगणों ने उस समय विस्मित होकर वीर्यवान् सुग्रीव को देखा २० उसप्रतिज्ञा को सिद्धकरके फिर उसी सुवेलपर चले आये तब असंख्यात वानर सेनाओंसे श्रीअच्युतरामचन्द्रजीने २१

रावणकी पुरी लङ्का को चारों ओर से घिरालिया फिर श्रीराघव अपने समान लक्ष्मणजी को देख उनसे बोले कि २२ समुद्र को उतर आये व सुग्रीवजी की सेनाके महाभटों ने मानों रावणकी राजधानी लङ्काको कवलितही करलिया है बस जो पौरुषकरना था उसका अंकुर तो जमादिया अब आगे कि तो भाग्यके वश है अथवा इस धन्वा के अधीन है २३ यह सुन लक्ष्मण जी बोले कि कातरजनों के अवलम्बन करनेके योग्य भाग्यके भरोसे पर महाराज वीरशिरोमणि क्यों होते हैं क्योंकि जबतक क्रोधसे ललाट के ऊपरतक भौहों का तिरछा होना नहीं पहुँचता व जबतक प्रत्यञ्चा धन्वा के शिरपर तक नहीं जाती तबतक तीनों लोकों के मूलविदारण करनेवाले रावण के भुजों में अहङ्कार सामर्थ्यको प्राप्त है २४ व उसी समय लक्ष्मणजीने रामचन्द्रजीके कानमें लगकर कहा कि पिता के वधके स्मरण करने से भक्तिभाव व वीर्यकी परीक्षा करनेमें लक्षण जाननेकेलिये अङ्गद को दूत बनाकर लङ्काको भेजिये रामचन्द्रजी बहुत अच्छा कह अङ्गदकी ओर बहुत मानकरने के साथ देख बोले २५ कि हे अङ्गद! तुम्हारे पिता बालीने बलवान् रावण के ऊपर जो कर्म करके दिखाया था उसके कहने में तो हमलोग असमर्थ हैं इसीसे मारे हर्षके पुलकावली हो आई है व वही तुम पुत्र होने के कारण मानों अपने पिता को फिर लौटालाये हो फिर अब क्या कहना है जानों उस अर्थ के ऊपर तिलकही करते हो अर्थात् अब

अधिक बल दिखाओगे २६ यह सुन अङ्गद हाथ जोड़ शिरपर धर प्रणामकर बोले कि जो आज्ञा महाराज की हो कीजावे २७ कहिये तो खावां, शहरपनाह, फाटक, धवरहरादि समेत लङ्का यहीं उठालावें अथवा हे श्रीरामचन्द्रजी! शीघ्रही सब राक्षसों की सेना वहीं मार-डालें वा बड़े २ सघनपर्वतों से इस छोटे से समुद्र को पाटडालें हे देव! आज्ञा दीजिये सब कुछ हमारे भुजों से साध्य है २८ श्रीरामचन्द्रजी उनके वचनमात्रही से उनकी भक्ति व सामर्थ्य देख बोले कि २९ अज्ञान से अथवा राक्षसों के राजा होने के अहङ्कार से हमारे परोक्ष में तूने सीता को हरा है पर अभी छोड़दे जाकर रावण से ऐसा कहो यदि ऐसा न करेगा तो लक्ष्मण के चलाये हुये बाण समूहों से कटेहुये राक्षसों के रुधिर से जगत् को भिगोतेहुये अपने पुत्रों के साथ यमराज की पुरी को जायगा यह भी कहना ३० अङ्गद बोले कि हे देव ३१ हमारे दूत होनेपर सन्धि वा विग्रह दोनों में से चाहे जो हो रावण के दशोशिर विना कटेहुये वा कटेहुये पृथ्वी के ऊपर लोटेंगे अर्थात् मेल होजाने पर वह आकर चरणों के निकट प्रणाम करेगा तो विना कटेहुये शिर भूमिपर लोटेंगे व यदि विग्रहही किये रहेगा तो कटेहुये शिर पृथ्वी पर लोटेंगे ३२ तब प्रशंसा करके श्रीरामचन्द्रजीने अङ्गद को भेजा व वे अपनी उक्ति युक्ति की चतुरताओंसे रावण को जीत फिर लौट आये ३३ व श्रीराघवजी व उनके छोटे भाई लक्ष्मण जी का बल दूतों की द्वारा जान भयभीत भी हुआ पर

रावण अपने को निर्भयसाही प्रकट किये रहा ३४ व लङ्कापुरी की रक्षा के लिये राक्षसोंको उसने आज्ञा दी व सब दिशाओं में रक्षाकरने के लिये राक्षसों को आज्ञा दे फिर दशानन अपने पुत्रों से बोला ३५ उनमें धूम्राक्ष व धूम्रपान ये दो मुख्य थे उनसे व और राक्षसों से उसने कहा कि तुम सब जाओ व उन दोनों मनुष्य तपस्वियों को बांध हमारी पुरी को लाओ ३६ व शत्रुओं के नाशक वीर्यधारण किये हुये हमारे भ्राता कुम्भकर्ण को नगारे आदि बजाकर जगाओ इस प्रकार रावण की आज्ञा पाय महाबली राक्षस लोग ३७ उस की आज्ञा शिरपरधर वानरों के साथ युद्ध करने लगे व अपनी शक्तिभर किरोड़राक्षस लड़े ३८ व वानरों से सबके सब मारे गये तब रावण ने औरों को आज्ञा दी कि तुमसब अमितपराक्रमी राक्षसो पूर्व के फाटक पर जाओ ३९ वेभी वहां नीलादि वानरों से युद्धकर मरणको पहुँचे व दक्षिण दिशामें भी रावणने राक्षसों को आज्ञादी ४० वे भी वानरों के नखों से विदारित हो यमपुर को गये व पश्चिमवाले फाटक पर भी अङ्गदादि अतिगर्वित वानरों ने ४१ पर्वताकार राक्षसों को मार यमालय को पहुँचादिया व उत्तरद्वारपर रावण ने जिन राक्षसों को युद्ध के लिये स्थापित किया ४२ वे भी मैन्दादि वानरों से मारे हुये पृथ्वी पर गिरपड़े तब वानरोंके समूह लङ्काके बड़े ऊंचेप्राकारपर चारों ओर से चढ़गये ४३ व भीतरवाले बल से अहङ्कारी राक्षसों को मारकर फिर अपनी सेना में बड़ी शीघ्रता के साथ

चले आये ४४ इस प्रकार सब राक्षसों के मारजाने व उनकी स्त्रियों के रोदनकरने पर क्रोधयुक्त हो रावण निकला ४५ व पश्चिमके द्वारपर बहुत राक्षसोंके बीच में खड़ा होकर कहने लगा कि राम कहां हैं व फिर हाथ में धन्वाले वानरोंके ऊपर बाणोंकी वर्षा करने लगा ४६ तब उस प्रतापी के बाणों से अङ्ग छिन्न भिन्न वानर भाग खड़े हुये ४७ व उन वानरों को भागते हुये देख श्रीरामचन्द्रजी कहनेलगे कि ये वानर क्यों भागे व इन को कहां से भय हुआ ४८ श्रीरामचन्द्रजी का ऐसा वचन सुन विभीषण बोले कि अये महाराज ! सुनिये इस समय रावण युद्ध के लिये निकला है ४९ हे महामते ! उसीके बाणोंसे छिन्न भिन्न हो वानर इधर उधर भागे जाते हैं जब विभीषणने ऐसा कहा तो क्रोधकर धनुषचढ़ाय श्रीराघवजीने ५० प्रत्यञ्चाके शब्द व तलके शब्द से आकाश व दिशाओंको शब्दायमान करदिया व कमललोचन श्रीरामभद्रजी रावण के सङ्ग युद्धकरने लगे ५१ व सुग्रीव जाम्बवान् हनुमान् अङ्गद विभीषण व और सब वानर तथा महावीर्यवान् लक्ष्मणजी ५२ वहां पहुँचकर बाण बरसाती हुई राक्षसों की सेना को जो कि रथ घोड़े हाथी आदिकों से युक्त थी सब ओर से मारनेलगे ५३ व रामचन्द्रजी तथा रावण का अतिभयंकर युद्ध हुआ रावण के चलायेहुये जो शस्त्र अस्त्र थे उनको शस्त्रों से काट महाबल श्रीराघवजी ने ५४ एक बाणसे उसके सारथिको मारा दशशरों से दश घोड़ों को व एक बाण से श्रीराघवजी ने रावणका धन्वा

काटा ५५ व पन्द्रहशरों से मुकुट काट फिर सुवर्ण के पक्ष लगेहुये दशबाणों से दशो मस्तकों में प्रहार किया ५६ तब रामचन्द्रजी के बाणों से व्यथित होकर रावण अपने मन्त्रियों के कहने से पुरी में पैठगया यद्यपि देवमर्द्दक था पर देवदेव श्रीरघुपति देवके आगे कहां चलती है ५७ पुरमें जातेही नगारों के बजवाने व बुकरियों के समूह नासिका में हँकवाने से जागाहुआ कुम्भकर्ण शहरपनाह को तड़ककर बाहर निकला ५८ व वह ऊँचे व मोटे शरीरवाला भीमदृष्टिवाला दुष्ट महाबल भूँखा तो थाही वानरों को खाताहुआ समर में विचरने लगा ५९ उसे देख कूदकर सुग्रीव ने शूल से छाती में मारा व दोनों कान दोनों हाथों से काट दांतों से उसकी नाक काटली ६० व सब ओर से रण में युद्धकरते हुये राक्षसों के सेनापतियों को वानरों से घातित कराय श्रीरामचन्द्रजी ने ६१ तीक्ष्ण बाणों से कुम्भकर्ण का कन्धा काटडाला व इन्द्रजित् को आयेहुये गरुड़जी की द्वारा जीतकर ६२ रामचन्द्रजी लक्ष्मणजी के व वानरों के बीच में शोभित हुये जब इन्द्रजित् व्यर्थ होगया व कुम्भकर्ण मारागया तो ६३ लङ्कानाथ बहुत क्रुद्ध होकर त्रिशिरा नाम अपने पुत्रको व अतिकाय महाकाय देवान्तक व नरान्तक से बोला कि ६४ हे पुत्रो ! राक्षसों को मारतेहुये रामचन्द्र को संग्राम में शीघ्र मार आओ उन सबों से ऐसा कह रावण फिर और पुत्रों से बोला कि ६५ हे महोदर व महापार्श्व ! तुम दोनों जने इन महाबली राक्षसों के संग इससमर में शत्रुओं के मारने

को उद्यत होके जाओ ६६ इन सब शत्रुओं को रण में आके युद्ध करतेहुये देख लक्ष्मणजी ने छः बाणों से यमालय को पहुँचा दिया ६७ व वानरों के समूह ने शेष राक्षसों को यमपुर पहुँचाया व सुग्रीव ने बल से दर्पित कुम्भनाम राक्षस को मारडाला ६८ व देवताओं का शत्रु निकुम्भ वायुपुत्र से मारागया व युद्ध करतेहुये विरूपाक्ष को विभीषणजी ने गदा से मारडाला ६६ भीम व मैंद इन दोनों वानरेंद्रों ने श्वपति नाम राक्षस को मारा अङ्गद जाम्बवान् व अन्य मुख्य २ वानरों ने युद्ध करतेहुये अन्य निशाचरों को मारा ७० फिर समर में युद्ध करतेहुये श्रीरामचन्द्रजी ने रण में बाणवृष्टि करनेवाले महाबली महालक्षनाम राक्षस को मारा ७१ तब फिर मन्त्रसे पायेहुये रथपर चढ़के इन्द्रजित् आया व वानरों के ऊपर शरों की वर्षा करनेलगा ७२ यहां तक कि रात्रि में ऐसी बाणवर्षा उसने की कि जिससे सब वानरीसेना व श्रीरामचन्द्रजी भी निश्चेष्ट होगये तब जाम्बवान् के कहने से ७३ हनुमान्जी बड़े वीर्य व पराक्रम से औषधियां लाये व उनसे भूमिपर सोतेहुये श्रीरामचन्द्रजी को व सब वानरों को उठा बैठाया ७४ व उन्हीं वानरों को संगले उसी रात्रि में उल्का जलवाकर हाथी घोड़े रथ राक्षसादि सहित सब लङ्कापुरी जलवादी ७५ व सब दिशाओं में मेघों के समान शरों की वर्षाकरतेहुये मेघनाद को इधर श्रीरामचन्द्रजी ने अपने भ्राता लक्ष्मणजी से मरवाडाला ७६ राक्षस पुत्र मित्र बन्धुओं के मारजाने व होम जपादि कर्मों में विघ्न

कराने पर ७७ क्रुद्ध हो रावण फिर लङ्का के फाटक से निकला व कहनेलगा कि तापस वेषधारी मनुष्यरूप राम कहां हैं ७८ व वानरों में जो योद्धा हैं कहां हैं ऐसा बड़े ऊँचे स्वरसे कहताहुआ राक्षसों का अधिप वेगवान् व सुशिक्षित घोड़ोंके रथपर चढ़ाहुआ आया ७९ आये हुये रावण से श्रीरामचन्द्रजी बोले कि हे दुष्टात्मन्, रावण! राम हम यहां हैं यहां हमारी ओर आ ८० जब रामचन्द्रजीने ऐसा कहा तो लक्ष्मणजी बोले कि हे रामचन्द्र, राजीवलोचन, महाबल! इस राक्षस से हम युद्धकरेंगे आप खड़े रहिये ८१ यह कह लक्ष्मणजी ने बाणों की वर्षा से रावण को सब ओरों से आच्छादित करलिया व बीसबाहुओं से चलाये हुये शस्त्रास्त्रोंसे युद्ध में लक्ष्मणजीको ८२ रावण ने भी आच्छादित करदिया इस प्रकार उन दोनों का बड़ा भारी युद्ध हुआ व देवगण विमानों पर चढ़ेहुये आकाश से यह महायुद्ध देखनेलगे ८३ बड़ा युद्ध होनेके पीछे लक्ष्मणजी ने तीक्ष्णबाणों से रावण के चलायेहुये व हाथ में के भी शस्त्रास्त्र काटकर सारथि को मार फिर शायकों से उसके घोड़ोंको भी मारडाला ८४ व बड़े तीक्ष्ण शरोंसे रावणका धन्वा काट व ध्वजभी काटकर पर वीरनाशक महावीर्यवाले सौमित्रिजी ने अतिवेग से उसकी छाती में भीतर पटक बहुतसे बाण मारे ८५ तब राक्षसनायकने शीघ्रही रथपर से नीचे आय घण्टानाद करतीहुई महाशक्ति हाथ में ली ८६ अग्नि की ज्वाला के समान जिह्वा लपलपाती हुई महा उल्काके समान

प्रकाश करती हुई शक्ति बड़ी दृढ़मुष्टि से चलाया कि जाकर लक्ष्मणजी की छाती में लगी ८७ व विदारण करके अन्तःकरण में पैठगई आकाश में देवतालोग बहुत भयभीत हुये इस प्रकार शक्ति के लगने से पतित देख वानरों के रोदन करने पर ८८ दुःखित हो श्रीरामचन्द्रजी उनके समीप शीघ्रही आके बोले कि हमारे मित्र पवन के पुत्र हनुमान् वीर! कहां गये ८९ यदि भूमिपर पतित हमारे भाई किसी प्रकार जीवें तो उपाय करें इतना कहते ही हे राजन्! विख्यातपौरुष हनुमान् वीर ९० हाथ जोड़ यह बोले कि हम यहीं स्थित हैं आप आज्ञादीजिये श्रीरामचन्द्रजी बोले कि हे महावीर! विशल्यकरणी औषधि लाओ ९१ व हे महाबल, मित्र! हमारे प्यारे अनुज को शीघ्र रोगरहित करो यह सुन वेग से उछल द्रोणपर्वतपर जाके महावीरजी ९२ शीघ्रही उस पर्वतहीको लाय क्षणमात्र ही में लक्ष्मणजी को श्रीरामचन्द्रजी के व अन्य देवदेवों के देखतेही देखते पीड़ारहित करदिया व सब व्रणपूरित करदिया ९३ तब जगन्नाथ जगदीश्वर श्रीरामचन्द्रजी ने बड़ाक्रोधकर हाथी घोड़े रथादि संयुक्त रावण की बड़ीभारी सेना ९४ क्षणभर में नष्ट कर तीक्ष्णबाणोंसे रावणका सब शरीर जर्ज्जरित करके वानरों के सङ्ग अलग खड़े होगये ९५ व रावण मूर्च्छित होगया जब धीरे धीरे उसकी मूर्च्छा फिर जागी तो उसने उठकर क्रोध से बड़ासिंहनाद किया ९६ उसका नाद सुन आकाश में देवगण अतिभयभीत हुये इसी समय

में रामचन्द्रजी के समीप महामुनि अगस्त्यजी आये ९७ वे रावण से बहुत दिनों से बैर बांधे थे इससे उन्होंने जय देनेवाला अगस्त्यप्रोक्त आदित्यहृदय नाम स्तोत्र श्रीरामचन्द्रजी को दिया ९८ रामचन्द्रजी ने भी जयदेने वाला अगस्त्योक्त वह मन्त्र जपा व अगस्त्यजी के ही दियेहुये श्रीविष्णुजी के धन्वा पर रोदा चढ़ाई ९९ व पूजा करके अच्छी तरह प्रत्यञ्चापर टङ्कोर दे सुकुमार स्थान विदारण करनेवाले सुवर्णके फोंकलगेहुये तीक्ष्ण बाण उसपरचढ़ाये १०० व प्रतापवान् श्रीरघुनाथजी रावण के सङ्ग युद्धकरनेलगे जब वे दोनों भीमशक्तियां परस्पर युद्ध करनेलगीं तो १०१ दोनों के योगसे आकाशमें अग्नि प्रज्वलित हो जलनेलगा हे नृपश्रेष्ठ! रामचन्द्रजी व रावणके युद्धमें ऐसा प्रचण्डअग्नि उत्पन्न हुआ १०२ उस संग्राममें अकाथित पराक्रमी श्रीदाशरथि रामचन्द्रजी पैदरयुद्ध करते थे १०३ इसलिये इन्द्रने सहस्रघोड़े जुताहुआ अपना दिव्यरथ मातलिसारथि के सङ्ग भेजदिया जोकि बड़ाभारी व लोक में विख्यात है १०४ रामचन्द्र महाराज उसके ऊपर आरूढ़ हो देवताओं से पूजित होके मातलि को आज्ञा देते हुये महाप्रतापी श्रीराघवजी ने १०५ ब्रह्मा से वरपायेहुये उस दुष्ट रावण को ब्रह्मास्त्रसे ही मारा बस प्रतापवान् श्रीभगवान् रामदेवजीने इसप्रकार जगद्वैरी क्रूर रावण को मारा १०६ जब सगण शत्रु रावण को श्रीरामचन्द्र जी ने मारा तो इन्द्रादिक देवतागण आपस में यह बोले कि १०७ जिससे श्रीविष्णुभगवान्जी ने

श्रीरामचन्द्र हो हम लोगोंके वैरी रावण को जोकि अन्य ब्रह्म रुद्रादि देवतादिकों से अवध्य था मारा १०८ इससे उन अपराजित अनन्त श्रीरामनाम परमेश्वर की पूजा यहां से उतरकर प्रणाम करकेकरें १०९ यह विचारकर शोभायुक्त नाना प्रकार के विमानोंपर से उतर२ कर पृथ्वी पर आके रुद्र इन्द्र वसु चन्द्रादि देवगण सब के विधाता सनातन ११० विष्णु जिष्णु जगन्मूर्त्ति अव्यय अनुजसहित श्रीरामचन्द्रजी की पूजा विधिपूर्वक चारों ओर से घेरकर करनेलगे १११ व पूजा के अन्त में आपस में सब देवगण बोले हे देवताओ! देखो ये रामचन्द्रजी हैं व ये लक्ष्मणजी हैं सूर्यके पुत्र ये सुग्रीव हैं व ये वायु के पुत्र हनुमान् स्थित हैं ११२ व ये सब अङ्गदादि हैं यह सब देवताओं ने कहा तदनन्तर अपने गन्ध से सब दिशाओं को सुगन्धित कराती हुई व भ्रमरपंक्तियों के पदों के पीछे २ चली आतीहुई ११३ देवों की स्त्रियों के हाथों से छोड़ीहुई पुष्पों की वृष्टि श्रीरामचन्द्रजी के व लक्ष्मणजी के शिरों पर पतितहुई ११४ तदनन्तर हंसके ऊपर चढ़ेहुये ब्रह्माजी आकर अमोघनाम स्तोत्र से श्रीरामचन्द्रजी की स्तुतिकर फिर उनसे बोले कि॥ ११५॥

चौपाई॥

भूतआदि तुम विष्णु अनन्ता। ज्ञानदृश्य व्यय श्रीभगवन्ता॥
तुम वेदान्तमाहिं नितगाये। शाश्वत ब्रह्म परात्परभाये१।११६
तुम जो आज दशाननमारा। जासों रुदनकरत जग सारा॥
त्रासोंत्वरितकीनसुरकाजा।सकललोककीप्रजानिवाजा२।११७

इमिविधि वचन सुनत पुनि शंकर।प्रीतिमानसबजनअभयंकर॥
रामहिंकरिप्रणामपुनिदशरथ।दीनदिखायसकलविधिसमरथ३।११८
सीता परमशुद्ध यह भाषत। चलेगये शिव हरिरस चाखत॥
तब निज भुजबल पुष्पकपाई। चढ़ेतासु ऊपर हरषाई ४।११९
पुनि पुनीत सीताहु चढ़ावा। पवनतनय आज्ञस करावा॥
दिव्यवसनभूषणयुतसीता।ह्वैविशोकसबविधिश्रुतिगीता५।१२०
सकल कपिन बन्दित वैदेही। लक्ष्मणयुत राघववर नेही॥
पूर्णप्रतिज्ञा करि रघुनाथा। भरतहि करिबे चले सनाथा ६।१२१
इमिचलिपहुँचे अवधकृपाला। मिलिपुरवासिनकीन्हनिहाला॥
भरतविनयसोंकियअभिषेका।द्विजवसिष्ठआदिकसविवेका७।१२२
धर्मराज चिरकाल प्रतापी। कीन्ह राम हति जगके पापी॥
नाना यज्ञकर्म करि आपू। पौरनयुत साकेत सुथापू ८।१२३॥
स० रामचरित तुमसन हमभाषा भूपतिकरिकै बहुत विधान।
नहिंविस्तारसहित संक्षेपहि सब चरित्र जगविदितमहान॥
जोकरिभक्तिपढ़िहि सुनिगाइहि पाइहि राघवधामप्रधान।
अरुरघुनन्दननिजपदमाहींदेहैंभक्तिनमृषाबखान ९। १२४

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेश्रीरामचरिते
द्विपञ्चाशत्तमोऽध्यायः॥ ५२॥

तिरपनवां अध्याय॥

दो० तिरपनयें महँ कृष्ण अरु, बलके चरित अपार।
यद्यपि पर संक्षेपही, भाष्यहु मुनिन विचार॥ १॥

मार्कण्डेयजी राजा सहस्रानीक से बोले कि इसके आगे शुभ दो अवतारों की कथा कहते हैं एक तो तीसरे राम बलभद्रजी के व दूसरे श्रीकृष्णचन्द्रजी के जन्म की १ हे नृपोत्तम! पूर्वसमय का वृत्तान्त है कि असरों

के भार से आक्रान्त हो पृथ्वी देवताओं के मध्य में बैठेहुये कमलासन ब्रह्माजी से बोली २ कि हे कमलोद्भव जी! देवासुर संग्राम में श्रीविष्णु भगवान्जी के हाथसे जो दैत्य दानव मारेगये थे वे सब आके कंसादि क्षत्रिय हुये हैं ३ सो उन लोगों के बड़ेभारी भारसे हम बहुत पीड़ित हैं इससे हे देव! जैसे हमारे भारकी हानि हो वैसा कीजिये ४ तब अच्छा ऐसा करेंगे यह कह सब देवताओंके साथ ब्रह्माजी विष्णुजीकी भक्तिसे विख्यात क्षीरसागर के उत्तर के किनारेपर गये ५ व वहां जाकर जगत् के बनानेवाले ब्रह्माजी देवताओं के साथ महादेव नरसिंह जनार्दनजी को गन्ध पुष्पादिकों से यथाक्रम ६ भक्तिपूर्वक पूजितकर फिर वाक्पुष्प नाम स्तोत्रसे स्तुति की तब हे राजेन्द्र! जगत्पति केशव भगवान् उससे सन्तुष्ट हुये ७ यह सुन सहस्रानीक राजा ने पूँछा कि हे ब्रह्मन्! ब्रह्माजी ने वाक्पुष्प नाम स्तोत्र से कैसे श्रीहरिजी की पूजा की सो हे विप्रेन्द्र! ब्रह्माजीका कहा हुआ वह उत्तम स्तोत्र हम से कहो ८ मार्कण्डेयजी बोले कि हे राजन्! सुनो ब्रह्माजी के मुख से कहाहुआ सब पापहरनेहारा पुण्यदायक व विष्णुजी के सन्तोष कराने में श्रेष्ठ स्तोत्र कहते हैं ९ उन जगन्नाथजी की आराधना कर ऊपर को भुज उठा एकाग्रमन हो यह स्तोत्र पढ़तेहुये ब्रह्माजी बोले १० कि नरनाथ अच्युत नारायण लोकगुरु सनातन अनादि अव्यक्त अचिन्त्य अव्यय वेदान्तवेद्य पुरुषोत्तम श्रीहरिदेव के नमस्कार करते हैं ११ आनन्दरूप परम परात्पर चिदात्मक ज्ञा-

नवानों के परम गति सर्वात्मक सबमें एकरूप से प्राप्त ध्यान करने के योग्य स्वरूपवाले माधवजी के प्रणाम करते हैं १२ भक्तोंके प्रिय कान्तस्वरूप अतीवनिर्मल देवताओं के अधिप पण्डितों के स्तुति करनेके योग्य चतुर्भुज कमलवर्ण ईश्वर चक्रपाणि केशवजी के प्रणाम करते हैं १३ गदा शंख खड्ग कमल हाथोंमें लिये लक्ष्मी के पति सदा कल्याणरूप शार्ङ्गधारी सूर्यकी सी प्रभा वाले पीताम्बर ओढ़े हार वक्षस्स्थलमें विराजित किरीट धारण किये श्रीविष्णुजी के निरन्तर प्रणाम करते हैं १४ गण्डस्थल पर आसक्त अतिरक्त कुण्डलवाले व अपनी दीप्ति से सब आकाश को प्रकाशित करनेवाले गन्धर्व सिद्धों के गाने के योग्य कीर्तिवाले जनार्दन सब प्राणियों के पतिके नमस्कार है १५ जो हरिभगवान् प्रत्येक युगमें असुरों को मार सुरों को व अपने धर्म कर्म में अच्छी तरह टिकेहुये अन्यलोगों की पालना करते हैं व जो इस संसार को उत्पन्न करते व नष्ट भी करते हैं उन वासुदेव केशवजी के प्रणाम करते हैं १६ व जिन भगवान् ने मत्स्यरूप धारणकर रसातल में स्थित वेदोंको लाकर हमको दिया व युद्ध में मधुकैटभ नाम दो दैत्यों को मारा वेदान्त के जानने के योग्य उन के सदा हम प्रणाम करते हैं १७ व जिन विष्णु भगवान् जी ने कच्छप का रूप धारण करके देवता व असुरों के क्षीरसमुद्र के मध्य में छोड़हुये मन्दराचल को सब के हितके लिये धारणकरलिया उन आदि प्रकाशमान विष्णुजी के प्रणाम करते हैं १८ जिन्होंने बराह का

रूप धारणकर अति बलदर्पित हिरण्याक्ष को मार
इस सब शक्तियुक्त पृथ्वी का उद्धार किया उन सना-
तन वेदमूर्ति श्रीशूकर हरि के प्रणाम करते हैं १९ व
जिन सनातन श्रीहरिजी ने अपना नरसिंह का शरीर
धारण करके सब लोगोंके हितके लिये दिति के पुत्र
हिरण्यकशिपु दैत्य को मारा व तीक्ष्ण नखों से विदारा
उन नारसिंह पुरुष के नमस्कार करते हैं २० व जिन
श्रीभगवान् जनार्दनजी ने वामनावतार ले अपने तीन
पदों से ही तीनोंलोक मापकर बलिको बँधुआ किया व
तीनलोक इन्द्रको देदिये उन आदि वामनदेवके प्रणाम
करते हैं २१ व जिन श्रीविष्णुजी ने परशुरामावतार
धारण करके मारेरोष के कार्तवीर्य नाम सहस्रबाहु को
मारा व इक्कीसवार तक पृथ्वी को क्षत्रियरहित करदिया
उन महीभार हरनेवाले पुरुषोत्तम श्रीविष्णुजी के प्र-
णाम करते हैं २२ व जिन सनातन ब्रह्म श्रीरामचन्द्र
जीने समुद्र में सेतु बांध लंका में प्राप्त हो गणसहित
रावण को जगत् के हित के लिये मारा उन सनातन
श्रीरामदेवजी के निरन्तर प्रणाम करते हैं ॥ २३ ॥

दो० जिमि वराह नरसिंहमुख, तनुधरि सुरहित कीन।
तिमि महिभर नाशहु प्रभो, हैप्रसन्न न मलीन ॥१॥२४॥

मार्कण्डेयजी बोले कि जब इस प्रकार से ब्रह्माजी
ने श्रीजगन्नाथजी की स्तुति की तो शंख चक्र गदा धा-
रण किये श्रीभगवान्जी प्रकटहुये २५ व हृषीकेशजी
ब्रह्मा और सबदेवताओं से बोले कि हे पितामह व हे
देवताओ! इसस्तुति से हम सन्तुष्टहुये २६ क्योंकि

हे देवताओ ! इस स्तोत्र के पढ़तेही यद्यपि हम दुर्लभ हैं पर प्रकट होआये इससे जो लोग भक्तिमान् हो इसे पढ़ेंगे उनके पाप तुरन्त नाश होजायँगे २७ हे ब्रह्मन् ! इन्द्र रुद्रादि देवताओं व पृथ्वी के साथ तुमने हमारी प्रार्थना की अब कहो वह तुम्हारा कार्य करें २८ जब श्रीविष्णुजी ने ऐसा कहा तो लोकपितामह ब्रह्माजी बोले कि यह पृथ्वी दैत्यों के गरूभार से पीड़ित होरही है इससे आपसे हलकी कराया चाहते हैं २९ इसीसे देवताओं के साथ यहां आये और कुछ यहां आनेका कारण नहीं है ऐसा कहने पर श्रीभगवान्जी ने कहा देवताओ ! अपने स्थान को जाओ ३० व ब्रह्मा भी अपने स्थान को जायँ देवकी में वसुदेव से पृथ्वीतल पर अवतार लेकर ३१ शुक्ल व कृष्ण दो हमारी शक्तियां कंसादिकों को मारेंगी श्रीहरिका ऐसा वाक्य सुन श्रीभगवान्जी के नमस्कार करके देवगण चलेगये ३२ जब देवगण चलेगये तो देवदेव श्रीजनार्दनजीने शिष्ट लोगों के पालन करने के लिये व दुष्टों के मारने के अर्थ ३३ हे नृप ! अपनी शुक्ल व कृष्ण दो शक्तियां भेजीं उन दोनों में शुक्लशक्ति तो वसुदेवजी से रोहिणी में उत्पन्नहुई ३४ व वैसेही कृष्णशक्ति वसुदेवजी से देवकीजी में उत्पन्न हुई रोहिणीजी के पुत्र पुण्यात्मा महान् रामजी हुये ३५ व देवकीजी के नन्दन श्रीकृष्णचन्द्रजी हुये इन दोनों के चरित हमसे सुनो गोकुल में जब बालकेलि करते थे तब रात्रिमें बलराम जी ने पक्षिणी का वेषधारण की हुई एकराक्षसी को

मारा ३६ व कृष्णचन्द्रजी ने पूतनानाम राक्षसी को दिन
में मारा गणसहित धेनुकासुर को बलरामजी ने बन में
मारा ३७ व शकटासुर व अर्जुन के दो वृक्ष कृष्णचन्द्र
जी ने मारेतोड़े बलदेवजीने मुष्टिप्रहार से प्रलम्बासुर
को मारा ३८ व यमुना के विषदूषित जल के भीतर
कालियनाग को कृष्णचन्द्रजी ने दमनकिया व इन्द्रके
वर्षा करने के समय श्रीकृष्णचन्द्रही ने गोवर्द्धनपर्वत
उठालिया ३९ व गोकुल की रक्षा करतेहुये उन्होंने
अरिष्टासुर को मारा व अश्व का रूप धारणकियेहुये
दुष्ट महाअसुरकेशी को भी कृष्णचन्द्रजीने मारा ४०
व अक्रूर महात्मा जब मथुरा को लिये जाते थे तब
उन्होंने स्नान करने के समय जल के भीतर राम व
कृष्णचन्द्रजी को देखा ४१ व उन्होंने अपना २ रूप
अच्छी तरहसे दिखाया तब उन दोनों जनोंका अतुल
भाव जान व देखकर सब यदुवंशी ४२ व अक्रूर भी
अति प्रसन्नमन हुये व आगे जाकर दुर्वचन कहतेहुये
कंस के धोबी को ४३ कृष्णचन्द्रजी ने मारा व उसके
वस्त्रलेकर रामकृष्ण दोनों महानुभावों ने ब्राह्मणों को
देदिये फिर एक माली ने पुष्पों से दोनों जनोंकी पूजा
की ४४ तब उसको दुर्लभ वर देके राम जनार्दन दोनों
मार्ग में चलेजातेहुये कुब्जा से पूजितहुये ४५ फिर
जाकर कपट से स्थापित धन्वा को उठाकर बलवान्
श्रीकृष्णचन्द्रजी ने खींचकर तोड़डाला ४६ व बलदेव
जी ने बहुतसे रखवारों को मारडाला आगेजाकर
कुबलयापीड हाथी को मार दोनोंजने शोभित हुये ४७

हाथोंमें हाथी के दांत लिये गज के मदके बिन्दुओं से शोभित वसुदेवजी के पुत्र राम व कृष्णचन्द्रजी रंगभूमि में प्रवेशकरके बलरामजी ने तो बहुतसे मल्लोंको मारा फिर पर्वताकार मुष्टिक को निपाता ४८ व कृष्णचन्द्र जी ने भी बल व वीर्य से कंस के मल्लों में प्रसिद्ध चाणूर नाम को मारा व उसको उस सभामें बड़ीदेर युद्ध करके निपाता था ४९ जब मुष्टिक मारगया तो उसका मित्र पुष्करक नाम आया उसे भी बलदेवजी ने युद्ध के लिये उठाकर फिर मुष्टिप्रहार से मारा ५० फिर कृष्णचन्द्र जी ने उन सबोंको मार मञ्च के ऊपर खड़े हुये कंस को ऊपरसे भूमिपर गिराय व आप ऊपरसे उसके ऊपर कूदकर व मारकर भूमि में पकड़कर घसीटा ५१ जब श्रीहरिने कंस को मारडाला तो अतिक्रुद्ध हो उसका भ्राता सुनाभ नाम अतिबल वीर्ययुक्त उठखड़ा हुआ परन्तु बलदेवजी ने उसे भी यमपुरको भेजदिया ५२ तब उनदोनों महानुभावों ने अपने माता पिताके प्रणाम कर अतिहर्षित हो सब यदुवंशियों के सङ्ग उग्रसेनजी को राजा बनाय इन्द्र के यहां से सुधर्मा सभा लाय राजा को देदिया ५३ फिर यद्यपि राम व कृष्णचन्द्रजी दोनों सर्वज्ञ थे परन्तु सान्दीपिनि नाम गुरु से अस्त्र शस्त्रादि विद्या पढ़के गुरु के लिये पञ्चजननाम दैत्य को मार व यमराजको भी जीतकर गुरुका बहुतदिनों का मराहुआ पुत्र ले आन गुरुदक्षिणा में देदिया ५४ फिर बलभद्रजी ने मगधदेशके राजा की लाईहुई सेना कईबार मार फिर दोनों जनों ने जाय समुद्र के मध्य में द्वारकानाम पुरी

बसाई ५५ उसमें सब मथुरावासियों को अपने योग प्रभाव से लेजाय बसाय शृगालासुर को मार फिर कालयवन को युक्तिसे राजा मुचुकुन्द की दृष्टि से भस्म कराय उन भूपाल को वरदे वहांसे श्रीहरि चलेगये ५६ जब बहुधा सब विग्रह शान्त होगये बलदेवजी ने फिर नन्दजी के गोकुल में आय वृन्दाबन में सब लोगों से अच्छीतरह वार्तालाप कर एक दिन क्रोध से अपने हल से यमुना को खींचलिया ५७ वहां से आय रेवतीनाम भार्या पाय उनके सङ्ग द्वारका में बलरामजी क्रीड़ा करनेलगे व श्रीकृष्णचन्द्रजी भी क्षत्रियों का कर्म युद्ध करके रुक्मिणीजी को पाय उनके सङ्ग रमण करने लगे ५८ व बलदेवजीने द्यूतखेलनेके समय मृषावादी कलिङ्गराज के दांत उखाड़ व सुवर्ण के लिये मिथ्या कहते हुये रुक्मी को मारडाला ५९ और कृष्णचन्द्रजी ने प्राग्ज्योतिष देशादि के हयग्रीवादि बहुत से दैत्यों को मार व नरकासुर का वधकर बहुतसा धन वहां से लाकर द्वारका में भरदिया ६० फिर भौमासुर से ले अदिति के कुण्डलदे सब देवगणसहित इन्द्र को जीत पारिजात वहां से ले फिर द्वारकापुरी को आये ६१ एक समय कुरुवंशियों ने कृष्णचन्द्रजी के पुत्र साम्ब को बँधुआ करलिया था तब महाबली बलरामजी अकेले जाय कौरवों को भय उत्पन्नकर साम्ब को छुटालाये ऐसे वीर्यवान् थे ६२ व धीमान् श्रीकृष्णचन्द्रजीने बाणासुर के बाहुओं का वन बाणों से समर में काटडाला व उसकी अपनी सेना से कोटिगुण अधिक सेना को बलदेवजी

ने क्षयकरडाला ६३ फिर देवताओं का अपकारी महाबली द्विविदनाम वानर बलदेवजी से मारागया फिर अर्जुनके सारथि बनके कंसके शत्रु श्रीकृष्णचन्द्र जी ने ६४ बहुत से प्राणियों का वधकराय पृथ्वी का भार उतारडाला व जगत् के लिये बलदेवजी ने तीर्थ-यात्रा की थी ६५ व जितने दुष्टों को बलदेवजी ने मारा है उनकी संख्या नहीं होसक्ती हे राजन्! इस प्रकार राम व कृष्णचन्द्र दोनों जने दुष्टों का वधकरके ६६ व पृथ्वी का भार उतार अपनी इच्छा से स्वर्ग को चलेगये ये दिव्य अवतार हमने तुम से कहे ॥ ६७॥

चौपाई ॥

रामकृष्ण के चरित अपारा। पर हमतो संक्षेप प्रचारा॥
कल्किचरितअबसुनहुभुआला।जिनजनुलैकलिकेअघघाला १।६८
इमिसिलिकृष्णशक्तिहरिकेरी।अतिबलवतीजगतिकियफेरी॥
हरिमहिभारअपारवहोरी।पुनिहरिमहँ मिलिगई नथोरी२।६६

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेबलरामकृष्णचरिते त्रिपञ्चाशत्तमोऽध्यायः॥ ५३॥

चौवनवां अध्याय॥

दो० चौवनयें अध्याय महँ, कल्की चरित पुनीत।
सुनिवर्ण्यो भूपालसों, सुनत सुखद युत प्रीत॥ १॥
अरुकलिके गुणदोषबहु, भाषे सहित विचार।
परत न भवजोचलतनर, त्यहिगुणकेअनुसार॥ २॥

मार्कण्डेयजी राजा सहस्रानीक से बोले कि हे रा-जन्! एकाग्रचित्त हो सुनो अब इसके आगे सब पाप नाशनेवाला कल्कीजी के जन्म का इतिहास कहते हैं१

जब कलिकाल के कारण पृथ्वीपर धर्म नष्ट होजायगा व पाप बढ़जायगा व इसी से सब जन पीड़ित होजायँगे २ तब क्षीरसागर के किनारे पर स्तुतिपूर्वक देवों की प्रार्थना से नाना जनोंसे भरेहुये सम्भल नाम ग्राम में ३ विष्णुयशा नाम ब्राह्मण के यहां पुत्र हो कल्की के नाम से प्रसिद्ध राजा होवेंगे व घोड़े पर आरूढ़ हो खड्ग से सब म्लेच्छों को मारेंगे॥ ४॥

स० महिनाशकसबम्लेच्छसँहारी पुरुषोत्तम धरि कल्कीरूप।
करिबहुयागजातरूपी प्रभु धर्मथापि महिपर सुरभूप॥
सकलप्रजा आनन्दितकरिके आपगयेनिजलोकअनूप।
यहकल्कीकरचरितयथामतिहमतुमसनकहमनअनुरूप॥५

दो० पापहरण हरिके कहे, दश अवतार पुनीत।
जोवैष्णवनितपढ़तयहि, सुनतविष्णुपदगीत॥ ३१६॥

इतनी कथा सुन राजा सहस्रानीकजीने मार्कण्डेय जी से कहा हे विप्रेन्द्र! तुम्हारे प्रसाद से श्रीनारायण देवके सुननेवालों के पाप नाशनेवाले दश अवतार हमने सुने ७ अब विस्तार से कलियुग का वर्णनकरो क्योंकि तुम सब जाननेवालों में श्रेष्ठ हो ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य व शूद्र हे मुनिसत्तम! ८ कलियुग में क्या२ भोजन करेंगे व कौन कौन आचार करेंगे सूतजी भरद्वाजादिकों से बोले कि भरद्वाजसहित सब ऋषिलोगो सुनो ९ जब कृष्ण भगवान् कृष्णरूप धारणकरते हैं अर्थात् कलियुग में तब सब धर्म नष्ट होजाते हैं इस से कलियुग महाघोर युग है क्योंकि वह सबपापों का ही साधक है १० इससे कलियुग में ब्राह्मण क्षत्रिय

वैश्य व शूद्र सब अपने २ धर्म से विमुख होते हैं व ब्राह्मणलोग देवताओं से पराङ्मुख होते हैं ११ जो कुछ धर्म भी करते हैं वह व्याजपूर्वक ही करते हैं व दम्भही के साथ आचार करते हैं निन्दा सबकी सदा कियाकरते हैं व चाहे किसी काम के न हों पर वृथा अहङ्कार के मारे दूषित बनेरहते हैं १२ सब नर अपने पाण्डित्यके गर्व से सत्य बोलना छोड़देते हैं हमीं अधिक हैं यह सब कोई कहते हैं १३ व सब अधर्म करने के लोभी होते हैं व औरोंकी निन्दा सबकरते हैं इसी से कलियुग में सब लोग अल्प आयुर्बल के होते हैं १४ व अल्पायु होनेसे कोई मनुष्य विद्या नहीं पढ़पाते व विद्या न पढ़नेसे अधर्मही कियाकरते हैं १५ व ब्राह्मणादि सबवर्ण परस्पर में ऐसा व्यवहार करते हैं कि वर्णसङ्कर होजाते हैं फिर वे मूढ़ काम क्रोध में तत्पर रहते इससे वृथा सन्ताप से पीड़ित रहते हैं १६ ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य सब धर्मसे पराङ्मुख रहेंगे व सब एक दूसरेसे वैरबांधे रहेंगे कि एक दूसरे को बधकरडालने की इच्छा किया करेगा १७ व सत्य तपरहित होनेसे सब ब्राह्मण क्षत्रिय व वैश्य शूद्र के तुल्य होंगे उत्तमलोग नीचता को पहुँचेंगे व नीचलोग उत्तमता को १८ राजालोग द्रव्य खींचने में निरत होंगे व लोभही में सदा परायण बनेरहेंगे ऊपरसे तो मानो धर्म का जामा धारणकियेरहेंगे पर सब धर्मका विध्वंसही कियाकरेंगे १९ सब अधर्मयुक्त इस घोर कलियुग में जो २ हाथी घोड़े आदि से युक्त होगा वही राजा

होगा २० पुत्रलोग अपने २ बापों को सेवाआदि कर्मों के करने में लगावेंगे व पतोहें अपनी सासुओं को अपनी सेवा शुश्रूषा में व स्त्रियां अपने २ पतियों व पुत्रों को छोड़ २ अन्यत्र चलीजायँगी २१ पुरुषों की उत्पत्ति थोड़ी व स्त्रियों की बहुत कुत्तों की बढ़ती गौओं का नाश जिसके धन हो उसीकी बड़ाई व सज्जनों का भी आचार अपूजित होगा वृष्टि बहुधा खण्डित हुआ करेगी मार्ग सब चोर घेररहेंगे व बिना वृद्धों की सेवा करने हीसे सब कोई अपने मन से सब कुछ जान लिया करेगा २२ कोई ऐसा न होगा जो अपने मन से कवि न हो व वेदवादी लोग सब मदिरा पानकरेंगे व ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्रोंके सेवक होंगे २३ पुत्रलोग पिता से अप्रीति रक्खेंगे व विद्यार्थी शिष्य लोग गुरु से अप्रीति करेंगे स्त्री अपने पतिसे वैर रक्खेगी यह सब कलियुग में होगा २४ रात्रिदिन लोभही में लगने से मन निरादरितरहेगा व सब दुष्टही कर्म करेंगे ब्राह्मण लोग सदा परायेही अन्न के भोजन के लोभीहोंगे २५ परस्त्रीगामी सब होंगे व दूसरे की द्रव्य सब ग्रहणकरेंगे घोर कलिकाल में धर्म करतेहुये पुरुष का २६ निन्दक लोग सदा उपहास कियाकरेंगे ब्राह्मण भी एकादश्यादि व्रत न करेंगे व वेदकीभी निन्दाकरेंगे २७।२८ हेतु के वादों से प्रत्येक यज्ञादिकों की निन्दा करके न कोई यज्ञ करेंगे न हवनकरेंगे केवल ब्राह्मणलोग दम्भ के लिये पितरों के श्राद्धादिकरेंगे २९ कोई मनुष्य सत्पात्र पढ़े लिखे सदाचारनिष्ठ लोगोंको ही दान न देंगे किन्तु देंगे

भी तो सर्व साधारणको देंगे व धेनुओं में केवल दुग्धही के निमित्त प्रीति करेंगे ३० राजाओं के नौकर चाकर धनके लिये ब्राह्मणों कोभी बँधुआकरेंगे व ब्राह्मणलोग दान जप व्रतादिका फल बेंचडालेंगे ३१ व ब्राह्मण लोग भङ्गी, चमार, तेली, पासी, कुम्हार, कलवारादि चण्डालों से भी दान लेलेंगे व कलियुग के प्रथम चरणमेंभी लोग हरिकी निन्दा करेंगे ३२ व कलियुग के अन्तमें तो कोई हरिके नाम का स्मरणभी न करेगा सबलोग शूद्रकी स्त्री के सङ्ग भोग करेंगे व विधवाके सङ्गभी भोगकरने की इच्छाकरेंगे ३३ कलियुग में ब्राह्मण शूद्रोंका अन्न भोजन करेंगे व अधम शूद्रलोग जब घर द्वार छोड़ सन्न्यासी बनबैठेंगे तो न ब्राह्मण क्षत्रिय व वैश्यों की सेवा करेंगे न और भी अपने धर्म का कोई कर्मही करेंगे सुख के लिये यज्ञोपवीत भी धारणकरलेंगे व जटारखाय भस्म व धूलि भी लगा लेंगे ३४। ३५ व जाल की बुद्धि में चतुरहो शूद्रलोग सिंहासनों पर बैठकर धर्मकी बातें सबको सुनावेंगे हे ब्राह्मणो! इतने ये व औरभी बहुत से पाखण्ड कलियुग में होंगे ३६ व ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य सब कलियुग में पाखण्डी होंगे उनमें ब्राह्मणलोग बहुधा गीतविद्या में निरत होंगे जो अन्त्यजों का धर्म है व वेदवाद से पराङ्मुख होंगे जोकि उनका मुख्य धर्म है ३७ व कलियुग में ब्राह्मणादि शूद्रों के मार्गपर चलने लगेंगे सबके पास द्रव्य अल्परहेगा वृथा बड़े धनवानों कासा चिह्न बनाये रहेंगे व वृथा अहङ्कार से दूषित बने

रहेंगे ३८ कलियुग में हर्ता तो बहुत होंगे पर दाता न होंगे व अच्छेमार्गपर चलनेवाले पढ़ेलिखे भी ब्राह्मण दान लिया करेंगे ३९ अपनी स्तुति अपनेही मुखसे बहुधा सब लोग किया करेंगे व दूसरेकी निन्दा भी सब करेंगे देवता वेद व ब्राह्मण तीर्थ ब्रतादिकों में सब विश्वासहीन होंगे ४० व सबलोग विना सुनीहुई वार्ता करने में वक्तृत्व दिखावेंगे व ब्राह्मणोंसे वैर रक्खेंगे व सब अपने २ धर्म का त्याग करेंगे कृतघ्न होके सब भिन्नवृत्तियों को धारण करेंगे ४१ कलियुगमें याचकलोग बहुधा चुगुली करेंगे व सबलोग पराये अपवाद के कहने में निरतहोंगे व अपनी स्तुति करने में परायण होंगे ४२ सब जन सर्वदा परधन हरनेका विचार किया करेंगे व जब दूसरे के घरमें बैठकर भोजन करने लगेंगे तो परमानन्दित होंगे ४३ व उसी दिन बहुधा देवताओं की पूजा करके चन्दनादि लगावेंगे व भोजन करहोनेपर वहीं निन्दा भी करने लगेंगे ४४ व ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य तथा शूद्र व अन्य अन्त्यजादिभी अत्यन्त कामी होंगे परस्पर एक दूसरेसे काम की इच्छा करेंगे ४५ फिर जब सब वर्ण सब वर्णों के संग मैथुनादि करलेंगे तो न कोई शिष्य रहेगा न गुरू न पुत्र न पिता न भार्या न पति क्योंकि फिर तो वर्णसंकरही होजायगा ४६ व ब्राह्मणलोग शूद्रोंके यहांकी जीविकासेही जीवेंगे इससे नरकको ही जायँगे बहुतपानी न बरसेगा इससे लोग आकाशही की ओर देखाकरेंगे ४७ तब सबलोग भूँखके भय से व्याकुल होजाया करेंगे सन्न्यासीलोग केवल

अन्नके निमित्त शिष्य किया करेंगे ४८ व स्त्रियां दोनों हाथों से अपना शिर खजुलाती हुई गुरुजनों की व पतियों की आज्ञाका भंग करेंगी ४९ जब २ विप्र न यज्ञ करेंगे व न होम करेंगे तब २ पण्डितलोग कलियुग की वृद्धि का अनुमान करेंगे ५० जब सब धर्म नष्ट होजाते हैं तो जगत् शोभारहित होजाता व निर्द्धन होजाता है हे ब्राह्मणश्रेष्ठो! इस प्रकार कलियुग का स्वरूप तुमलोगों से हमने कहा ५१ परन्तु हे द्विजो! जो लोग हरिके भक्त होते हैं उनको कलियुग नहीं बाधित करता सत्ययुग में तप करना सबसे श्रेष्ठ था व त्रेता में ध्यान का करना ५२ द्वापर में यज्ञ व कलियुग में केवल दान देना जो सत्ययुग में दशवर्ष करने से कर्म सिद्ध होता था वह त्रेता में एक वर्षमें ५३ व वही द्वापर में एक मासमें व कलियुगमें वही एकदिन रात्रि में होता है सत्ययुग में ध्यान करने से त्रेता में यज्ञ करने से द्वापर में पूजन करने से ५४ जो मिलता था वह कलियुग में श्रीराम नाम के कीर्तन से मिलता है व समस्त जगत् के आधार परमार्थस्वरूपी ५५ श्रीविष्णु भगवान्जी का ध्यान करताहुआ पुरुष कलियुग में नहीं कष्टपाता अहो वे लोग बड़े भाग्यवाले हैं जो एक बार भी केशव भगवान् का अर्च्चन ५६ घोर इस कलियुग में करते हैं जो कलियुग सब कर्मों से बाहर करदिया गया है परन्तु कलियुग में वेदोक्त कर्मों की न्यूनता व वृद्धि नहीं होती ५७ इससे इस युग में सब फल देनेवाला केवल श्रीहरिका स्मरण

ही है इससे सदा हरिस्मरण करना चाहिये ॥ ५८ ॥

दो० हरि केशव गोविन्द जग, धाम जनार्दन राम ।
वासुदेव अच्युतजगत, मय पीताम्बर श्याम॥१५६॥
यह जो नितकीर्तन करत, नहिं बाधत कलि ताहि।
यासों कीर्तन करहु सब, का भूले जगमाहि ॥२६०॥
सर्व भयंकर काल कलि, काल माहिं जो लोग ।
हरिपर अरु तिन संगरत, लोग महातमयोग ॥३६१॥
हरिकीर्तन तत्पर बहुरि, श्रीहरि नामहि लीन ।
हरिपूजा जो करत नित, सो कृतार्थ अघहीन॥४६२॥
सर्वदुःखवारण सकल, पुण्यफलद कलिमाहिं।
हरिकीर्तन तुमसन कहा, यासम दूसर नाहिं ॥५६३॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेचतुःपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५४ ॥

पञ्चपनवां अध्याय ॥

दो० पञ्चपनयें महँ शुक्रकृत, हरिकी स्तुति अरु तासु ।
लहिप्रसाद पायहु नयन, भृगुसुत यही प्रकासु ॥ १ ॥

राजा सहस्रानीक मार्कण्डेयजी से बोले कि हे मार्कण्डेयजी ! राजा बलि के यज्ञ में उनके गुरू शुक्राचार्य का नेत्र कैसे वामनजी ने फोड़ा व फिर शुक्र ने स्तुतिकरके कैसे नेत्रपाया १ मार्कण्डेयजी बोले कि जब वामनजी ने शुक्रका नेत्र फोड़डाला तो वे बहुत तीर्थों में जाकर व गङ्गाजी के जल के भीतर स्थित हो देवदेवेश वामन शङ्ख चक्र गदा धारणकिये को हृदय में चिन्तनाकर सनातन नरसिंहजी की स्तुतिकरने लगे २। ३ श्रीशुक्राचार्यजी बोले कि ॥

चौपाई ॥

वामन विश्वेश्वर पुरुषोत्तम। देव विष्णुरूपी तुम्हरे नम॥
बलिदर्पघ्न निरन्तर स्वामी। बार बार तव चरणनमामी १।४
धीर शूरदर चक्र गदाधर। महादेवअच्युत हरि शिवकर॥
ज्ञानपयोधि विशुद्ध स्वरूपा। तुम्हें नमत हम हे सुरभूपा२।५
सर्वशक्ति मय सर्वग देवा। अजर अनादि नित्य तव सेवा॥
गरुड़ध्वज सब भावन करऊँ। बहुरिप्रणाम करत हरवरऊँ३।६
भक्तिमान सुर असुर पुकारत। नारायण तव नाम उचारत॥
हृषीकेश जगगुरु भगवन्ता। करतप्रणामनिहोरितुरन्ता४।७
मनमहँकरिसङ्कल्पयतीजन। ज्यहिध्यावतनरहरिकरिशुभमन॥
अनौपम्य अरु ज्योतीरूपा। नरकेसरी नमन अनुरूपा ५।८
ब्रह्मादिक सुरगणनहिंजाना। तवस्वरूप किमि श्रीभगवाना॥
जासु सकल अवतारन केरी। पूजा करत देव मन हेरी ६।९
जिनयह विश्वरचा प्रथमाही। करि खलवध पाला पुनिताही॥
जामहँ लीन होत पुनिसोई। करतप्रणामतिन्हेंनहिंगोई७।१०
जोनित निजभक्तनसोंपूजित। भक्तप्रियहरितिन्हकियसूचित॥
नमत देवदिव्यामल रूपी। और तुम्हें हम किमि अनुरूपी८।११
जो तोषित ह्वै भक्तन काहीं। दुर्लभ देत पदारथ आहीं॥
सर्व साक्षि श्रीविष्णु उदारा। करतप्रणामसनातनचारा९।१२

मार्कण्डेयजी बोले कि हे पार्थिव! जब धीमान् शुक्राचार्यजी ने ऐसी स्तुति की तब शङ्ख चक्र गदाधर श्रीभगवान् उनके आगे प्रकटहुये १३ व नारायणदेव एक नेत्रवाले शुक्रसे बोले कि किसअर्थ तुमने गङ्गाजी के जल में हमारी स्तुति की १४ शुक्रजी बोले कि हे देवदेव! पुर्वकालमें हमने बड़ा अपराध कियाथा वह

दोष मिटाने के लिये इस समय हमने आप की स्तुति की १५ श्रीभगवान्‌जी बोले कि हमारा अपराध करने से तुम्हारा एक नेत्र नष्ट होगया था परन्तु अब हम तुम्हारे इस स्तोत्र से सन्तुष्टहुये १६ यह कह देवदेवेश श्रीविष्णुजी ने हँसतेही से अपने पाञ्चजन्य नाम शंख से उनमुनि के उसफूटेहुये नेत्र में स्पर्श करदिया १७ जैसेही देवदेव श्रीविष्णुजी ने शंख से स्पर्श किया है कि मुनि का नेत्र फिर पूर्वसमय के तुल्य निर्मल हो गया १८ इस प्रकार मुनि को नेत्र दे व उनसे पूजित हो श्रीमाधवजी तुरन्त अन्तर्द्धान होगये व शुक्र भी अपने आश्रम को चलेगये ॥ १९ ॥

स० कहोमहात्मामुनिगुनिमनमें जिमिभृगुपायहु नेत्रबहोरि।
श्रीहरि केरो पाय प्रसादा सो हम तुम सन कहा निहोरि॥
पुनि अब काहसुना तुम चाहत सो पूँछहु नृपसकल न थोरि।
हमसबकहबभलीविधितुमसोंअन्तरपारिहिनतनिकबरोरि॥२०॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादे पञ्चपञ्चाशत्तमोऽध्यायः॥५५॥

छप्पनवां अध्याय॥

दो० छप्पनयें अध्याय महँ, विष्णु प्रतिष्ठा केर।
सकल विधान महानमुनि, कह्यो कहत करि टेर॥१॥

राजा सहस्रानीकजी ने मार्कण्डेयजी से पूछा कि अब हम इस समय देवदेव शार्ङ्गधन्वावाले श्रीनरसिंह जी की प्रतिष्ठाका विधान सुना चाहतेहैं १ मार्कण्डेय मुनि बोले कि हे भूपाल! देवताओं के देव चक्रधारी श्रीविष्णुजी की प्रतिष्ठा का विधान जैसा शास्त्रों में पुण्यदायक लिखा है कहते हैं २ हे राजन्! जो लोग

विष्णु की प्रतिष्ठा करने की इच्छा करते हों उनको चाहिये कि प्रथम पृथ्वीका शोधनकरें २ प्रथम साढ़े तीन हाथ गहिरा वा दो हाथ गहिरा एक गढ़ाखोदें उसको शर्बत से सनीहुई शुद्ध तड़ागादि की मृत्तिका से पूरित करें ४ फिर यह जानलें कि अधिष्ठान पत्थरका बनाना है वा ईंटों का वा मृत्तिका का फिर उसके अनुसार वास्तुविद्या जाननेवाले पुरुषके कथनानुसार पाषाणादि का ढेर एक ठिकाने लगादें ५ फिर सूत्र से मापकर समान व चौकोना सब ओर से बनावें उसमें पत्थरकी भीति मुख्य है उसके अभाव में फिर ईंटों की है ६ उस के भी अभाव में मृत्तिका की भीति बनानी चाहिये द्वार जहांतक हो मन्दिरका पूर्व ओर को होना चाहिये फिर उसमें सांखू शीशम आदि अच्छीजातिके काष्ठोंके खम्भे लगावे जोकि फलदायक हों ७ उनमें अच्छे बढ़इयों से कमल व कमलके पत्रादि चित्रविचित्र बनवावे इसप्रकार सुन्दर हरिमन्दिर बनवाकर ८ सुन्दर विचित्र कपाट लगवावे द्वार जहांतक हो पूर्वही को हो अतिवृद्ध व बालक से श्रीहरिकी मूर्ति न बनवावे ९ व कोढ़ी आदि से भी व अङ्गभङ्गसे न बनवावे और क्षयी मृगी आदि वाले बहुत दिनों के रोगियों से भी न बनवावे विश्वकर्मा के कहेहुये मार्गके अनुसार जैसी पुराणों में कही है १० वैसी दिव्य प्रतिमा अच्छे पुष्टांग व बुद्धिमान् पुरुषसे बनवावे जिसका सुन्दरमुख हो कर्णभी सुन्दर हों व नेत्र अति सुन्दर हों ११ प्रतिमाकी दृष्टि न नीचे को हो न ऊँचेको न तिरछी दृष्टि हो किन्तु कमल के

समान बड़े गोलता लिये हुये नेत्रों की समदृष्टियुक्त प्रतिमा बनवावे १२ सुन्दर भौंहें सुन्दर चौड़ा ललाट सुन्दरही कपोल सम अर्थात् नेत्र कर्णादि युगल अंग समान हों छोटे बड़े न होने पावें व शुभ कुन्दुरू के समान लाल ओष्ठ हों चिबुक सुन्दरहो व ग्रीवा सुन्दर बनवावे १३ दक्षिण भुजा में नाभि आरागज पुट्ठियों समेत दिव्य चक्र धारण करावे यह चक्र सूर्यवत् प्रकाशित होना चाहिये १४ व वाम पार्श्वके भुजमें चन्द्रसम प्रकाशित उज्ज्वल शंख हो जिसका पाञ्चजन्य तो नाम है व दैत्योंके दर्पका नाश करता है १५ फिर दिव्यहार प्रतिमा के गल में शोभित हो कण्ठ में शंख कीसी तीन रेखा हों स्तन सुन्दर हों हृदय मनोहर हो उदर पिप्पल पत्र सम चढ़ा उतारहो सब प्रकारसे सुन्दर हो १६ वाम हस्त कटिप्रदेश में लगाहो व दक्षिण हस्त कमल में लगाहो दोनों बाहुओं में बहूँटे बँधे हों सुन्दर नाभि व त्रिबलीसे युक्त हो १७ कटि भी सुन्दर हो ऊरु जंघा सब सुन्दर जैसी चाहियें चढ़ाउतार हों सुन्दर वस्त्र व क्षुद्रघण्टिका धारण कियेहो हे राजसत्तम! ऐसी प्रतिमा बनवाकर १८ व सुवर्ण वस्त्रादि देनेसे प्रतिमा के बनाने वालों का सत्कारकर शुक्लपक्ष में जब शुभनक्षत्र तिथि लग्नादि हों तब पण्डित को चाहिये कि प्रतिमा का स्थापनकरे १९ स्थापनके पूर्वही मन्दिरके आगे उत्तम यज्ञमण्डल बनावे जिसके चार द्वार चारोंदिशाओं में हों व चार तोरण चारोंदिशाओं में दिव्य काष्ठ के लगे हों २० उसमें जहां तहां सप्तधान्य के अंकुर जमाये

जायँ व शंख नगाड़े आदि बाजे बाजते रहैं पण्डित लोग प्रथम छत्तीस घड़ों से प्रतिमा को धोवें २१ फिर मण्डप के भीतर लेजाकर वेदवादी पण्डितों से मन्त्र-पूर्वक पञ्चगव्य से स्थापित करावे सो दुग्ध घृत दधि इत्यादिकों से अलग २ स्नान करावे २२ फिर उष्ण जल से स्नानकराय शीतलजल से स्नानकरावे फिर हरिद्रा कुंकुम चन्दनादिकों से उपलेपितकरे २३ पुष्प मालादिकों से अलंकृत कर फिर दिव्य वस्त्रोंसे भूषित करे फिर पुण्याहवाचन कराय ऋचाओं व जल से मूर्तिको पोंछकर २४ फिर भक्त ब्राह्मणों के संग स्नान करके शंख नगाड़े आदि बजवाते गातेहुये प्रतिमा ले जाकर सातरात्रि वा तीन रात्रितक किसी बड़ी नदी के जल में स्थापितकरे २५ नदी के अभाव में किसी ह्रद वा तड़ाग में रखके मूर्ति की रक्षा करतारहे इस प्रकार जल में अधिवासित कराके २६ फिर ब्राह्मणों केही हाथों से जल के भीतर से निकलवाकर व पूर्ववत् व-स्त्रादिसे भूषित करातेहुये व शंख नगाड़े आदि बजवाते व वेदमन्त्रों के उच्चारणके साथ केशवजी को २७ कमल के आकार गोल बनेहुये शुद्ध मण्डप में लाके फिर विष्णुसूक्त मन्त्रोंसे स्नान व अलंकारादि करावे २८ फिर ब्राह्मणों को विधिवत् भोजन करवाय कमसे कम सोलह ऋत्विज् पूजितकरे उनमें चार तो वेदपाठ करें चार रक्षा पाठ पढ़ें २९ व चार पण्डित चारों दिशाओं में बैठकर होमकरें व पुष्प अक्षतादि मिलाकर सब दि-शाओं में क्षेत्रपालादिकों को चार बलिदें ३० उनमें

एक परिडत से इन्द्रादिक प्रसन्न हों यह कहकर दिलावे व प्रत्येक को सायंकाल की सन्ध्या में अर्द्धरात्र में वा प्रातःकाल में ३१ जब सूर्योदय हो आवे तो मातृगणों व विप्रगणों को पुष्पादि बलि दिलवावे व एक ओर फिर २ पुरुषसूक्त जपाजाय ३२ व हे राजन् ! विष्णुके मन्दिर में एक ओर मन से विष्णु का ध्यान करता हुआ यजमान ब्राह्मणों सहित एकरात्रि व दिन उपवास करके स्थितरहे ३३ व फिर ब्राह्मणों के साथ जहां प्रतिमा हो उस द्वारमें प्रवेशकरके ब्राह्मणों से वेदसूक्त पढ़ाता हुआ शुभलग्न में दृढ़तापूर्वक उस प्रतिमा का उपस्थान करके ३४ फिर विष्णुसूक्त से वा पावमान मन्त्रसे आचार्य कुशसहित जल से देवदेव का प्रोक्षण करे ३५ फिर मूर्तिके आगे अग्नि स्थापितकरके व चारों ओर कुश बिछाकर अर्थात् कुशकरिडका करके होमकरे तदनन्तर जातकर्मादिक कर्म गायत्री से करे वा "ॐ नमोनारायणाय" आदि किसी वैष्णवी मन्त्र से करे ३६ एक २ क्रिया करने में चार २ आहुतियां दे यह कार्य आचार्य अपने आप करे वा अस्त्रों से दिग्बन्धन भी आचार्यही करे वा औरों से करावे ३७ फिर "त्रातारमिन्द्र" इत्यादि मन्त्रसे वेदीपर घृत छोड़े व परोद्दिवास और याम्यमन्त्र से व वारुण्यान्निम्र्मम इससे भी ३८ याते सोम इससे उत्तरदिशा में घृत की आहुति दे व परोमात्र इत्यादि दो सूक्तों से सर्वत्र घृत से आहुति करे ३९ इस प्रकार होम करके फिर यदस्य व स्विष्टकृत् इन मन्त्रों को जपे फिर ऋत्विजों को

यथायोग्य दक्षिणा दे ४० दो वस्त्र व कुण्डल तथा अंगूठी गुरुको दे यदि विभव हो तो गुरुको जो कुण्डलादि दे सुवर्णही के दे ४१ फिर आठसहस्त्रकलशों से वा आठसौ से व इक्कीसकुम्भों से प्रतिमा का स्नान करावे ४२ फिर शंख व नगाड़ोंके शब्दोंसे व वेदमन्त्रों के उच्चारण से व यव धान आदिके अंकुरोंसे युक्त पात्रों समेत ४३ दीप यष्टि पताका छत्र तोरणादिकों से युक्त करे फिर यथा विभव का विस्तार हो वैसे पदार्थों से स्नानकराय ४४ व उस समय भी ब्राह्मणोंको यथाशक्ति दान दे श्रीहरिको स्थापित करे हे राजन्! जो कोई इस प्रकार से श्रीविष्णुदेव की प्रतिष्ठाकरता है ४५ वह सब पापों से छूटकर व सब भूषणों से भूषितहो विचित्र विमान पर अपने इक्कीसकुल में उत्पन्न पुरुषों समेत चढ़के ४६ इसलोक से लेकर सब लोकों में बड़ी पूजा पाय व बन्धुओं को उन लोकोंमें स्थापित करता हुआ आप विष्णुलोक में जाकर पूजित होता है ४७ व वहीं ज्ञान पाके वैष्णवपद को पाता है इस प्रकार हम ने श्रीविष्णुजी की प्रतिष्ठा का विधान तुमसे कहा ४८ सुनने व पढ़नेवालों के सब पापों का नाश करता है इसमें कुछभी अन्तर नहीं है ॥ ४९ ॥

चौपैया ॥

सुनिये महिपाला परमविशाला जो थापत हरिकाहीं।
क्षितितलपराविधिसों लहि सब सिधिसों विष्णुलोक सो जाहीं॥
जहँ कैस्यहु जाई नरसुखपाई बसत सदा नहिं फेरी।
आवत यहि लोका जहँ बहुशोका तुमसों कहत सुटेरी ॥१५०॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेषट्पञ्चाशत्तमोऽध्यायः॥ ५६॥

सत्तावनवां अध्याय ॥

दो० सत्तावनयें महँ कहे, हरिभक्तन के चीन्ह ।
जिन्हैंसुनेनरहोतहैं, विष्णुभक्तिलवलीन्ह ॥ १ ॥

राजा सहस्रानीक मार्कण्डेयजीसे बोले कि हे द्विज ! नरसिंहजी के भक्तों के लक्षण हमसे कहो कि जिनकी सङ्गतिमात्रसे विष्णुलोक दूर नहीं रहता १ श्रीमार्कण्डेय जी बोले कि विष्णुजी के भक्त सदा श्रीविष्णुके पूजन के विधान में महाउत्साही होते हैं व अपनी इन्द्रियों को अपने वश में रखते अपने धर्म से सम्पन्न रहते इसीसे वे लोग सब अर्थों को सिद्ध करलेते हैं २ व परोपकार करने में सदा निरतरहते गुरुओंकी शुश्रूषा में तत्पर होते अपने वर्णाश्रम के आचारसे युक्त रहते व सबसे प्रियही वचन बोलते हैं ३ वेद व वेदार्थों के निश्चयों को जानते रोषरहित होते किसी वस्तु की इच्छा नहीं करते शान्तस्वरूप व प्रसन्नमुख रहके नित्य धर्म में परायण रहते हैं ४ व हितकारी वचन सोभी थोड़ा बोलते हैं समयपर अपनी शक्ति के अनुसार अतिथियों का प्रियकरते हैं दम्भ व माया से विनिर्मुक्त रहते हैं काम क्रोधसे अतिवर्जित रहते हैं ५ वे लोग इस प्रकार के धीर क्षमावान् बहुत पढे सुने होते व विष्णुका सङ्कीर्तन सुनतेही उनके रोमावली होआती है ६ व विष्णुकी मूर्ति के पूजन में सदा प्रयत्न किया करते व उनकी कथा में सदा आदर करते हैं ऐसे महात्माओं को विष्णुभक्त कहते हैं ७ इतना सुन राजा ने फिर प्रश्न किया कि हे भृगुवर्य, गुरुजी ! हे विद्वन् !

आपने कहा कि जो अपने वर्ण व आश्रम के धर्ममें स्थित हैं वे केशवजी के भक्त हैं ८ इससे आप वर्णों व आश्रमोंके धर्म हमसे कहने के योग्यहैं कि जिनके करने से सनातनदेव नरसिंहजी सन्तुष्ट होतेहैं ९ मार्कण्डेय जी बोले कि, इसविषयमें पूर्वकाल का उत्तम वृत्तान्त वर्णन करते हैं जिसमें मुनियों के साथ महात्मा हारीत जी का संवाद है १० धर्मके तत्त्व जाननेवाले बहुत वेद शास्त्रोंके पढ़नेवाले बैठेहुये हारीतजी से प्रणाम कर धर्म सुनने की इच्छा कियेहुये मुनिलोग बोले ११ कि हे सर्वधर्मज्ञ व सबधर्मों के प्रवृत्त करनेवाले, हे भगवन्! वर्णों व आश्रमों के सनातन व निरन्तर धर्म हमलोगोंसे कहिये १२ जगत्के बनानेवाले श्रीनारायण देव पूर्वकाल में जलके ऊपर शेषनाग के शरीर को शय्या बनाय लक्ष्मीजी के साथ शयनकररहे थे १३ सोतेहुये उन नारायणजी की नाभिसे कमलजमा व उसके मध्य में वेद वेदाङ्गों के भूषण ब्रह्माजी उत्पन्न हुये १४ उनसे देवदेवजी ने कहा कि तुम; बार बार जगत् की सृष्टिकरो तब उन्होंने अपने बाहुसे क्षत्रियोंको उत्पन्नकिया व वैश्यों को ऊरु से १५ व शूद्रों को पादों से बनाया व उनलोगों के धर्मशास्त्र व मर्यादा तदनन्तर ब्रह्माजी ने कहा १६ सो उसीरीति से सब तुमसे कहते हैं हे ब्राह्मणोत्तमो! सुनो वह धनकरता यश करता व आयुबढ़ाता तथा स्वर्गमोक्ष के फल देता है १७ ब्राह्मणी में ब्राह्मणही से जो उत्पन्न हो वह ब्राह्मण कहाता है उसके धर्म व उसके रहने के योग्य

देश कहते हैं १८ जिसदेश में अपने स्वभावही से कृष्णसार मृग रहता हो उसमें बसाहुआ ब्राह्मण अपना धर्मकरे १९ ब्राह्मणों के जो छः कर्म पण्डितों ने कहे हैं उन्हीं को जो निरन्तर करते हैं वे सुख पाते हैं २० वेद शास्त्रादिकों का पढ़ना व पढ़ाना यज्ञकरना व यज्ञकराना दानदेना व दानलेना इन्हीं को छः कर्म कहते हैं २१ उसमें पढ़ाना तीनप्रकार का होता है एक धर्म के अर्थ दूसरा अपने अर्थ कुछ उससे द्रव्यादि लेकर तीसरा कारण से जैसे किसीकी नौकरी चाकरी करके पढ़ावे व शुश्रूषा का कारण तीनों प्रकार की अध्यापकता में है २२ योग्यही शिष्यों को पढ़ावे व योग्यही यजमानों को यज्ञकरावे व विधिपूर्वक ही दान ले जिससे गृह के धर्म चलें २३ शुभदेश में एकाग्रचित्त हो वेद में अभ्यासकरे व नित्य नैमित्तिक व काम्य कर्म यत्नपूर्वक कियाकरे २४ व गुरु की सेवा भी पठनावस्था में जैसी चाहिये निरालस होके करता रहे सायंकाल व प्रातःकाल विधिपूर्वक अग्नि में आहुति देतारहे २५ व स्नान करके वैश्वदेव प्रतिदिन करे व अतिथि कोई आजाय तो अपनी शक्ति के अनुसार गृहस्थ उसका भी पूजन सत्कार करे २६ औरों को भी आयेहुये देखकर विरोध रहित पूजे अपनी स्त्री के संग नित्य भोगकरे व परस्त्रीके संग कभी न करे २७ सदा सत्य वचन बोले क्रोध को जीतरहे अपने धर्ममें सदा निरत हो जब अपने कर्म के करनेका समय आजाय तो प्रमाद न करे कि उस समय अन्य कर्म करने

लगे २८ प्रिय व हितवाणी सदा बोले पर परलोक के विरोध करनेवाली वाणी कभी न कहे इसप्रकार संक्षेप रीति से ब्राह्मण का धर्म हमने कहा २९ इस प्रकार जो कोई ब्राह्मण धर्म करता है वह ब्रह्म के स्थान को वा ब्रह्माके स्थान को जाता है ॥ ३० ॥

चौपैया ॥

यह सब अघहारी धर्मप्रचारी ब्राह्मणधर्म बखाना।
क्षत्रिय सुखकेरे धर्म घनेरे कहबै सहित विधाना ॥
सुनिये चित धैकै मन इत कैकै विप्रवर्य शुभरीती।
सोसबसुखपावतनिजमनभावतसुनतपढ़तकरिप्रीती ॥३१

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेब्राह्मणधर्मकथनन्नाम सप्तपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५७ ॥

अट्ठावनवां अध्याय ॥

दो० अट्ठावनयें महँ कहे, क्षत्रियादि के धर्म।
पुनिगृहस्थ के धर्म सब, जिमिकरनेत्यहिकर्म ॥ १ ॥

हारीतमुनि सब मुनियोंसे बोले कि, अब यथाक्रम क्षत्रियादिकों के धर्म कहते हैं जिस २ विधि से क्षत्रियादि प्रवृत्त होते हैं १ राज्य में टिकाहुआ क्षत्रिय धर्म से प्रजाओंका पालनकरे व विधिपूर्वक यज्ञकरता हुआ वेदशास्त्र पढ़े २ व धर्म में बुद्धि करके उत्तम ब्राह्मणों को दानदे अपनी स्त्री के संग नित्य भोगकरे व परस्त्री के संग कभी न भोगकरे ३ नीतिशास्त्र के अर्थ में कुशलरहे व सन्धि विग्रह आदि के तत्त्वों को जाने देवता व ब्राह्मणों का सदा भक्त रहै पितरों के श्राद्धादि कर्म करतारहै ४ धर्मही से जीतनेकी इच्छाकरे अधर्म

को छोड़े जो ऐसा करता है वह क्षत्रिय उत्तमगति पाता है ५ गौओं की रक्षा कृषी व वाणिज्य विधिपूर्वक वैश्य करे व यथाशक्ति दान धर्मकरे गुरुओं की शुश्रूषा भी करतारहै ६ लोभ व दम्भ से विनिर्मुक्तरहै सत्य वचन बोले किसी की निन्दा न करे न आप निन्दित हो अपनीही स्त्री के संग भोगकरे इन्द्रियों को दमनकरे परस्त्री का संग त्यागे ७ यज्ञ के काल में धनोंसे ब्राह्मणों की पूजा बड़ी शीघ्रतासे करे यज्ञ करना वेदशास्त्र पढ़ना व दान देना ये तीनकर्म नित्य निरालस हो करे ८ जब पितरों का काल आवे तो उनके श्राद्ध तर्पणादि कार्यकरे व नरसिंहजीकी पूजा तो नित्यकरे अपने धर्म में टिकेहुये वैश्य का यह धर्म तुमसे हमने कहा ९ इस धर्मकी सेवा करताहुआ वैश्य स्वर्गवासी होता है इस में संशय नहीं है शूद्र तीनों वर्णों की सेवाकरे १० व ब्राह्मणों की सेवा विशेषरीति से दासवत् करे उनको विना मांगेही जो वस्तु अपने हो दियाकरे व जीविका के अर्थ खेतीकरे ११ सब ग्रहोंका प्रत्येक माससें न्याय धर्म से पूजनकरे बहुधा पुराने फटे वस्त्र धारणकरे व ब्राह्मण के जूँठे पात्रादिकों को शुद्ध कियाकरे १२ अपनी ही स्त्रियों के संग भोगकरे पराई स्त्री का संग सदा त्यागे कथा पुराण नित्य ब्राह्मण के मुखसे सुने व नरसिंहजीका पूजन नित्यकरे १३ व ब्राह्मणके नमस्कार श्रद्धापूर्वक जैसेही देखे कियाकरे सत्यही बोले किसी से अति प्रीति व वैर न करे १४ मन वचन व कर्म से ऐसा करताहुआ शूद्र इन्द्रके स्थान को प्राप्त होता है

व उसके सब पाप नष्ट होजाते हैं इससे पुण्यभागी होता है १५ हे ब्राह्मणो! वर्णों के विविध प्रकार के धर्म हमने यथाक्रम कहे अब क्रमसे चारो आश्रमोंके धर्म कहते हैं हे मुनीन्द्रो! सुनो १६ हारीतजी बोले कि, जब ब्राह्मणकुमार का यज्ञोपवीत हो तो वह गुरु के गृह में पढ़ने के लिये जाबसे व कर्म मन वचन से गुरुका प्रिय व हित सदाकरे १७ सदा ब्रह्मचर्य से रहे इससे भूमिपर शयनकरे खट्वादिकों पर नहीं व अग्नि की उपासना सदा करे गुरु को जल आनदे व इन्धन भी बनादि से ले आन दियाकरे १८ पर विधिपूर्वक मध्याह्न के पूर्वही वेद पढ़ले क्योंकि जो विधि छोड़कर पढ़ता है वह वेदाध्ययन का फल नहीं पाता १९ जो कुछ कर्म कोई विधिको छोड़ अविधि से करता है उस का फल उसे नहीं मिलता व करनेवाला भी विधि से च्युत कहाता है २० इससे वेदपाठ की सिद्धि के लिये नियमित व्रतों को करे व गुरु के समीप सम्पूर्ण शौच व आचारके विधान सीखे २१ ब्रह्मचारी सावधान हो व एकाग्रचित्त करके मृगचर्म दण्डकाष्ठ मेखला व यज्ञोपवीत धारण कियेरहे २२ सन्ध्या व प्रातःकाल भिक्षा के अन्न से दोबार भोजन करे इन्द्रियों को अपने वश में रक्खे न गुरुके कुलमें भिक्षा मांगे न अपनी जाति के कुलके बन्धुओंके यहां २३ जब अन्य गृहों का अलाभ हो तो पूर्व २ को छोड़ताजाय आच-मनकर पवित्र हो नित्य गुरुकी आज्ञाही से भोजन करे २४ शयन से उठकर प्रथम कुश या मृत्तिका दांतों

के शुद्ध करने के लिये व वस्त्रादिक जिसकी आवश्यकता हो गुरु को उठादे २५ जब गुरु स्नान करले तो पीछे आप भी यत्न से स्नान करे ब्रह्मचारी व व्रती नित्य दन्तधावन न करे २६ छत्र उपानह उबटन लगाना गन्धमाल्यादि ब्रह्मचारी न धारणकरे व नाच गाना कथालाप व मैथुन तो विशेष रीतिसे बरावे २७ मधु मांस रस का आस्वाद व स्त्री काम क्रोध लोभ व अन्य लोगों का अपवाद त्यागे २८ स्त्रियों को बार २ हठ से न देखे न स्पर्श करे व किसी को मारे नहीं अकेला ही सब कहीं शयनकरे व वीर्य कभी न पात करे २९ व जो बिना उसकी इच्छा के शयन करने में कहीं वीर्यका पात होजाय तो स्नानकर सूर्य व अग्नि की पूजाकर पुनर्म्मा इस ऋचाको जपे ३० व व्रत में टिकाहुआ ब्रह्मचारी आस्तिकता से तीनों काल की सन्ध्या प्रतिदिन कियाकरे व न्यायपूर्वक अपनी इन्द्रियों को वश में रक्खे ३१ सन्ध्याकर्म के पीछे गुरु के चरणों में प्रणामकर यदि सम्भव हो तो नित्यभक्तिसे माता पिता के यथायोग्य प्रणामकरे ३२ क्योंकि गुरु माता पिता इन तीनों के सन्तुष्ट होने पर सब देव संतुष्ट होते हैं इससे अहंकार छोड़के ब्रह्मचारी इन तीनोंकी आज्ञा में टिके ३३ इस प्रकार चारो वा दो वा एक वेद पढ़के गुरु को दक्षिणा दे फिर अपनी इच्छासे निवास करे ३४ विरक्तचित्त हो तो वनको वा तीर्थादिकों को चलाजाय संरक्तचित्त हो तो गृहस्थ होजाय क्योंकि जो रागसहित गृह छोड़ वनादि को चलाजाता है वह अवश्य नरक

को जाता है ३५ व जिसकी जिह्वा लिङ्गेन्द्रिय उदर व वाणी ये सब शुद्ध होते हैं तब कियेहुये भी विवाह को छोड़ सन्न्यासी होता है वह ब्राह्मण ब्राह्मणके शरीरही को जानो धारण किये है ३६ इस प्रकार की विधिपर स्थित होके व निरालसी हो जो कालको बिताता है वह फिर भी दृढ़व्रतकरनेवाला ब्रह्मचारी होता है ३७ जो ब्रह्मचारी इस विधिपर स्थित हो गुरुकी सेवा करता हुआ पृथ्वीपर बिचरता है वह दुर्लभ विद्या को पाय उसका सब फल पाता है ३८ हारीतजी फिर मुनियों से बोले कि वेदाध्ययन कर श्रुति व शास्त्रों के अर्थों का निश्चय जान गुरुसे वर पाय फिर समावर्तनकर्म करे ३९ गृह में आय अपने नाम व गोत्रकी को छोड़ जिसके भ्राता विद्यमान हो व शुभ रूपवती हो तथा सब अङ्ग संयुक्त हो आचरण शील सज्जनों का हो ऐसी कन्या के संग विवाहकरे ४० अत्यन्त गौरवर्णवाली कन्या के संग विवाह न करे न अधिकअङ्गवाली के सङ्ग न रोगिणी के संग न बड़ी बरबरही के संग न बहुत रोम-वाली के न अङ्गहीन के न भयङ्कर दर्शनवाली के संग विवाहकरे ४१ न नक्षत्र वृक्ष व नदी के नामवाली के साथ न पर्वतके मध्यके नामवाली के न पक्षी सर्प व दास के नामवाली के न भयङ्कर नामवाली के साथ विवाहकरे ४२ किन्तु सब सुन्दर पूर्णअङ्गवालीके सौम्य नामवाली हंस व हस्ती के समान चलनेवाली के संग ओष्ठ केश व दांत छोटेवाली के व कोमल अङ्ग वाली स्त्री के संग विवाहकरे ४३ सो ब्राह्मणोत्तम ब्राह्म

विवाहके विधान से अच्छे प्रकार विवाहकरे जैसा योग हो अपने वर्णके अनुसार विवाहकी सबरीतें करे ४४ व नित्य प्रातःकाल उठ शौचकर दन्तधावनपूर्वक उत्तम ब्राह्मण स्नान करे ४५ व जिससे कि मुखमें पूर्वदिन के जूँठ आदि लगेरहने से मनुष्य अपवित्र होता है इस से सूखे वा गीले काष्ठ से दन्तधावन अवश्यकरे ४६ बेर, कदम्ब, कञ्जा व कञ्जी, बरगद, लहाचिंचिड़ा, बेल मदार वा अकौआ व गूलर ४७ इतने वृक्ष दन्तधावन के कर्म में प्रशस्त हैं व दन्तधावन काष्ठ तथा उनकी उत्तमता आगे भी कहते हैं ४८ सब कांटेवाले वृक्ष दन्तधावन में पुण्यदायक हैं व सब दुधारेवृक्ष यशस्वी हैं दन्तधावन का प्रमाण ८ अंगुल का कहा है ४९ अथवा प्रादेशमात्र का काष्ठ जो बीताभर से कुछेकही न्यून होता है उतना दन्तधावन का प्रमाण है बस उसी से दांतों को धोना चाहिये ५० परन्तु प्रतिपत अमा-वास्या षष्ठी व नवमी को दांतों में काष्ठका संयोग करने से पुरुष अपने सातकुलतक को भस्मकरता है इससे इन तिथियों में दन्तधावन न करना चाहिये ५१ व जिसदिन दन्तधावन के लिये काष्ठ न मिले अथवा जिस दिन दन्तधावन करनेका निषेधहो उसदिन जल के बारहकुल्ले करने से मुखकी शुद्धि कीजाती है ५२ स्नानकरके मन्त्रपढ़ आचमनकरके फिर आचमनकरे व फिर देह पोंछकर मन्त्र पढ़के जलकी अञ्जलिदे ५३ क्योंकि प्रातःकाल सूर्य के साथ मन्देहानाम राक्षस ब्रह्माजी के वरदान से युद्ध करते हैं इससे गायत्रीपढ़ के

उस समय जलाञ्जलि ऊपरको उछालनेसे ५४ रविजी के बैरी उन मन्देहानाम राक्षसों को वह पुरुष मारता है तब ब्राह्मणों से रक्षित हो सूर्यनारायण आकाश में चलनेलगते हैं ५५ उस समय मरीच्यादि ऋषि व सनकादि योगीलोग भी सूर्य की रक्षा करते हैं इससे ब्राह्मण को चाहिये कि प्रातःकाल वा सायंकाल की सन्ध्या का उल्लंघन न करे ५६ जो कोई उल्लंघन मारे मोह के करता है वह निश्चय नरक को जाता है सन्ध्यासमय स्नानकर व सूर्यनारायण को जलाञ्जलि दे ५७ व प्रदक्षिणाकर जल का स्पर्श करने से शुद्ध होता है पूर्वकाल की सन्ध्या का प्रारम्भ तब करना चाहिये जब कि कुछ २ नक्षत्र दिखाई देते रहते हैं ५८ व तबतक गायत्री में अभ्यास करना चाहिये जबतक कि नक्षत्रों को देखता है फिर गृह में आके पण्डित को चाहिये कि थोड़ा होम करे ५९ व यह होम नौकरों चाकरों व भृत्यवर्गों की रक्षाके लिये होताहै फिर शिष्यों की रक्षा के लिये कुछ वेदपाठकरे ६० व अपनी रक्षा के लिये ईश्वर के सामने जाय व कुश पुष्प इन्धनादि ग्राम से बाहर दूर से लावे ६१ इसी प्रकार फिर पवित्रदेश में बैठकर मध्याह्न की सब क्रियाकरे अब संक्षेपरीति से पापनाशन स्नानविधि वर्णन करते हैं ६२ जिस विधि से स्नानकरने से तुरन्त पातक से छूटजाता है पण्डित को चाहिये जब स्नानकरने को चले श्वेततिल व कुश लेले ६३ व प्रसन्नमन हो शुद्ध व मनोरम किसी नदी पर जाय जब नदी विद्यमान हो तो थोड़े जल में न

स्नानकरे ६४ नदी के तटपर पहुँच पवित्र स्थानपर कुश व मृत्तिका जल से भिगोदे फिर मिट्टी व जल सब अपने शरीर में लगावे ६५ फिर स्नानकरे इसप्रकार स्नान करने से शरीर का शोधनकर आचमन करे स्नान करने के समय जल में पैठकर जल के देव वरुण जी के नमस्कारकरे ६६ व फिर चित्त में हरिही का स्मरण करताहुआ बहुतजलमें बुड्डी मार के स्नानकरे फिर स्नानकरके जल आचमनकरे ६७ फिर पावमानी मन्त्रों से सूर्य के सारथि अरुणदेव के ऊपर जल छोड़े फिर कुशकी फुनगीसे जल बोरकर अपने ऊपर छिड़के ६८ व "इदंविष्णुर्विचक्रमे" इस मन्त्र से अपने सर्वांग में मृत्तिका लेपनकरे तब नारायणदेव का स्मरण करता हुआ जल में पैठे ६९ जल में अच्छे प्रकार बुड्डी मारकर फिर तीनबार अघमर्षण पढ़े स्नानकर कुश तिल व जल से देवता पितर व ऋषियों का ७० तर्पण करके उस जल से निकले व जल के तीरपर आय धोये व शुक्ल दो वस्त्र धोती अँगौछा धारण करे ७१ वस्त्र धारणकरके फिर शिर के बाल न हिलावे स्नान करने के समय व स्नानकर होनेपर भी अतिरक्त व नीलवस्त्र नहीं अच्छा होता इनदोनों का निषेध है ७२ विना निखराया व विना छीरा का वस्त्र पण्डित को चाहिये कि न धारणकरे स्नान के पीछे मृत्तिका लगाकर जलसे चरण धोवे ७३ व अच्छी तरह देखकर तीनवार आचमनकरे व दोबार मुखधोवे फिर पाद व शिरपर जलछिड़के फिर तीनबार आच-

मनकर ७४ अंगुष्ठ व अंगुष्ठ के लगेवाली अँगुली से नासिका का स्पर्शकरे व अंगुष्ठ और कनिष्ठिका से नाभि व हृदय का स्पर्शकरे ७५ व सब अँगुलियों से शिरका स्पर्शकरे व बाहों को भी सब अँगुलियों से ही स्पर्श करे इस विधिसे आचमनकर शुद्धमन हो ब्राह्मण ७६ हाथों में कुश ले पूर्वको मुखकर एकाग्रचित्त हो जैसा शास्त्र में लिखा है निरालस हो प्राणायाम करे ७७ तदनन्तर वेदमाता गायत्री का जपयज्ञ करे जपयज्ञ तीनप्रकार का होता है उसका भेद समझो ७८ एक वाचिक दूसरा उपांशु तीसरा मानसिक बस येही तीन प्रकार हैं इनतीनों जपयज्ञों में प्रथम से दूसरा व उस से तीसरा अधिक कल्याणदायक है ७९ जोकि उच्च नीच व स्वरित शब्दों से स्पष्ट अक्षरों से उच्चारित कियाजाय कि अच्छे प्रकार सबको सुनाईदे वह वाचिक जपयज्ञ कहाता है ८० व जो धीरे से मन्त्रका उच्चारण करे व कुछेकही ओष्ठ चलावे व कुछ आपही मन्त्र को जानपावे वह उपांशु जप कहाता है ८१ जो बुद्धिसे ही अक्षरों की पङ्क्ति समझीजाय वर्णसे वर्ण पदसे पदभी बुद्धिही से जानेजायँ व शब्द के अर्थका ध्यान किया जाय वह मानस जप कहाता है ८२ जपकरनेसे नित्य स्तुति कीगई देवता प्रसन्न होती है व प्रसन्न हो विपुल भोग व निरन्तर मुक्ति को देती है ८३ यक्ष राक्षस पिशाच व सूर्यादि दूषण करनेवाले सब ग्रह मन्त्र जप करनेवाले के समीप नहीं जाते किन्तु उसके दूरही दूर चलेजाते हैं ८४ नक्षत्रादिक अच्छीतरह जानकर

संकल्प करके तब निरालस हो उसीमें मनलगा प्रति-
दिन गायत्री का जपयज्ञ करे ८५ जो पुरुष सहस्रबार
जपता वह तो परम संख्या को जपता है जो सौबार
जपता वह मध्यमा संख्या को जपता व जो दशबार
जपता है वह नीच संख्या पूरी करता है पर इनमें से
जो किसी भी संख्या को नित्य जपता है वह पापों से
नहीं लिप्तहोता ८६ फिर सूर्यको पुष्पाञ्जलि देके ऊपर
को बाहु उठाय "उदुत्यम्, चित्रम्, तच्चक्षुः" इत्यादि
मन्त्रों को जपे ८७ फिर प्रदक्षिणावर्त्त घूम कर दिवाकर
के नमस्कारकरे फिर उनके तीर्थों से देवादिकों का
तर्पणकरे ८८ देवताओं व देवगणों को ऋषियों व
ऋषिगणों को पितरों व पितृगणों को पण्डित नित्य
तर्पितकरे ८९ फिर तर्पण के अन्तमें स्नानवस्त्र निचोड़
कर फिर आचमनकरे कुशोंपर बैठकर व कुश हाथोंमें
लियेहुये यज्ञकर्म विधिसेकरे ९० पूर्वको मुख करके
बुद्धिमान् ब्रह्मयज्ञकरे तदनन्तर तिल पुष्प व जलसहित
सूर्यनारायण को अर्घ्य दे ९१ उठकर अपने शिर की
बराबर ऊँचा उठाय "हंसश्शुचिषत्" इस ऋचा से
जलमें सूर्यार्घ्य दे फिर घरमें आवे ९२ तब विधिपूर्वक
पुरुषसूक्त से श्रीविष्णुजी की पूजा करे फिर वैश्वदेव व
बलिकर्म यथाविधिकरे ९३ वैश्वदेव करनेके पीछे जि-
तनी देर में गोदोहन होता है उतनी देरतक अतिथि
की प्रतीक्षा गृहस्थ करे जो विना देखा हुआ अतिथि
आवे प्रथम उसका सत्कारकरे ९४ सो जैसेही सुने
कि कोई अतिथि आया है कि द्वारही पर उसे आगे

बढ़के स्वागत पूछकर ग्रहण करे क्योंकि अतिथि का स्वागत करने से गृहस्थों के अग्नि सन्तुष्ट होते हैं९५ व आसन देनेसे इन्द्र प्रसन्न होते हैं व पाद धोनेसे उसके पितृगण प्रसन्न होते हैं ९६ व अन्नादि देनेसे प्रजापति सन्तुष्ट होते हैं इससे गृहस्थ अतिथि की पूजा अवश्य करे ९७ शक्तिमान् को चाहिये कि नित्य भक्ति से विष्णु की पूजा करके फिर अतिथि की चिन्तनाकरे व जो आप भी सन्न्यासी हो तो भी ब्रह्मचारी को भिक्षा दे ९८ जितना अन्न भोजन के लिये बनाया गया हो यदि कोई अतिथि न आया हो तो भी उसमें से एक भिक्षु के लिये भिक्षा निकालकर अलग धरदे तब भोजन करे उस भिक्षा में जितने व्यञ्जनादि बने हों सब थोड़े २ धरे ९९ व विना वैश्वदेव करनेपरही जो भिक्षु भिक्षा के अर्थ आजाय तो अवश्यही उसे दे दे क्योंकि उस समय का देना तो स्वर्ग के सोपानों का करनेवाला होता है १०० वैश्वदेव का ही अन्न भिक्षा देकर उस भिक्षुका विसर्ज्जनकरे क्योंकि वैश्वदेव न करने के दोष को भिक्षु नाश करसक्ता है १०१ अतिथि के पीछे फिर सुवासिनी अर्थात् जिन कन्याओं का विवाहहुआ हो पर पति के गृह को न गई हों उनको भोजनकरावे फिर अविवाहित कुमारियों को तदनन्तर रोगियों को फिर बालकों को तदनुवृद्धों को तदनन्तर जो शेषरहे आप भोजन करे १०२ कि तो पूर्व को मुखकरके वा उत्तर को मुखकर मौनव्रत धारणकर अथवा थोड़ा बोलता हुआ प्रथम अन्न के नमस्कार करके हर्षित मनसे १०३

अलग २ पंच प्राणाहुतियां करके लव सब लवण घृतादि मिश्रितस्वादु करनेवाले अन्नका भोजनकरे १०४ भोजन के अन्त में आचमनकरके उदर का स्पर्श करताहुआ इष्टदेवता का स्मरण करे फिर इतिहास व पुराण सुन कर कुछ काल बितावे १०५ फिर संध्या के समय गृह से बाहर नदी तड़ागादि के तीर जाय विधि से सन्ध्योपासन करे फिर होमकरके अतिथि का पूजन करके रात्रि में भोजनकरे १०६ क्योंकि वेद की आज्ञा से ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्यों को प्रातःकाल व सायंकाल भोजन करना चाहिये अग्निहोत्र करनेवाला फिर बीच में कुछ भोजन न करे १०७ शिष्यों को सदा पढ़ाया करे पर अनध्यायों में न पढ़ावे अनध्याय स्मृतियों के कहेहुये सब व पुराणों के कहेहुये प्रसिद्ध हैं १०८ महानवमी द्वादशी भरणी व अक्षय तृतीया को गुरु शिष्यों को न पढ़ावे १०९ व माघमास की सप्तमी को व मार्ग में भी अध्ययन न करनाचाहिये अध्यापन व भोजन स्नानकाल में न करना चाहिये ११० हितचाहनेवाला गृहस्थ विधिपूर्वक दान भी अवश्य कियाकरे दानों में सुवर्णदान गोदान व भूमिदान विशेषकरके १११ ये दान जो ब्राह्मणों को देताहै वह सब पापोंसे विनिर्मुक्त होके स्वर्गलोक में जाकर पूजित होता है ११२ मङ्गलाचार से संयुक्त होकर जो गृहस्थ पवित्र हो श्रद्धापूर्वक श्राद्ध करता है वह ब्रह्मा के वा ब्रह्म के परमपद को जाता है ११३ व नरसिंह के प्रसाद से अपनी जाति में उत्कर्षता को प्राप्त होता है न फिर ब्राह्मणों के

साथ अपनी जाति में से मुक्ति को पाता है ॥ ११४ ॥

चौपैया ॥

हे वाडव उत्तम निजकृति सत्तम शाश्वत धर्मसमूहा।
तुमसन हम गावा और सुनावा करि बहुविधि सों ऊहा ॥
यहि गृही जो करई हित चित धरई सो पावै हरिलोका।
यामहिं नहिं शंका दैकै डंका तहां बसत गतशोका ॥११५॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेगृहस्थधर्मनिरूपण
न्नामाष्टपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५८ ॥

उनसठवां अध्याय ॥

दो० उनसठयें अध्याय महँ, वानप्रस्थ सुधर्म्म।
कहेसकल मुनि मुनिन सों, जिन्हें सुने नहिं भर्म्म ॥ १ ॥

हारीत मुनि मुनियों से बोले कि हे महाभागो! इस के आगे अब वानप्रस्थ के लक्षण व सबधर्मों में अग्रन्य धर्म कहते हैं हमसे सुनो १ गृहस्थ जब पुत्र पौत्रों को देखले व अपने को भी वृद्ध देखे तो अपनी स्त्री पुत्र को सौंप आप अपने शिष्यों के साथ वनको चला जाय २ व वहां जटाकलाप चीर वस्त्र नख रोमादि धारण किये स्थित हो वैतानिक विधिसे हवनकरतारहै ३ वृक्षों के पत्तों से व मृत्तिका से उत्पन्न तिनीपसाढ़ी आदि मुन्यन्नों से वा कन्दमूल फलों से निरालस हो नित्यक्रिया करता रहै ४ तीनोंकालों में स्नानकरता हुआ सदा तीव्र तपस्याकरे कि तो पक्षभरके पीछे एक बार भोजनकरे वा मास भरके पीछे भोजन करके पराक्वव्रत करे ५ अथवा प्रतिदिन चौथे पहर में भोजनकरे वा अठयेंपहर में वा दिन के छठेकाल में

अथवा वायुभक्षण करके रहे ६ ग्रीष्म में पञ्चाग्नि ताप व वर्षा में विना आवरण बैठाहुआ अपने ऊपर सब जलले हेमन्त में कण्ठतक जल के भीतर में बैठे इस प्रकार तपकरता हुआ काल बितावे ७ इस प्रकार अपने कर्मों के भोग से अपनी शुद्धिकरके अग्नि को अपने में स्थापित करके मौनव्रत धारणकर वहां से उत्तर दिशा को चलाजाय ८ जबतक देहपात न हो तबतक वनमें वस कर मौनव्रत धारणकर तापसवेष बनाये रहै व अतीन्द्रिय ब्रह्म को स्मरणकरतारहै फिर ब्रह्मलोक में जाकर पूजित हो ॥ ९ ॥

चौपैया॥

जो इमि वनवासिकै तपमहँ लसिकै करिसमाधि विधि नीके।
श्री हरिको ध्यावै पाप नशावै शान्त करे मन ठीके॥
सो हरिपद पावै निजमन भावै बसै तहां चिरकाला।
वनबासिकधर्मा सकलसुकर्मा तुमसन कहा विशाला॥१०॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेवानप्रस्थधर्मो नामैकोनषष्टितमोऽध्यायः॥ ५९॥

साठवां अध्याय॥

दो० सठयें महँ यतिधर्म्म कह, मुनि सब मुनिन सुनाय।
जिन्हेंसुने सब जननको, यति सब बड़ो दिखाय॥१॥

हारीतजी बोले कि, इसके आगे सन्न्यासियों का उत्तम धर्म वर्णन करते हैं श्रद्धासे सन्न्यासी जिसका अनुष्ठान करके बन्धन से छूटजाता है १ इस प्रकार वानप्रस्थाश्रम में वन में बसकर सब पापों को भस्म करके विधि से सब कर्मों को छोड़कर चौथे यति आ-

श्रम को जाय २ जब इस सन्न्यासाश्रम को चलनेलगे तो ऋषियों को देवताओं को व अपने पितरों को तथा अपने लिये भी दिव्य यज्ञ दान श्राद्धादि देके व मनुष्यों को भी यथाशक्ति दान दे ३ व अग्नि की इष्टिकरके व प्राजापत्य इष्टि अर्थात् यज्ञ करके अग्नि को अपने आत्मा में स्थापितकरके मन्त्र पढ़ता हुआ ब्राह्मण सन्न्यासी होजाय ४ तब से फिर पुत्रादिकों के सुख व उनमें लोभ छोड़ दे व सब प्राणियों के अभय करनेके लिये भूमि पर जलदानकरे ५ व एक बांस का दण्ड वल्कलसहित अच्छा चीकना व समान पोढ़ोंवाला कृष्ण वृषभ के बालों से वेष्टित चार अंगुलतक हो उसे ग्रहणकरे ६ अन्यकाष्ठ का दण्ड आसुर कहाता है व बहुत बड़ा व गोला भी आसुरही कहाता है इससे [illegible] ग्रन्थियों से युक्त दण्ड धारण करे व वस्त्र से छानकर जल सदा पानकरे ७ व तीनगांठियों से युक्त दण्ड तथा जल से धोया हुआ दण्ड हो मन्त्र पढ़के दक्षिणहाथ से दण्ड को ग्रहणकरे ८ व एक वस्त्र भी कि तो रेशमी वा कुश की जड़ों का वा कपासके ही सूत का लिये रहे उसीमें भिक्षा बांधे वह भिक्षा कमल के आकार के कितो पात्रमें लियाकरे ९ भिक्षा कितो छःमुट्ठी कि तो पांचमुट्ठी ले अधिक न ले सोभी मन्त्रही पढ़कर भिक्षा ग्रहणकरे इसकेलिये पात्र तो वही कमण्डलु उस के पास होगा वस्त्र ऊपरसे लपेटा रहेगा १० एक आसन भी काष्ठ का अपनेलिये रखसक्ता है वह अच्छीतरह बराबर व गोला हो यह आसन शौचकरने के लिये

ऋषियों ने कल्पित किया है ११ एक कौपीन व एक
अचला ऊपर से लपेटने के लिये होना चाहिये व शीत
निवारण करनेवाली एक कन्था भी चाहिये खराऊँभी
लिये रहै बस और किसी बस्तु का संग्रह न करे १२
इतने सन्न्यासी के धर्मसे लक्षणकहे सो इनको ग्रहण
कर व अन्य सब पदार्थोंका परित्याग करके किसी उत्तम
तीर्थ को चलाजाय १३ वहां स्नानकर विधिपूर्वक आ-
चमनकरके जलयुक्त वस्त्रसे मन्त्रपढ़के सूर्य का तर्पण
करके फिर नमस्कारकरे १४ फिर पूर्वको मुखकर बैठके
तीन प्राणायाम करे व यथाशक्ति गायत्री का जपकरके
परमपद का ध्यानकरे १५ अपनी स्थिति के लिये नित्य
भिक्षा मांग लाया करे सो भी सन्ध्याकाल में सन्न्यासी
ब्राह्मणों के द्वारपर विचरे १६ जितने से भोजन होजाय
बस उतनाही अन्न ले अधिक नहीं वह अन्न ले जल से
पात्र को शुद्धकर व आप आचमनकर संयम से १७
सूर्यादि देवताओं को निवेदनकरके व जल से प्रोक्षण
करके पत्तों के दोने में वा पत्रावली में धरके मौन होकर
सन्न्यासी भोजनकरे १८ परन्तु बरगद पीपल कुम्भी
तिन्दुक कचनार व कञ्जी के पत्तों में कभी न भोजन
करे १९ भोजन करके हाथ पैर मुख धोय आचमन करके
सूर्यनारायणका उपस्थानकर फिर जप ध्यान इतिहासा-
दिकोंसे यति शेष अपना दिन बितावे २० जो सन्न्यासी
कांस्य के पात्र में भोजन करते हैं वे सब मांसभक्षी
कहाते हैं कांस्य का जो पात्र है वह गृहस्थही के लिये
है और किसी आश्रमवाले के लिये नहीं है व कांस्य

पात्र में भोजन करनेवाला सन्न्यासी फिर सब पापोंको प्राप्त होताहै २१ भोजन कियेहुये पात्रमें मन्त्रसे पवित्र करके यति नित्य भोजन करसक्ता है उसका वह पात्र दूषित नहीं होता बरन यज्ञपात्र के समान वह पवित्र रहता है २२ सन्ध्या करके फिर गृहादिकों में जहां हो रात्रि को शयन कररहे हृदय कमल में नारायण हरिका ध्यान करतारहै २३ ऐसा करने से उसपद को प्राप्त होता है जहांसे कि फिर कभी निवृत्तही नहीं होता है॥ २४॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेयतिधर्मोनाम
षष्टितमोऽध्यायः॥ ६०॥

इकसठवां अध्याय॥

दो० इकसठयेंमहँमुनिकह्यो, योगशास्त्रकेलक्ष।
जिन्हेंकियेसबनरनके, खुलतहृदयकेपक्ष॥ १॥

हारीतजी सब मुनियों से बोले कि वर्णों के व आश्रमों के धर्म लक्षण तो हमने कहे जिससे ब्राह्मणादिक स्वर्ग व मोक्ष पासक्ते हैं १ अब संक्षेपरीति से योगशास्त्र का उत्तमसार कहते हैं जिसके अभ्यास के बलसे मुक्ति की इच्छा कियेहुये लोग मोक्षपाते हैं २ योगाभ्यास करनेवाले पुरुष के पाप इसीलोक में नष्ट होजाते हैं इससे योग पर होके क्रियाओं के पीछे योगाभ्यास करने में ध्यान दियाकरे ३ प्राणायाम से यमकरे व प्राणायामही से इन्द्रियों को वश में करे व धारणाओं से फिर दुर्द्धर्ष अपने मन को वश में लावे ४ तदनन्तर एक सबका कारण आनन्दबोध एकीभूत आमयरहित सूक्ष्मसे भी सूक्ष्म अच्युत गदाधर का

ध्यानकरे ५ अपने हृदयकमलपर स्थित तपाये सुवर्ण के समान प्रकाशित एकान्त में बैठकर अपने आत्मा परमेश्वर का ध्यानकरे ६ जो सब प्राणियों के चित्त के जाननेवालाहै व जो सबके हृदय में टिका है जो सब के उत्पन्नकरने को अरणिरूप है सो मैं हूँ ऐसी चिन्तना करे ७ जबतक वह अपने सम्मुख न देखपड़े तबतक ध्यान का करना कहा है ध्यानके पीछे श्रुतियों व स्मृतियों के कहेहुये कर्म करतारहै ८ जैसे अश्व विना रथ के व जैसे रथ विना घोड़ों का ऐसेही तप व विद्या तपस्वी के लिये हैं अर्थात् जैसे विना रथके घोड़े नहीं कामदेते न विना घोड़ों के रथ ऐसेही न विना तप के विद्या कामदेती है न विना विद्याके तप सिद्ध होता है ९ जैसे अन्न मधु से संयुक्त होने से व मधु से अन्न से संयुक्त हो भोजन दिव्य होजाता है ऐसेही जब विद्या व तप दोनों एकमें मिलजातेहैं तो महौषध होजाते हैं १० जैसे पक्षी दोनों पंखोंसेही उड़ते हैं वैसेही ज्ञान व कर्म दोनों से शाश्वतब्रह्म प्राप्तहोता है ११ विद्या व तपस्या दोनों से युक्त ब्राह्मण योगाभ्यास में तत्पर हो देहके द्वन्द्व छोड़के शीघ्र बन्धन से छूटजाता है १२ जबतक देवयानमार्गपर होके परमपद को जीव नहीं जाता तबतक देह के चिह्नों का विनाश कहीं नहीं होता १३ हे ब्राह्मणो! हमने संक्षेपसे वर्ण आश्रम के धर्मों का विभाग कहा जोकि सनातन से चला-आता है १४ मार्कण्डेयजी राजा सहस्रानीकसे बोले कि स्वर्ग व मोक्ष के फलदेनेवाले इसधर्मको जन

ऋषिलोग हारीतजीके प्रणामकर आनन्दित हो अपने २ स्थान को चलेगये १५ हारीतमुनि के मुख से निकलाहुआ यह धर्मशास्त्र सुन जो कोई इसके अनुसार धर्म करता है वह परमगति को पाता है १६ (मुखज) ब्राह्मण का जो कर्म व जो (बाहुज) क्षत्रिय का कर्म व (ऊरुज) वैश्य का जो कर्म व (पादज) शूद्र का जो कर्म हे नृप १७ अपना २ कर्म करते हुये ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र सद्गति को प्राप्तहोते हैं व अपने कर्म के जो विरुद्ध कर्म करता है वह तुरन्त पतित हो नरक को जाता है १८ जो कर्म जिसके लिये कहा है वह उन २ पुरुषों से प्रतिष्ठित है इससे यदि कोई आपत्काल न पड़े तो अपना २ धर्म कर्म सदा नित्यकरे १९ हे राजेन्द्र! चारोवर्ण व चारो आश्रम अपने विमल धर्म विना वे परमगति को नहीं जाते २० जैसे अपना धर्म करने से नरसिंहजी प्रसन्न होते हैं वैसेही वर्ण व आश्रम के धर्म से नरसिंहजी की पूजाकरे २१ उत्पन्न वैराग्य के बलसे योगाभ्यास से व ध्यान से व अपने वर्णाश्रम के अनुसार क्रिया करने से सदा चैतन्य सुख सत्यात्मक ब्रह्मरूप श्रीविष्णु के पद को देह छोड़के पुरुष जाता है ॥ २२ ॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेयोगशास्त्रनिरूपणन्नामैकषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६१ ॥

बासठवां अध्याय ॥

दो० बासठयें अध्याय महँ, हरि पूजन प्रकार।
वर्णनकीनमुनीशसो, कहासहितविस्तार ॥ १ ॥

मार्कण्डेयजी बोले कि वर्णों के व आश्रमों के लक्षण तो हमने तुमसे कहे हे राजेन्द्र! फिर कहो तुम्हारे क्या सुनने की इच्छा है १ राजा सहस्रानीक बोले कि आपने कहा कि स्नानकरके देवेश अच्युत की पूजा घर में जाके करे सो हे विप्रेन्द्र! वह पूजा किसप्रकार से कीजाय २ जिनमन्त्रों से जिनस्थानों में श्रीविष्णु की पूजा कीजाती है वे मन्त्र व वे स्थान हमसे कहिये हे महामुने ३ मार्कण्डेयजी बोले कि अमिततेजस्वी श्रीविष्णु भगवान् के पूजन का विधान हम कहेंगे जिसको करके सब मुनिलोग मोक्षपद को प्राप्त हों ४ कर्मकाण्ड क्रिया करनेवालों का देव अग्नि में रहता है व ज्ञानी पण्डितों का देव मनमें रहताहै अल्पबुद्धियों का देव प्रतिमाओं में रहता व योगियों के हृदय में हरिदेव रहते हैं ५ इससे अग्नि हृदय सूर्य स्थण्डिल आठप्रकार की प्रतिमा इनमें श्रीहरिकी पूजा ऋषियों ने कही है ६ क्योंकि वह परमेश्वर सबको उत्पन्न कराने वाला व सर्वमय है इससे स्थण्डिलादि सबकहीं विद्यमान है चाहे जहां उसकी पूजा करे आनुष्टुभसूक्त के विष्णुजी तो देवता हैं ७ व जगत् के बीज जो पुरुष नारायणजी हैं वही इसके ऋषि हैं इससे जो कोई पुरुषसूक्त से पुष्पदेता है ८ उसने जानो सचराचर जगत् की पूजा करली इस लिये पुरुषसूक्त की पहिली ऋचा से तो श्रीहरिका आवाहनकरे ९ व दूसरी ऋचा से आसनदे व तीसरी से पाद्य चौथी से अर्घ देनाचाहिये व पांचवीं से आचमन १० छठीं से स्नान करावे

सातवीं से वस्त्र धारणकरावे आठवीं से यज्ञोपवीत पहिनावे व नववीं ऋचा से चन्दन चढ़ावे ११ दशवीं से पुष्पदान करे ग्यारहवींसे धूपदे बारहवींसे दीपदान करे व तेरहवीं से पूजन १२ चौदहवीं से स्तुति करके पन्द्रहवीं से प्रदक्षिणाकरे सोलहवीं से उद्वासनकरे शेष कर्म पूर्वकेही समानकरे १३ जो कोई स्नान वस्त्र नैवेद्य आचमन प्रतिदिन उसके मन्त्रसे देता है वह छःमासों में सिद्ध होजाता है १४ व जो वर्षपर्यन्त नित्य स्नानादि कराता है वह सायुज्यमुक्ति पाता है अग्नि में खीर शष्कुली आदिसे श्रीहरि की पूजा करनी चाहिये जलमें पुष्पों से हृदय में ध्यान करने से १५ व सूर्यमण्डलमें जपसे पण्डितलोग श्रीहरिकी पूजाकरतेहैं प्रथम आदित्यमण्डल में शंख चक्र गदा हाथोंमें लिये अनामय देवदेव दिव्यरूप श्रीविष्णु का ध्यान करके तब उपासना करते हैं॥ १६ ॥

हरिगीतिका ॥

ध्यायिय सदा रवि विम्ब मण्डल मध्यवर्त्ति नरायणम्
कमलासनस्थ किरीट कुण्डल हार केयुर धारणम्।
धृत शंख चक्र सुवर्णमय वपु सकल अङ्ग विभूषितम्।
यहध्यानरविगतरामजीको सर्वभाँतिअदूषितम॥ १। १७॥
यह सूक्त केवलपढ़त प्रतिदिन रविहि हरिकरि मानई।
सो सर्वपाप विमुक्त ह्वै श्रीविष्णुपदहि सिधारई॥
जासों रमाधव तुष्टिकारक होत सो नर है सही।
यासोंनअचरजकरिययह मुनिबातहमसाँचीकही॥ २। १८॥
बिन मूल्य पत्र रु पुष्प फल जल मिलत सबकहँ देखिये।

इनसों भलीविधि भक्तिसों हरि पूजि अनत न पेखिये॥
जब भक्तिही सों मिलत पुरुष पुराण पत्रादिक दिये।
तबमुक्तिसाधनअर्थ किमिनहिं यत्नकीजैनिजहिये॥ ३।१६॥
इमि पुरुष पूर्ण पुराण श्रीहरि यजन विधि तुमसों कह्यो।
यहि रीतिसों करि प्रीति पूजन करहु फल पैहो महा॥
यदि होय इष्ट प्रविष्ट होनो हरि गरिष्ठ सुलोक में।
तोकरहुनितअर्चनमहीपति लहहुसुगतिअशोक में॥४।२०॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेश्रीविष्णुपूजनविधिर्नाम
द्विषष्टितमोऽध्यायः॥ ६२॥

तिरसठवां अध्याय॥

दो० तिरसठयें महँ हरियजन, अष्टाक्षर सों आप।
मन्त्रमहातम हितसुरप, धनद विभीषण साप॥१॥
जिमितृणबिन्दु मुनीशकर, शापलह्यो देवेन्द्र।
तासों छो है जपि भये, अष्टाक्षर पुरुषेन्द्र॥२॥

राजासहस्रानीकजीने मार्कण्डेयजी से फिर प्रश्न किया कि हे ब्रह्मन्! तुमने सत्य कहा वैदिक परमविधि है जो कि देवाधिदेव श्रीविष्णुजी के पूजन के विधान में हम से वर्णित किया है १ परन्तु हे ब्रह्मन्! इस विधि से तो वैदिकलोगही मधुसूदनजीकी पूजा करते हैं और कोई नहीं करते इससे ऐसा पूजन का विधान कहिये जो सब जनों का हितकारी हो २ मार्कण्डेयजी बोले कि अष्टाक्षर मन्त्रसेही अनामय अच्युत नरसिंहजी की पूजा नित्य चन्दन पुष्पादिकों से मनुष्यकरे ३ क्योंकि हे राजन्! अष्टाक्षर मन्त्र सर्वपाप हरनेमें उत्कृष्ट है व समस्त यज्ञों का फलदेता है व सबशान्तिकरता तथा

शुभदायक है ४ "ॐ नमो नारायणाय" बस इसी मन्त्र से गन्ध पुष्पादि सब निवेदनकरे क्योंकि इसमन्त्र से पूजितहोने पर उसीक्षण श्रीनारायणदेव प्रसन्न होजाते हैं ५ उसको बहुत मन्त्रोंसे क्या है व उसे बहुत व्रतों से क्या है "ॐ नमो नारायणाय" यहीमन्त्र सर्वार्थसाधक है ६ पवित्र हो एकाग्रचित्त कर इसमन्त्र को जो जपे वह सब पापों से छूटकर विष्णुजी की सायुज्य मुक्ति पावे ७ क्योंकि यह विष्णुभगवान्‌जी का पूजन सब तीर्थों का फल देता है व सब तीर्थोंसे श्रेष्ठ है व एकाग्र चित्त होके करने से सब यज्ञों का फल देता है ८ इससे हे नृप! प्रतिमादिकों में इसीसे पूजनकरो व हे नृप! मुख्य ब्राह्मणों को विधिपूर्वक दान देतेरहो ९ हे नृपश्रेष्ठ! ऐसा करनेपर नरसिंहजी के प्रसाद से पुरुष श्रीविष्णुजी के तेजको प्राप्तहोता है जिसे कि मुक्तिकी इच्छाकियेहुये लोग चाहते हैं १० हे राजन्! पूर्व समय का वृत्तान्त है कि अपधर्म करने के कारण तृणबिन्दु मुनि के शाप से इन्द्र स्त्री का स्वरूप होगये थे पर अष्टाक्षर मन्त्र के जपने से फिर उनका स्त्रीत्व जातारहा ११ यह सुन राजा सहस्रानीकजी बोले कि हे भृगुवजी! इन्द्र का पापमोचन वृत्त यह हम से कहो उन्होंने कौनसा अपधर्म किया था व स्त्रीत्व को वे कैसे प्राप्तहुये इसका कारण हमसे कहो १२ मार्कण्डेयजी बोले कि हे राजन्! यह बड़े कौतूहलसे युक्त बड़ाभारी आख्यान है सुनो इसके पढ़ने सुननेवालों को विष्णु का भक्त यह करता है १३ पूर्वसमय में

देवताओंका राज्य करतेहुये इन्द्रको बाहर की वस्तुओं में अपने आप वैराग्य होगया १४ तब इन्द्र का स्वभाव राज्यों में व नाना प्रकार के भोगों से विषम होगया क्योंकि उन्होंने जो चिन्तना की तो यह सब उनको कुछ न समझपड़ा सो कैसे समझपड़ता जिनका मन विरागी होजाता है उनको स्वर्ग का भी राज्य कुछभी नहीं दिखाईदेता १५ क्योंकि राज्य का सारांश विषयों का भोगकरना है बस भोग के अन्त में फिर कुछ नहीं है इसबात का विचारकर मुनिलोग निरन्तर मोक्षही के अधिकारकी परिचिन्तना करते हैं १६ तपस्या की प्रवृत्ति सदा भोगही करनेके लिये होतीहै व भोगकरने के पीछे तपस्या नष्टहोजाती है व जोलोग मैत्री आदि के संयोग से पराङ्मुख रहते हैं व विमुक्तिही की सेवा करते हैं वे न तपही करते न भोगही करतेहैं १७ ऐसा विचारकर देवराज किंकिणीआदि से युक्त विमानपर चढ़ महादेवजी की आराधना करनेकेलिये सब कामों से विमुक्त हो कैलास पर्वतपर गये १८ एक दिन इन्द्र मानससरके किनारेपर गये वहां उन्होंने पार्वतीजी के युगलचरण पूजतीहुई कुबेरकी स्त्री को काम महारथ की ध्वजाकेही समान देखा १९ जिसके शरीर का रंग तपाये हुये पक्के सुवर्ण के समान चमकता था नेत्र ऐसे विशाल थे कि कानों के निकटतक पहुँचगये थे व इतने सूक्ष्म वस्त्र धारणकियेथी कि सब अंग चमचमाते हुये दिखाईदेतेथे जैसे कि कुहरके भीतर से निकलती हुई चन्द्रलेखा का प्रकाश होताहै २० उसको सह[illegible]त्रों

से यथेच्छ देखके कामसे मोहितमति इन्द्र उस समय तो उसके समीप न गये वहांसे दूरमार्गही में उनका गृह था उसमें जाय बनाय अच्छीतरह निश्चयकर विषय करने की अभिलाषा से इन्द्र वहां थँभरहे २१ व विचारनेलगे कि प्रथम तो सुन्दर कुल में जन्मपाना श्रेष्ठ है फिर सब अंग सुन्दर शरीर का रूप होना श्रेष्ठ है फिर ऐसा होनेपर धनहोना दुर्लभ है फिर धन की स्वामिता तो बड़े पुण्य से मिलती है २२ सो हमने स्वर्ग की स्वामिता पाई तथापि भोग करने के लिये भाग्य नहींहै क्योंकि उस राज्य को छोड़ विमुक्ति की कामनासे अब यहां आके बैठे हैं बस चित्त में यह दुर्म्मति आके टिकी है और कुछ नहीं २३ यद्यपि इस राज्यादिक से मोक्ष का मोह होताहै पर राज्य होनेपर मोक्ष का कारणही क्याहै यह तो वैसा विचारहै कि किसी के द्वार पर पक्के अन्न से युक्त खेतलगाहो व वह उसे छोड़ जाके वनमें खेती करे २४ क्योंकि जो मनुष्य संसार के दुःखों से उपहतहोते व कुछ भी करने में समर्थ नहींहोते बनाय कर्म नहीं करसक्के इससे भाग्य वर्जितहैं बस वेही महामूढ़ मोक्ष की इच्छा करतेहैं २५ यद्यपि बड़े बुद्धिमान् व वीर थे पर यह विचारकर कुबेर की स्त्री के रूपसे मोहितमन हो अपने कुल का आचार छोड़ धैर्य का परित्यागकर देवताओं के चक्रवर्ती इन्द्रने काम का स्मरणकिया २६ तब अतिव्याकुल चित्तवृत्ति काम बेचारा धीरे २ वहां आया क्योंकि उसी कैलासपर पूर्वसमयमें महादेवजीने उसके शरीर का

नाशकिया था इससे ऐसे धैर्य शिवजीके स्थानपर ऐसा कौन है जो विशंक होके जाय २७ व आके काम बोला कि हे नाथ ! आज्ञा दीजिये क्या कार्य है आपका शत्रु-भूत कौन है शीघ्रही आज्ञा दीजिये विलम्ब न कीजिये उसका अपवाद अभी करताहूँ २८ काम का अति मनोहर वचन सुनके इन्द्रका मन बहुत सन्तुष्ट हुआ व अपना अर्थ सिद्धजानकर वे बहुतही शीघ्र हँसके वचन बोले २९ कि हे मार ! हे काम ! जबसे तुम अ-नंग होगयेहो तबसे तुमने महादेवको भी जब अर्द्ध शरीरमात्र करदिया है तो लोक में फिर और कौन तु-म्हारे बाण का आघात सहसक्ताहै ३० इससे यह जो पार्वतीके पूजनमें एकाग्रचित्तभी लगायेहुई हमारे चित्त को यहां मोहित करतीहै हे अनंग ! इस बड़े २ लो-चनोंवाली को ऐसाकरो कि वह आप आके हमारे अंगों का संगकरे ३१ जब अपने कार्य के लिये बड़े गौरवसे इन्द्र ने कामसे ऐसा कहा तो उसने अपने चापपर पुष्प का बाण चढ़ाय विमोहनास्त्र का स्मरण किया ३२ ऐसा करतेही काम से मोहित हो वह स्त्री पूजाकरना छोड़ इन्द्र के पास आके हँसनेलगी भला कहो ऐसा कौन है जो काम के धन्वा का शब्द सह-सके ३३ तब इन्द्र उस स्त्री से यह वचन बोले कि हे चञ्चलनेत्रे ! तुम कौन हो जोकि पुरुषों के मनों को जानो मोहितही करातीहो कहो किस पुण्यात्माकी प्राणप्यारी हो ३४ जब इन्द्र ने ऐसा कहा तो मद से विह्वलांगी रोमांच होने के कारण पसीनेसे भीग के कांपतीहुई

कामके बाण से व्याकुलचित्त वह स्त्री गद्गदवाणी से धीरेसे यह वचन बोली कि ३५ मैं यक्ष की तो कन्या हूँ व कुबेर की स्त्री हूँ यहां पार्वती की पूजा के लिये आई थी कहिये तुम्हारा कौन कार्य है हे नाथ! कहो कामरूप तुम कौन हो जो यहां बैठे हो ३६ इन्द्र बोले तुम आओ हमको भजो व शीघ्र बहुत दिनोंतक हमारे अंगों की प्रीतिकरो तुम्हारे विना हमको अपना जीवन भी कुछ नहीं है व देवताओं का राज्य भी कुछ नहीं है ३७ जब इन्द्र ने ऐसे मधुर वचन कहे तो कन्दर्पसे सन्तापित मनोहर देहवाली वह कुबेर की स्त्री विमान पर चढ़के इन्द्र के गलेमें लपटगई ३८ व इन्द्र उसके संग शीघ्र मन्दराचल की कन्दराओंमें चलेगये जिनमें कि देवता असुर कोई कुछ देखही नहीं सक्के थे व विचित्ररत्नों के अंकुरों से प्रकाशित थीं ३९ वहां जाय उसके संग इन्द्रने अच्छी तरह भोगकिया क्योंकि उनका उदार वीर्य था व देवताओं के ऐश्वर्यसे उसका आदर करनेलगे उस विहार को क्या वर्णन करें जिसमें कि चतुरता के निधि इन्द्र ने सोभी कामार्त्त हो अपने हाथ से फूलों की शय्या बनाई ४० व कामभोग में बड़े चतुर इन्द्र भोगकरने से बनाय कृतार्थ हुये व पराई स्त्री के संग के भोगको उन्होंने मोक्षसे भी अधिक रसीला समझा ४१ व जो और स्त्रियां उस चित्रसेना नाम कुबेर की स्त्री के संग आई थीं वे सब लौटकर मारे सम्भ्रम के जाय कुबेरजी से बोलीं ४२ उस बात को सुन कुछेक स्त्रियों को विमानपर चढ़ाकर कुबेर वहां को

गये व सब दिशाओं में अपनी स्त्रीको ढूँढ़नेलगे जिसे
कि उनके मतसे कोई चोर पकड़लेगया था ४३ उस
चोर के वचनभी उन्होंने सुनेथे पर विदित न हुआ
इससे विष के तुल्य उस वचन के सुननेसे कुवेर का
मुख लाल होगया फिर कुछ बोल न सके अग्नि के
जलेहुये वृक्ष के समान सारे शोक के काले होगये ४४
तब चित्रसेना के संगवाली स्त्रियों ने जाके कुबेर के
मन्त्री कण्ठकुब्ज से कहा कि किसी प्रकार कुबेरजी
का मोह मिटाओ तब उनका मोह मिटाने को उनका
मन्त्री कण्ठकुब्ज वहां आया ४५ उसको आया हुआ
सुनके कुबेरने नेत्रखोले व देखके वचन कहा कि यद्यपि
उनका मन कुछ स्वस्थ होगया था पर ऊर्ध्वसांसें लेते
हुये मन को अति दीनकरके बोले कि ४६ युवावस्था
वही है जिसमें युवती का विनोदहो व धन वहीहै जो
अपने लोगों के काम में आवे जीवन वही है जिससे
सुन्दर धर्म कियाजाय स्वामित्व उसी का नाम है जिस
में दुष्टों को दण्ड दियाजाय ४७ मेरे धन को धिक्कार
है व बड़े भारी गुह्यकों के राज्य को धिक्कार है अब मैं
अग्नि में प्रवेश करता हूँ क्योंकि जो मृतक होजाते हैं
उनका फिर कुछ भी निरादर नहीं होता ४८ मैं पास
लेटाहीरहा व वहां से उठ तड़ागपर पार्वती के पूजने
के लिये कहकर किसी की बुलाई हुई मेरी स्त्री चलीगई
अब हम नहीं जानते कि जिसने बुलालिया है उसको
कुछ अपनी मृत्यु का भय है वा नहीं ४९ यह सुन वह
कण्ठकुब्ज मन्त्री अपने स्वामी का मोह मिटाने के

लिये बोला कि हे नाथ ! सुनिये स्त्री के वियोग से अपने शरीर का नाशकरना योग्य नहीं है ५० देखो एक ही स्त्री रामचन्द्रजी के थी उसे राक्षस हरलेगया पर वे भी मृतक नहीं होगये व तुम्हारे तो अनेकों स्त्रियां हैं फिर चित्तमें क्या विषाद करते हो ५१ शोक छोड़ विक्रम करने में बुद्धिकरो हे यक्षराज ! धैर्य को धारण करो साधुलोग बहुत नहीं बकते मनमें क्रोध करते हैं व बाहर से निरादर को सहते हैं ५२ व कियेहुये कार्य को गुरु करके दिखाते हैं व हे कुबेरजी ! तुम तो सहायवान् हो फिर भी कातर होते हो क्योंकि तुम्हारे छोटे भाई विभीषण इससमय में तुम्हारी सहायता करेंगे ५३ यह बात सुनके कुबेर बोले कि विभीषण हमारे प्रतिपक्षियों में हैं वे अपने धन के भाग को नहीं भूलते हम से हिस्सा लियाचाहते हैं इससे इन्द्र के वज्र से भी निष्ठुरस्वभाववाले दुर्जनलोग होते हैं उनके साथ उपकारभी करो पर वे कभी प्रसन्न नहीं होते ५४ फिर अपने गोत्रवालेलोग तो न उपकारों से न गुणों से न सौहृदोंसे कभी प्रसन्नमन होते हैं तब कण्ठकुब्ज बोला कि हे धनाधिनाथ ! तुमने योग्य वचन कहा ५५ गोत्रीलोग विरुद्ध होनेपर आपस में एक दूसरे को मारडालते हैं परन्तु जब और किसीसे उनका निरादर नहीं होता तभी परस्पर में युद्धकरते हैं पर अन्य किसी का अनादर नहीं सहते अर्थात् जब कोई उनके गोत्रवाले को निरादरित करता है तो वे एक होजाते हैं जैसे कि उष्णभी जल तृणोंको नहीं जलाता क्योंकि

तृण जलकेही पालित होते हैं इससे सूर्यादि तापसे
उष्ण जलभी तृणों की रक्षाही करता है ५६ इससे हे
धनाधिनाथ! अतिवेगसे विभीषण के पास चलिये
अपने बाहुओंके बलसे उत्पन्न कियेहुये धनके भोगने
वाले पुरुषों को अपने बन्धुवर्गों के संग कौन विरोध
है ५७ जब इस प्रकार कण्ठकुब्ज मन्त्री ने कहा तो
विचार करतेहुये कुबेर तुरन्त विभीषण के पास को
चलेगये ५८ तब अपने बड़े भाई को आयेहुये सुन
लङ्का के पति विभीषणजी बड़े विनय के साथ तुरन्त
आये ५९ व अपने भाई को उदासीन मन देख आप
सन्तप्तमन हो विभीषणजी यह बड़ा वचन बोले कि ६०
हे यक्षेश! दुःखी क्यों हो तुम्हारे चित्तमें क्या कष्ट है
हमसे कहिये हम निश्चय करने के पीछे अवश्य वह
कष्ट मिटावेंगे ६१ तब एकान्त में लेजाकर विभीषणजी
से कुबेर ने अपना दुःख निवेदन किया कुबेर बोले कि
हे भाई! नहीं जानते कोई पकड़लेगया धों अपने से
कहीं चलीगई अथवा किसी हमारे वैरीने मारडाला ६२
भ्रातः! इस समय हम अपनी चित्रसेना स्त्री को नहीं
देखते सो भाई यह स्त्री के हेतुसे उत्पन्न हमको बड़ा
भारी कष्ट है ६३ अब बिना अपनी प्राणप्रियाको पाये
प्राणों को मारडालेंगे विभीषणजी बोले कि चाहे जहां
हो तुम्हारी स्त्री को हम लेआवेंगे ६४ हे नाथ! हम
लोगों के तृणोंके हरने में आजकल कौन समर्थहै तब
विभीषणजी ने नाड़ीजंघानाम राक्षसीसे ६५ अत्यन्त
आज्ञा के साथ बार २ कहा क्योंकि वह नाना प्रकार

की माया जानती थी यह कि कुबेर भाई की जो चित्र-
सेनानाम भार्या है ६६ वह मानससर के तीरपर थी
उसे कौन हरलेगया जाके इन्द्रादिकों के घरों में देखके
उसे जानो ६७ हे राजन्! तदनन्तर वह राक्षसी माया-
मयी शरीर धारणकर स्वर्गको गई व इन्द्रादिकों के
मन्दिरों में ६८ देखनेलगी कि वह जिसको अपनी
दृष्टिसे क्षणभरभी देखे तो पत्थरभी मोहित होजाय व
रूप तो उसने ऐसा अपना बनाया था कि उसके समान
चराचर जगत् में किसी का रूप थाही नहीं ६९ व
उसी समय में हे राजन्! इन्द्रभी चित्रसेना के भेजेहुये
मन्दराचलपर से बड़ी शीघ्रता के साथ वहां आये ७०
क्योंकि उसने नन्दनवन के पुष्प लेनेकेलिये भेजाथा
जब इन्द्र आये तो अपने स्थानमें उन्होंने उस सूक्ष्म
अंगवाली राक्षसी स्त्री को देखा ७१ उसे अतीव रूप से
सम्पन्न व गीतों के गाने में परायण देख देवराज काम
के बशीभूत हुये ७२ व देवताओंके वैद्य अश्विनीकुमार
को देवराजजी ने उसके पास को भेजा कि उसे यहां
क्रीड़ाकरने के जनानेमन्दिर में लिवालाओ ७३ तब
अश्विनीकुमार उसके पास जाके कहनेलगे कि हे सूक्ष्म
अंगोंवाली! चल इन्द्र के समीपपहुँच ७४ जब दोनों
ने ऐसा कहा तो वह मधुरवचन बोली नाड़ीजंघा
ने कहा कि जब इन्द्र आप हमारे पास आवेंगे ७५
तो हम उनका वचन करेंगी यों हम किसी प्रकार न
करेंगी उन दोनोंने इन्द्रके पास आकर उसका वचन
कहा ७६ इन्द्र कामातुर तो थेही झट उसके पास

जाके बोले हे तन्वङ्गि ! आज्ञा दीजिये कौन काम ७६
तुम्हारा करें हम तो सब प्रकार से तुम्हारे दासभूत हैं
जो मांगो हम वही कहदें कि देंगे ७७ यह सुन ७७
सूक्ष्मांगी राक्षसी बोली कि हे नाथ ! यदि हमारा
मांगा दोगे इसमें संशय न हो तो फिर हमभी तुम्हारे
बशमें होंगी इसमें भी संशय नहीं है ७८ आज तुम
हमको अपनी सब स्त्रियां दिखाओ हमारे रूप के स-
मान सुन्दरी स्त्री तुम्हारे है वा नहीं ७९ जब उसने
ऐसाकहा तो इन्द्र फिर उससे बोले कि हे देवि ! तुम
को हम अपनी सब स्त्रियों का समूह दिखावेंगे ८०
इतना कह इन्द्र ने अपनी सब स्त्रियों को दिखाकर
फिर उससे कहा कि कोई अभी गुप्तभी हमारे स्त्री
है ८१ सो एक युवती को छोड़ हमने सबस्त्रियां तुमको
दिखादीं पर वह स्त्री मन्दिरहीमें है परन्तु देवता वा दैत्यों
को नहीं दिखाई देती ८२ उसे हम तुमको दिखावेंगे
पर तुम किसी से न कहना तब उसको साथ ले इन्द्र
आकाशमार्ग होके मन्दराचल पर को गये ८३ जबसूर्य
सम प्रकाशित बिमानपर चढ़ेहुये इन्द्र उसके संग जाते
थे तो आकाशमार्ग में नारदजी के भी दर्शनहुये ८४
उन नारदजीको देखके बीर इन्द्र लज्जित भी हुये परन्तु
नमस्कार करके बड़े ऊँचेस्वरसे बोले कि महामुनिजी !
कहां जातेहो तब आशीर्वाद कहके मुनिराज देवराज
से बोले कि ८५ हे देवराज ! हम मानससरमें स्नान
करनेके लिये जाते हैं तुम सुखी होओ यह कह उस स्त्री
से कहा कि नाड़ीजंघ महात्मा रा॰ ... कहां

कुशल है ८६ व तेरे भाई विभीषण सब प्रकार से कुशली हैं जब मुनि ने ऐसा कहा तो उसका मुख काला होगया ८७ व देवराजभी विस्मित हुये कि इस दुष्टा ने हमको छलितकिया व नारद मानस में स्नानकरने के लिये कैलास पर चलेगये ८८ इन्द्र उसके मारने के विचार से मन्दराचल को चलेजातेथे कि बीच में महात्मा तृणबिन्दु मुनि का आश्रममिला ८९ एकक्षण भर वहां विश्रामकर उस राक्षसी के केशपकड़कर नाड़ीजंघा निशाचरी के मारडालने की इच्छा इन्द्रनेकी ९० तबतक कहीं से तृणबिन्दुजी अपने आश्रमपर आगये व हे राजन्! इन्द्रकी पकड़ीहुई वह राक्षसी बड़ी पुकार के साथ रोदनकररही थी ९१ व कहतीथी कि इससमय मारीजातीहुई मुझको कोई पुण्यात्मा बचावे तब आके महातपस्वी तृणबिन्दुजी ९२ बोले कि इस स्त्री को वनमें रोदन करतीहुई छोड़दे मुनिजी ऐसा बकते हीथे कि इन्द्रने उस राक्षसी को ९३ बड़े कोप के साथ चित्तकरके वज्र से मारडाला व फिर २ इन्द्र की ओर देखतेहुये मुनि ने बड़ा कोपकरके यह कहा कि ९४ हे दुष्ट! जिससे कि इस स्त्री को तुमने हमारे तपोबन में मारडाला है इससे हमारे शापसे निश्चय है कि तुम स्त्री होजाओगे ९५ यह सुन इन्द्र बोले कि हे नाथ! यह महादुष्टा राक्षसी हमने मारी है व हम देवताओं के स्वामी इन्द्र हैं इससे इस समय शाप न दीजिये ९६ तब तृणबिन्दु मुनि बोले कि हमारे इस तपोवन में बहुतसे दुष्ट रहते हैं व बहुत साधु भी रहते हैं पर हमें

क्या करना हमारे तपके प्रभाव से वे कोई भी परस्पर एक दूसरे को नहीं मारते ९७ बस इतना कहतेही इन्द्र स्त्री होगये व शक्ति पराक्रम से हतहोके अपने स्वर्ग को चले आये ९८ अब इन्द्र देवताओं की सभामें सदा न बैठनेलगे व इन्द्रको स्त्रीत्व को प्राप्त देख देव-गण बहुत दुःखित हुये ९९ तब सब देवगण इन्द्र को साथले व दुःखित इन्द्राणी भी संग में होके सब ब्रह्माजी के स्थान को गये १०० उस समय ब्रह्माजी समाधि में थे तब तक इन्द्रादि वहीं स्थितरहे जब ब्रह्माजी की समाधि भग्नहुई तो इन्द्रसहित सब देवतालोग बोले कि १०१ तृणबिन्दुमुनि के शापसे इन्द्र स्त्रीत्व को प्राप्त होगये हैं व हे ब्रह्मन्! वे मुनि बड़े क्रोधी हैं अनुग्रह नहीं करते १०२ ब्रह्माजी बोले कि महात्मा तृणबिन्दु जी का कुछ अपराध नहीं है इन्द्र स्त्रीवध करनेके का-रण अपने कर्मही से स्त्रीत्व को प्राप्तहुये हैं १०३ व हे देवताओ! देवराजने बड़ी अनीति की है कुबेर की स्त्री चित्रसेना को हरलिया है व उसे गुप्त रखते हैं १०४ व इसको छोड़ तृणबिन्दु के तपोबन में एक स्त्री को मारडाला है उस कर्मविपाक से इन्द्र स्त्री के भाव को पहुँचे हैं १०५ यह सुन देवगण बोले कि हे नाथ! जो इन दुर्बुद्धिवाले इन्द्र ने यह अनीति की है उसको इन्द्राणी सहित हमलोग मिटावेंगे १०६ हे विभो! जो कि कुबेर की स्त्री छिपीहुई यहां है उसे हमलोग सम्मति करके कुबेर को देदेंगे १०७ व त्रयोदशी और चतुर्दशी

क्रिया करेंगे १०८ तब इन्द्राणी ने गुप्त चित्रसेना को अपने संगले कुबेर के भवन में जाके छोड़ दिया क्योंकि उनके छोड़े बिना अपने प्रिय का कष्ट मिटताहुआ इन्द्राणी ने न देखा १०९ तब अकाल में एक दूत कुबेरपुरी से लङ्कापुरी को गया व उसने कुबेर से चित्र-सेना के आने के समाचार कहे ११० कि हे धनाधिप! इन्द्राणी के साथ तुम्हारी कान्ता आई व अपनी सखी को प्राप्त होके चरितार्थहुई १११ यह सुन कुबेर भी कृतार्थ हुये व अपने स्थान को गये तब देवताओं ने आकर फिर ब्रह्माजी से कहा कि हे ब्रह्मन्! तुम्हारे प्रसाद से हम लोगों ने यह सब किया इसमें संशय नहीं है ११२ पर जैसे पतिहीन नारी नहीं शोभित होती व विना स्वामी की सेना व श्रीकृष्ण विना गोकुल वैसेही विना इन्द्रके अमरावती नहीं शोभितहोती ११३ अब इन्द्रके लिये कोई जप क्रिया तप दान ज्ञान तीर्थ आप बतावें जिसके करने से इनका स्त्रीत्व छूटे ११४ ब्रह्मा जी बोले कि मुनि का शाप न हम मिटासक्ते हैं न शङ्कर व विष्णुके पूजन को छोड़ और कोई तीर्थ भी ऐसा नहीं देखते जो मुनि का शाप मिटासके ११५ अब अष्टाक्षर मन्त्र से इन्द्र तबतक श्रीविष्णुकी पूजाकरें व मन्त्र जपें कि जबतक स्त्रीत्व से न छूटें ११६ हे इन्द्र! तुम स्नानकरके एकाग्रमनसे श्रद्धायुक्त हो अपनी शुद्धि के लिये "ॐनमोनारायणाय" इस मन्त्र को जपो ११७ जब दो लाख मन्त्र जपोगे तब स्त्रीभाव से छूटजाओगे यह ब्रह्मा का वचन सुन इन्द्रने वैसाही किया विधिसे

दोलक्ष अष्टाक्षर मन्त्र जपा ११८ तो श्रीविष्णुजी के प्रसाद से स्त्रीभाव से छूटगये मार्कण्डेयजी सहस्रानीक जी से बोले कि तुमसे यह सब उत्तम विष्णुजीका माहात्म्य हमने ११९ भृगुमुनि के कहने से कहा तुम निरालस हो यह सबकरो ॥

हरिगीतिका ॥

अखिल कारण अघ उधारण विष्णु गाथा जो सुनैं ।
है पापरहित परब्रिगासी जो कबूँ मनसों गुनैं ॥
सब जाहिं हरिपुर शंक नाहीं बहुरि आदर जो करें ।
सोऊ महाखल पतितपामर पापततिहतिकैतरें ॥ १ । १२० ॥
पुनि सूत बोले मुनिनसों इमि नृपहि संबोधित कियो ।
भृगुवर्यमुनिसों हरिचरित सुनि हरिभजनमहँ चितदियो ॥
आराध्य प्रभुहि महीपमणिगो विष्णुपदकहँ निर्भयम् ।
यहदिव्यगाथा सुनै अरु पुनि कहै पावै सो जयम् ॥ २ । १२१ ॥

चौपाई ॥

भरद्वाजमुनि यह तुमपाहीं । सहसनीक नृप चरित कहाहीं ॥
बहुरिकहाअबचहतकहौसब। वर्णनकरिहैंहमनीकेअब ३ ।१२२
जोनरसुनै पुरातनि गाथा । मुक्तिदायिनी होत सनाथा ॥
सोहरिपुरकहँजातनशङ्का । निर्मलज्ञानलहतशुभअङ्का ४।१२३

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेऽष्टाक्षरमन्त्रमाहात्म्य निरूपणन्नामत्रिषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६३ ॥

चौसठवां अध्याय ॥

दो० चौंसठयें महँ सूत ना, रायणभजन महत्त्व ।
पुण्डरीक देवर्षि सम् ,वादक कह्यो सतत्त्व ॥ १ ॥

इतनी कथा सुन भरद्वाजजी ने सूतजी से यह प्रश्न

किया कि हे सूतजी! कोई लोग तो सत्य वचन की
प्रशंसा करते हैं कोई तप की कोई शौच की कोई सां-
ख्यशास्त्र की प्रशंसा करते हैं व कोई योग की १ कोई
ज्ञान की प्रशंसा करते कोई मिट्टी के ढीले लोहे पत्थर
व सुवर्ण को समान समझने की प्रशंसा करते हैं व
कोई क्षमा की बड़ाई करते व वैसेही कोई दयाकरने व
सरलता से रहने की प्रशंसा करते हैं २ कोई दान करने
की प्रशंसा करते कोई कहते हैं कि परमेश्वर शुभ है
कोई कहते हैं कि अच्छे प्रकार का ज्ञान अच्छा होता
है कोई वैराग्य को उत्तम मानते हैं ३ कोई कहते हैं
कि अग्निष्टोमादि कर्म श्रेष्ठ हैं कोई आत्मज्ञान को
सबसे श्रेष्ठ कहते हैं इसको सांख्यतत्त्व के जाननेवाले
प्रधान कहते हैं ४ इस प्रकार धर्म अर्थ काम व मोक्ष
इन चारों के लिये केवल उपाय व नाश के भेद से
बहुधा ऐसा सबलोग कहते हैं ५ जब लोक में कृत्य
अकृत्य के विधान ऐसे हैं तो मनुष्य केवल व्यामोह
ही को प्राप्त होते हैं अपने मनसे सब सुकही बैठरहते
हैं ६ इन सबों में जो परम उत्तम होने के कारण
अनुष्ठान करने के योग्य हो वह आप कहने के योग्य
हैं क्योंकि सर्वज्ञ हैं पर इसका भी विचाररहे कि वह
हमारे सब अर्थों का साधक हो ७ सूतजी बोले कि, सुनो
यह संसार को छुड़ानेवाला अत्यन्तगूढ़ है इस विषय
में एक पुरातन यह इतिहास परिडतलोग कहते हैं ८
उसमें पुण्डरीकमुनि व देवर्षिनारदजी का संवाद है
एक वेदसम्पन्न महामति पुण्डरीकनाम ब्राह्मण थे ९

वे ब्रह्मचर्याश्रम में टिके गुरुओं के वशमें रहते थे जितेन्द्रिय थे क्रोधको जीतेरहते व सन्ध्योपासन कर्म में बड़े नैष्ठिक थे १० वेद व वेदके षडङ्गों में निपुण थे व षट्शास्त्रों में अतिविचक्षण थे समिधों से सूर्य व अग्नि की सेवा प्रातःकाल यत्नसे करते थे ११ यज्ञपति विष्णुजी का ध्यानकर व श्रीविभु की आराधनाकरते हुये तपस्या व वेदाध्ययनमें निरतहोने से साक्षात् ब्रह्मपुत्रही के समान होगये थे १२ जल इन्धन व पुष्पादि लेआने आदि कर्मों से बार २ अपने गुरुओं को उन्होंने सन्तुष्ट करलियाथा माता पिता की भी बड़ी भारी शुश्रूषाकरते थे व भिक्षा के अन्न का आहारकरते सब जनों को बड़े प्रिय रहते थे १३ वेद विद्या को सदा पढ़ते व प्राणायाम करने में परायण रहते सब अर्थों के रूप उन ब्राह्मणदेव को संसार में निस्पृहा होगई १४ हे महाराज ! उनकी बुद्धि संसार-सागर के उतरने की हुई इससे पिता माता भ्राता पितामह १५ पितृव्य मातुल सखा सम्बन्धी व बान्धवों को तृण के समान छोड़कर बड़ी प्रसन्नता व सुख के साथ १६ इस पृथ्वी पर शाकमूल फलाहार करते हुये विचरनेलगे उन्होंने यह विचारांश किया कि युवावस्था अनित्यहै रूप व आयुर्बलभी अनित्यहै व धन द्रव्यादिक का सञ्चयभी अनित्यहै १७ यही विचारते हुये उन्हों ने तीनोंलोकों को भी मिट्टी के ढेले के समान समझा व पुराणों के कहेहुये मार्ग के अनुसार सब तीर्थोंमें विचरेंगे १८ यह अपने मनमें निश्चयकरलिया

इससे गङ्गा यमुना गोमती व गण्डकी १९ शतरञ्ज पयोष्णी सरयू सरस्वती प्रयाग नर्मदा व सब महानदियों में व नदों में गये २० फिर गया विन्ध्याचलपर के सब तीर्थ व हिमवान्पर के तीर्थ व अन्य सब तीर्थों में भी महातेजस्वी व महाव्रत वे मुनि गये २१ इस प्रकार वे महाबाहु यथाकाल यथाविधि सब तीर्थों में विचरे घूमते २ वे बीर कभी शालग्रामतीर्थमें पहुँचे २२ जब महाभाग पुण्डरीकजी पुण्यकर्म के बशानुग होके उस तीर्थमें पहुँचे तो उसकी सेवा तत्त्व जाननेवाले और भी बहुत से तपोधन ऋषिलोग करते थे २३ वह तो पुराणों में प्रसिद्धही है कि मुनियों का रम्य आश्रमहै उसी तीर्थमें होकर चक्रनदी बहीहै इससे चक्रशिलाओं से वह चिह्नितहै २४ बड़ा रम्य विस्तीर्ण व एकान्त स्थल व सदा चित्तके प्रसन्न करनेवाला है कोई २ प्राणीभी वहांके चक्राङ्कितथे इससे उनका दर्शन पुण्यदायक था २५ व और भी पुण्यतीर्थ के प्रसंग से बहुत लोग यथेष्ट उसमें विचरतेथे उस महापुण्य शालग्राम तीर्थ में वे महामति २६ पुण्डरीकजी प्रसन्नात्मा हो तीर्थों की सेवा करनेलगे वहां सरस्वती नदी में एक देवह्रदतीर्थ है उसमें स्नानकरके २७ व जातिस्मरण करानेवाले चक्रकुण्ड में व चक्रनद्यमृत में व वैसेही अन्यभी बहुतसे तीर्थ वहां थे सबों में विचरते थे २८ तब क्षेत्र के प्रभाव से व तीर्थों के तेज से उन महात्मा का मन बहुत प्रसन्नहुआ २९ वे भी विशुद्धात्मा होके उसतीर्थमें योग ध्यानकरनेमें परायण हुये व जगत्पति

की आराधना करके उसी तीर्थ में सिद्धि की आकांक्षा करनेलगे ३० शास्त्रों के कहेहुये विधानसे व परमभक्ति से निर्द्वन्द्व व जितेन्द्रिय होके कुछ दिन वहां वे बसे ३१ शाक मूल फल का आहारकरते सन्तुष्ट व समदर्शी रहते यम नियम व आसन बांधने से ३२ तीक्ष्ण प्राणायामों से व निरन्तर प्रत्याहारों से धारणाओं से व ध्यानों से व समाधियों से निरालस हो ३३ उसके पीछे उन्होंने योगाभ्यास किया इससे उनके सब कल्मष दूरहोगये व उनमें चित्तलगाय देवदेवेश की आराधना की ३४ पुरुषार्थ में विशारद महाभाग पुण्डरीक विष्णु में मन लगाय उनके परमप्रसाद की आकांक्षा करतेहुये ३५ शालग्रामाश्रम में बसतेहुये उन महात्मा पुण्डरीकजी का बहुतकाल बीतगया ३६ तब हे भरद्वाजजी! परमार्थज्ञानी नारदमुनिजी एक समय वहां आये जोकि तेज से दूसरे आदित्यही के समान थे ३७ सो उन्हीं पुण्डरीकजी के देखनेही की इच्छा से वैष्णवों के हित में रत व विष्णुकी भक्ति से पवित्रात्मा नारदजी वहां आये ३८ सब तेज की दीप्ति से युक्त महामति महाप्राज्ञ सर्वशास्त्रविशारद श्रीनारदजी को आयेहुये देख ३९ पुण्डरीकजी ने हाथ जोड़ नम्र हो व हर्षित चित्त से यथोचित अर्घ्यदे प्रणाम किया ४० व अपने मन में विचारा कि उत्तम वेषधारण किये तेजस्वी अति अद्भुत आकार बीणा हाथ में लिये प्रसन्नचित्त जटामण्डल से भूषित ये कौनहैं ४१ सूर्य हैं अथवा अग्नि वा इन्द्र वा वरुण यह चिन्तना करतेहुये परम

तेजस्वी उन ब्राह्मणजी ने पूछा ४२ पुण्डरीकजी बोले कि हे परमप्रकाशवाले! आप कौनहैं जो यहां आके प्राप्त हुये हैं क्योंकि बहुधा आपके दर्शन इस पृथ्वी पर अपुण्यात्माओं को दुर्लभ हैं ४३ नारदजी बोले कि हे पुण्डरीक! तुम्हारे दर्शन के कुतूहल से हम नारद हैं यहां प्राप्तहुये हैं क्योंकि तुम्हारे तुल्य निरन्तर श्री हरिके भक्त ब्राह्मण का ४४ जो कोई स्मरण करता वा उसके संग सम्भाषण करता वा उसकी पूजा करता है तो वह चाण्डालभी हो पर वह द्विजोत्तम भगवद्भक्त उसे भी पवित्र करता है ४५ फिर हम तो देवदेव शार्ङ्ग धन्वावाले श्रीवासुदेवजी के दास हैं जब भक्ति से पर्याकुलात्मा नारदजी ने ऐसा कहा तो ४६ उनके दर्शन से अत्यन्त विस्मित हो वे ब्राह्मणदेव मधुर वचन बोले कि प्राणियों में हम आज धन्य हैं व देवताओं के भी पूजा करने के योग्य हैं ४७ आज हमारे पितर कृतार्थ हुये व इस समय जन्म धरनेका फल हुआ हे नारदजी! अनुग्रह कीजिये हम तुम्हारे विशेष भक्त हैं ४८ हे ब्रह्मन्! अपने कर्मों से भ्रमण करतेहुये हम कौन २ कर्म करें जो परमगुप्त करनेके योग्य हो उसका उपदेश देने के आप योग्य हैं ४९ आप सबलोगों की परमगति हैं पर वैष्णवोंके तो विशेष करके परमगति हैं श्रीनारदजी बोले कि, हे द्विज! इस संसार में अनेक शास्त्र हैं व अनेक कर्म हैं ५० व वैसेही प्राणियों के धर्ममार्ग भी बहुत हैं इससे हे द्विजोत्तम! इस जगत्की विलक्षणता है ५१ कोई लोग तो ऐसा कहते हैं कि यह

सब जगत् ब्रह्मसे उत्पन्न होता है व उसीमें जाकर लीन भी होजाता है ५२ व तत्त्वों के देखनेमें तत्पर अन्यलोग कहते हैं कि आत्मा बहुत व नित्य है व सवोंमें अलग २ प्राप्त हैं हे बुद्धिमानों में श्रेष्ठ ५३ इत्यादि वचनों की चिन्तनाकर व फिर जैसी उनकी मति होती व जैसा सुनते हैं नानामतों में विशारद ऋषिलोग वैसा कहते हैं ५४ परन्तु हे ब्रह्मन्! एकाग्रचित्त हो सुनो तुम से इस विषय में घोर संसार से छुड़ानेवाला परमगुप्त व परमार्थरूप यह कहतेहैं ५५ मनुष्यों की दृष्टि भविष्य भूत व कुछ दूरकी बात को नहीं ग्रहण करती इस लिये वर्त्तमान कालके पदार्थों को देख निश्चित होजाती है ५६ इससे हे प्रिय! एकाग्रचित्त होके सुनो जो पूछतेहुये हमसे पूर्वकाल में श्रीब्रह्माजी ने कहाहै वह तुमसे कहते हैं हे पापरहित! ५७ किसी समय ब्रह्मलोक में स्थित कमलयोनि पितामहजी से यथायोग्य प्रणाम करके हमने पूछा ५८ नारद बोले कि हे देव! वह कौन ज्ञान है जो सब से पर है व योग कौनसा है जो सबसे पर है हे पितामहजी! यह हमसे निश्चय करके आप कहें ५९ ब्रह्माजी बोले कि जो पुरुष प्रकृति से परे है व पचीसवां तत्त्व है वही सब पृथ्वी जल अग्नि वायु व आकाश इन महाभूतों का नर कहाता है ६० व नर से उत्पन्न सब चौबीसो तत्त्व नार कहाते हैं व वेही नारही अयन स्थान उनके हैं इससे वे नारायण कहाते हैं ६१ इससे यह सब जगत् नारायण है क्योंकि सृष्टि के समय नारायण से

उत्पन्न हुआ है व प्रलय के समय उन्हीं नारायणही में अच्छीतरह लीन होजाताहै ६२ इससे नारायण परब्रह्म हैं व परतत्त्वभी नारायणही हैं परञ्ज्योति भी नारायण हैं परात्माभी नारायण ही कहाते हैं ६३ व परसे भी पर नारायणही हैं व उनसे पर और कोई भी नहीं है इससे इस जगत् में जो कुछ दिखाई देता है व सुनाई देता है ६४ उसके भीतर व बाहर व्याप्त होके नारायण स्थित हैं ऐसा जानके देवलोग वार २ साकार जान के ६५ "ॐनमोनारायणाय" ऐसा कहतेहुये ध्यान करके फिर अन्य किसी के स्मरण करने में मन नहीं लगाते इससे उसको दानों से क्या है व तीर्थोंसे क्या है व तपों से क्या है व यज्ञोंसे क्या है ६६ जो अनन्यबुद्धि हो नित्य नारायण का ध्यानकरता है वस यही श्रेष्ठ ज्ञान है व यही परयोग है ६७ परस्पर एक दूसरे से विरुद्ध अर्थ कहनेवाले अन्य शास्त्रों के विस्तार से क्या है जैसे बहुत मार्ग होते हैं पर एकही पुरमें वे सब प्रवेश करते हैं ६८ ऐसेहीं सब ज्ञान उन्हीं नारायण ईश्वर में प्रवेश करते हैं क्योंकि वे नारायण सनातन देव सूक्ष्मस्वरूप से प्रकट हो सब में प्राप्त हैं ६९ व जगत् के आदि में भी थे व न उनके आदि में कुछ था न उनका अन्त कभी होता है व अपने आप वे उत्पन्न होते हैं फिर सबको उत्पन्न कराते हैं विष्णु विभु अचिन्त्यात्मा नित्य व सत् असत् सब के आत्मा हैं ७० वासुदेव जगद्वास पुराण कवि अव्यय ये सब उन्हीं नारायण के नाम हैं जिससे कि चर अचर सम्पूर्ण त्रैलोक्य उनमें स्थित है ७१ इस

से वे भगवान् देव विष्णु ऐसे नाम से पुकारे जाते हैं व युग के नाश में जिससे कि सब प्राणियों का व सब चौबीसों तत्त्वों का ७२ निवास उन्हीं में होता है इस से वे वासुदेव कहेजाते हैं व उन्हीं को कोई पुरुष कहते हैं कोई ईश्वर कोई अव्यय ७३ कोई किञ्चित् विज्ञानमात्र परब्रह्म कहते हैं व कोई आदि अन्तहीन काल कहते हैं व कोई सनातन जीव कहते हैं ७४ व कोई परमात्मा व कोई अनामय कोई क्षेत्रज्ञ ऐसा कहते हैं व कोई उनको छब्बीसवां कहते हैं ७५ व कोई अङ्गुष्ठमात्र उनका शरीर कहते कोई कमल की धूलि के समान कहते ये व और भी संज्ञाओं के भेद मुनियों ने पृथक् २ इन्हीं के किये हैं ७६ शास्त्रोंमें विष्णुही के सब ये नाम कहे हैं जिनसे लोगों को व्यामोह होता है इससे जो एकही शास्त्र हो तो संशयरहित ज्ञान हो ७७ और बहुत शास्त्रों के होनेके कारण ज्ञान का निश्चय अति दुर्लभ है इससे सब शास्त्रों को देख व फिर २ विचार करके ७८ यह एकसिद्धान्त हुआ है कि सदा नारायण ध्यान करनेके योग्य हैं इससे व्यामोह करने वाले सब शास्त्रोंके अर्थ विस्तारों को छोड़के ७९ अनन्यचित्त हो निरालस होके नारायण का ध्यानकरो ऐसा जानके उन देवदेव का निरन्तर ध्यानकरो ८० शीघ्रही वहां जाओगे व सायुज्यमुक्ति पाओगे इसमें संशय नहीं है इस प्रकार अतिदुर्लभ ब्रह्माजी का कहाहुआ ज्ञानयोग सुनके ८१ हे विप्रेन्द्र! तबसे हम नारायणपरायण हुये निरन्तर ब्रह्म नमोनारायणाय यह मन्त्र जो

कोई अपने मुखसे कहते हैं ८२ व अन्तकाल में भी जपते हुये प्राण छोड़ते हैं वे विष्णुजी के परमपदको जातेहैं इससे हे तात! परमात्मा व सनातन देव नारायण ही हैं ८३ इससे तत्त्वकी चिन्ता करताहुआ पुरुष नित्य नारायण का ध्यानकरे नारायण जगद्व्यापी परमात्मा व सनातन हैं ८४ सब जगतोंके सृष्टि संहार व पालन में तत्पर रहते हैं इससे श्रवण करने पढ़ने व ध्यान करने से ८५ हित चाहनेवाले पुरुष को चाहिये कि उन्हींका ध्यानकरे हे ब्रह्मन्! जो लोग इच्छारहित नित्य संतुष्टचित्त ज्ञानी जितेन्द्रिय ८६ प्रीति अप्रीति विवर्जित पक्षरहित शान्तस्वभाव सर्वसंकल्पों से वर्जित ममतारहित व निरहंकार होते ८७ व ध्यानयोग में पर होते वे लोग जगत्पति को देखते हैं व महात्मा लज्जा छोड़के वासुदेव जगन्नाथ सबके गुरु श्रीहरि का ८८ कीर्त्तन करते हैं वे जगत्पति श्रीजगन्नाथजी को देखते हैं इससे हे विप्रेन्द्र! तुम भी नारायण में पर होओ ८९ नारायण से अन्य कौन वाञ्छित देनेमें समर्थ दानी है जो प्रभु निन्दापूर्वक भी कीर्त्तन करने से अपना पद देते हैं ९० इससे निश्चय करके जप वेदाध्ययन नित्य तुम उन्हीं देवदेवेश श्रीनारायण ही के उद्देशसे निरालस हो करो ९१ उनके विषय में बहुत मन्त्रों से क्या है व वहां बहुत व्रतों से क्या है "नमोनारायणाय" यही मन्त्र सब कार्यों के अर्थोंका साधक है ९२ हे द्विजश्रेष्ठ! चाहे चीर वस्त्र धारणकरे वा जटाधारी हो वा दण्डधारण करे वा मूँड़मुँड़ाये रहे

वा सब भूषण वस्त्रादिकों से भूषित रहे चिह्न धारण
करना कुछ धर्मका कारण नहीं है ६३ क्योंकि जो मनुष्य
क्रूरदुरात्मा सदा पापाचार में रत होते हैं पर नारायण
में परायण होने से वे भी परमस्थान को जाते हैं ६४
हम देवदेव शार्ङ्गधारी श्रीवासुदेवजी के दास हैं जिस
की ऐसी बुद्धि जन्मान्तर सहस्रों के पीछे भी होती
है ६५ वह पुरुष श्रीविष्णुजीकी सालोक्य मुक्ति पाता
है इसमें कुछभी संशय नहीं है व जो पुरुष अपनी
इन्द्रियों को जीत कर उन्हीं नारायणही में अपने प्राण
लगादेता है उसको क्या कहना है वह तो नारायणही
होजाता है ६६ सूतजी भरद्वाजजी से बोले कि यह कह
परोपकार करने में निरत व तीनों लोकों के मुख्यभूषण
नारदजी वहीं अन्तर्धान होगये ६७ व धर्मात्मा पुण्ड-
रीकभी नारायण में परायण हो "नमोऽस्तुकेशवाय"
ऐसा फिर २ उच्चारण करतेहुये ६८ व हे महायोगिन्!
प्रसन्नहोओ ऐसा सदा उच्चारण करके अपने हृदय
कमल में गोविन्द जनार्द्दनजी का प्रतिष्ठापन करके ६९
तपस्या की सिद्धि करनेवाले उस शालग्रामाश्रम में
पुरुषार्थ करने में बड़े चतुर तपोधन पुण्डरीकजी बहुत
कालतक बसे १०० व स्वप्नमें भी वे महातप करनेवाले
केशव से अन्य को नहीं देखते थे देखो उन महात्मा
की निद्राभी परमेश्वर के अर्थकी विरोधिनी न हुई १०१
तप ब्रह्मचर्य व विशेष शौच जन्मजन्मान्तर के आरूढ़
संस्कार से १०२ व देवदेव सब लोगों के एक साक्षी
श्रीविष्णुजी के प्रसादसे वे ब्राह्मण पापरहित होके

परमवैष्णवीसिद्धि को प्राप्त हुये १०३ यहां तक कि सिंह व्याघ्र व वैसेही और भी प्राणियों के मारनेवाले वन के जन्तु सहज विरोधको छोड़ उनके समीप इकट्ठे होनेलगे १०४ व हे द्विजश्रेष्ठ! सब अपनी इन्द्रियोंकी वृत्तियों को शान्त कर वहां बसनेलगे फिर कभी धीमान् पुण्डरीक के समीप श्रीभगवान् १०५ पुण्डरीकाक्ष जगन्नाथ आय प्रकट हुये जोकि शंख चक्र गदा हाथों में लिये पीताम्बर ओढ़े पुष्पों की माला पहिने थे १०६ श्रीवत्स से शोभित श्रीवास कौस्तुभमणि से भूषित थे गरुड़पर आरूढ़ हो अञ्जन के पर्वत के समान शोभित होते १०७ उस समय सुमेरु के शृंगपर आरूढ़ बिजली समेत श्यामबादल के समान शोभाथी व मोतियों की झालर लटकतेहुये चांदी के छत्र से शोभित थे १०८ व चामर व्यजनादि सब अपूर्व थे उनसे भी शोभित होते थे उन देवदेवेश को देखकर पुण्डरीकजी हाथ जोड़के १०९ शिर के बल भूमिपर गिरपड़े व भय के मारे और भी अवनत होगये व मानों हृषीकेशजी को दोनों नेत्रों से पानही कियेलेते थे इससे बनाय आकुल होगये थे ११० फिर पुण्डरीक बड़ीभारी तृप्ति को प्राप्त हुये बहुत दिनों से नारायणजी का दर्शन चाहते थे इससे उन्हींको देखतेहुये खड़े होरहे १११ तब भगवान् कमलनाभ त्रिविक्रमजी उन मुनि से बोले कि हे महामते, वत्स, पुण्डरीक! हम तुम्हारे ऊपर प्रसन्नहुये ११२ तुम्हारे मन में जो वर्त्तमान हो वर मांगो देंगे सूतजी भरद्वाजजी से बोले कि देवदेवका भाषित इतना वचन

सुन ११३ महामति पुण्डरीकजीने यह विज्ञापित किया पुण्डरीकजी बोले कि कहां मैं अत्यन्त दुर्बुद्धि व कहां अपना हित अच्छीतरह से देखना ११४ इससे हे माधव! हे देवेश! जो मेरा हितहो उसे आपही विज्ञापितकरें जब पुण्डरीक ने ऐसा कहा तो अच्छीतरह प्रसन्न हो श्रीभगवान्जी फिर ११५ हाथ जोड़े समीप खड़े हुये पुण्डरीकजी से बोले कि हे सुव्रत! तुम्हारा कुशल हो हमारेही साथ आओ ११६ हमाराही रूप धारण किये नित्यात्मा हो हमारेही पार्षद होओ सूतजी बोले कि भक्तवत्सल श्रीधरजी के ऐसा कहतेही ११७ देवताओं के नगाड़े बाजे व पुष्पों की वर्षाहुई व इन्द्रादिदेवता व सिद्धों ने साधु २ उच्चारण किया ११८ सिद्ध व गन्धर्वोंने गाया व किन्नरोंने विशेष गानकिया फिर उन मुनिको ले जगत्पति श्रीवासुदेवजी ११९ सब देवताओं से नमस्कृत हो गरुड़ पर आरूढ़ होके चलेगये इससे तुमभी हे विप्रेन्द्र! विष्णुभक्ति से युक्त हो १२० उन्हीं में चित्त लगा व उन्हीं में अपने प्राण पहुँचाके व भक्तों के हित करने में तत्पर हो यथायोग्य पूजा करके पुरुषोत्तमजी को भजो १२१ व॥

चौपाई॥

सर्वपापनाशिनि हरिगाथा। पुण्यरूप सुनि होहु सनाथा॥
ज्यहिउपायसों विष्णु द्विजेन्द्रा। सर्वेश्वरवाहनविहगेन्द्रा॥१२२
विश्वात्मा प्रसन्न तुम पाहीं। होहिं करहु सो कृपा न काहीं॥
अश्वमेधशत अरु बजपेया। सहस किये जो गति नहिंज्ञेया॥१२३
नारायणसों विमुख परानी। तहँहिं पुण्यगति नाहिं हम मानी॥

अजर अमर नहिं आदि न अन्ता। निर्गुण सगुण आदि भगवन्ता ३।१२४
स्थूल सूक्ष्म अत्यन्त निरूपम। उपमायोग्य योगि ज्ञानकगम॥
त्रिभुवनगुरु त्वहिं नमत महेशा। हैं प्रसन्न विनवौं भक्तेशा ४।१२५॥

इति श्रीनरसिंहपुराणे भाषानुवादे पुण्डरीकनारदसंवादे चतुष्षष्टितमोऽध्यायः॥ ६४॥

पैंसठवां अध्याय॥

दो० पैंसठयें महँ विष्णु के, गुह्य क्षेत्र सहनाम।
सूत कह्यो मुनिसों सकल, जो सबपूरणकाम॥१॥

इतनी कथा सुन फिर भरद्वाजजी ने पूछा कि तुमसे अब श्रीहरिके गुह्यक्षेत्र सुना चाहते हैं व उनके पाप हरनेवाले नामभी बताओ १ सूतजी बोले कि, मन्दराचल पर बैठेहुये शंख चक्र गदा धारण कियेहुये देवदेव केशव श्रीहरिदेव से ब्रह्माजी एक समय पूछनेलगे २ ब्रह्माजी बोले कि हे हरिजी! किन २ क्षेत्रों में हमारे व मुक्ति की कामना कियेहुये भक्तों के देखने के योग्य विशेष रीति से हो ३ हे जगन्नाथ! जो तुम्हारे गुह्यनाम व क्षेत्र हों व हे पद्म के समान विस्तृत नेत्रवाले तुमसे हम सुना चाहते हैं ४ निरालस होके मनुष्य क्या जपताहुआ सुगति पाता है हे सुरेश्वर! अपने भक्तों के हित के लिये वह हमसे कहो ५ श्रीभगवान्जी बोले कि हे ब्रह्मन्! हमारे गुह्यनाम व गुह्यक्षेत्र अभी सुनो हम निश्चय से कहते हैं ६ कोकामुख क्षेत्र में हमारा बाराहनाम है व मन्दराचलपर मधुसूदन कपिलद्वीप में अनन्त प्रभास में रविनन्दन ७ वैकुण्ठ में माल्योदपान महेन्द्राचल पर नृपात्मज ऋषभ में महाविष्णु व

द्वारका में भूपति ८ पाण्डुसह्य पर देवेश वसुरूढ़ में जगत्पति वल्लीवट में महायोग चित्रकूटपर नराधिप ९ नैमिष में पीतवास गोनिःक्रमण अर्थात् गोप्रतारतीर्थ में श्रीहरि शालग्रामक्षेत्र में तपोवास व गन्धमादन पर अचिन्त्य १० कुब्जागार में हृषीकेश गन्धद्वार में पयोधर सकल में गरुड़ध्वज व सायक में गोविन्द नाम है ११ वृन्दावन में गोपाल मथुरा में स्वयम्भव केदार में माधव व वाराणसी में माधव १२ पुष्कर में पुष्कराक्ष धृष्टद्युम्न में जयध्वज तृणबिन्दुवन में वीर सिन्धुसागर में अशोक १३ कसेरट में महाबाहु तैजस वन में अमृत विश्वासयूप में विश्वेश महावन में नरसिंह १४ हलांगर में रिपुहर देवशाला में त्रिविक्रम दशपुर में पुरुषोत्तम कुब्जक में वामन १५ वितस्तातीर पर विद्याधर वाराहक्षेत्र में धरणीधर देवदारुवन में गुह्य कावेरी में नागशायी १६ प्रयाग में योगमूर्ति पयोष्णी में सुदर्शन कुमारतीर्थ में कौमार लोहित में हयशीर्षक १७ उज्जयिनी में त्रिविक्रम लिंगकूट में चतुर्भुज भद्रा में हरिहर को देख पाप से छूटजाता है १८ कुरुक्षेत्र में विश्वरूप मणिकुण्ड में हलायुध अयोध्याजी में लोकनाथ कुण्डिन में कुण्डिनेश्वर १९ भाण्डारमें वासुदेव चक्रतीर्थ में सुदर्शन आढ्य में विष्णुपद शूकर में शूकरही नाम कहाजाता है २० मानसतीर्थ में ब्रह्मेश दण्डकारण्य में श्यामल त्रिकूटपर नागमोक्ष व मेरुपृष्ठपर भास्कर २१ पुष्पभद्रा में विरज केरलक में बाल विपाशा के तीरपर यशस्कर व माहिष्मती में

हुताशन २२ क्षीरसागर में पद्मनाभ विमल में सनातन शिवनदी में शिवकर गया में गदाधर २३ व सर्वत्र परमात्मा इससे जो सर्वत्र परमात्मा को देखता है वह भवबन्धन से छूटजाता है अरसठनाम हमने तुमसे कहे २४ व इतनेही गुह्यक्षेत्र भी विशेषता से कहे हे ब्रह्मन्! इतने हमारे नाम २५ जो कोई प्रातःकाल उठके पढ़े वा नित्य सुने वह लक्ष गोदान करने का फल पावे २६ प्रतिदिन स्नानादि करके पवित्रहो इतने नाम जो पढ़े उसको हमारे प्रसाद से दुस्स्वप्न न हो इसमें संशय नहीं है २७ अरसठनाम जो मनुष्य त्रिकाल पढ़े वह सब पापों से विमुक्तहो हमारे लोकमें जाके हर्षित होतारहे २८ यथाशक्ति मनुष्योंको ये क्षेत्र देखने चाहियें वैष्णवोंको तो विशेष करके देखने चाहियें क्योंकि इनके देखनेवालों को हम अवश्य मुक्ति देतेहैं॥ २९ ॥

चौपैया ॥

तब सूत सुबोले वचन अमोले जो पूजै हरिकाहीं।
ह्वै ताके आगे अति अनुरागे सुमिरै विष्णु सदाहीं॥
हरिवासरमाहीं बहुफलकाहीं तादिन पढ़े विशेखी।
पावै हरिलोका विगतविशोका स्तोत्रपढ़े जो देखी॥१॥३०॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेपञ्चषष्टितमोऽध्यायः॥ ६५ ॥

छाछठवां अध्याय ॥

दो० छासठयहुँ महँ तीर्थ के, नाम नये प्राचीन।
कहे सूत मुनि सों बहुत, देखहिं लोग प्रवीन॥१॥

सूतजी बोले कि, हे ब्रह्मन्! इन नामों से श्रीहरि का एक स्तोत्र उत्पन्नहुआ अब और जो नामहैं वे भी

हम से सुनो १ प्रथम सब पुण्य गङ्गातीर्थ है फिर यमुना फिर गोमती सरयू सरस्वती चन्द्रभागा चर्म्मण्वती २ कुरुक्षेत्र गया तीनों पुष्कर अर्बुद व महापुण्य नर्मदा इतने तीर्थ उत्तरदेश में हैं ३ तापी पयोष्णी ये दोनों बड़ी पुण्य नदियां हैं इनदोनों के संगमपर उत्तम तीर्थ व वैसेही ब्रह्मवती आदिकी मेखलाओं से बहुत तीर्थ बने हैं ४ सब पापों के क्षय करनेवाला एक विरज नाम महातीर्थ है व गोदावरी नदी सब कहीं महापुण्यवती है हे मुनिसत्तमो! ५ व तुङ्गभद्रा महापुण्या नदी है हे कमलोद्भव! जहां मुनियों से पूजितहो हम महादेव के साथ प्रीति से बसते हैं ६ व दक्षिणा गंगातरंगा कावेरी विशेषनदी व सह्यपर्वतपर आमलकग्राम में हम टिके रहते हैं हे कमलोद्भव! ७ व देवदेव के नाम से हे ब्रह्मन्! तुम हमारी वहां सदा पूजा करते हो वहां भी सब पापों के हरनेवाले अनेक तीर्थ हैं जिनमें स्नान करके व उनका जल पीके मनुष्य पापों से छूटता है ८ इस प्रकार मधुसूदन भगवान् ब्रह्मासे तीर्थ कहके चले गये व ब्रह्माजी भी अपने पुरको चलेगये ९ भरद्वाजजी इतनी कथा सुनकर फिर बोले कि उस आमलकग्राम में जितने पुण्यतीर्थ हैं हे धर्मज्ञ! वे सब हम से यथार्थ से वर्णनकरो १० क्षेत्रकी उत्पत्ति तीर्थयात्रापर्व वहां जो कुछ होता हो सब कहो क्योंकि वहां ये देवदेवेश ब्रह्माजी से आप पूजित होते हैं ११ सूतजी बोले कि, हे महामुने! पापनाशनेवाले व पुण्य सह्यामलक तीर्थ की उत्पत्त्यादि हम कहते हैं सुनो १२

पूर्वकाल में सह्यपर्वतके वनके उत्तम विभाग में एक आमलकी अर्थात् औंरा का बड़ाभारी वृक्ष था पण्डित लोग उसका महोग्रनाम कहते थे १३ उस वृक्ष के फल बहुत बड़े व रसीले मीठे होते थे देखने में भी बहुत दिव्य थे पर वृक्ष ऊंचा था इससे दुर्लभ थे १४ तब सब श्रेष्ठ ब्राह्मणोंसे भी श्रेष्ठ ब्रह्माजी महाफलों से युक्त उस बड़े भारी वृक्ष को देख १५ विचारने लगे कि यह क्या पदार्थ है फिर ध्यान की दृष्टि से देखा तो अच्छीतरह दिखाईदिया कि यह आमलकी का वृक्ष है १६ उसके ऊपर शंख चक्र गदा धारण कियेहुये मनुष्य व देवताओं के स्वामी श्रीविष्णुजी को देखा फिर जब उठकर देखा तो खाली केवल प्रतिमा थी १७ तब उस वृक्ष के नीचे जाय ब्रह्माजी अनाय जड़के पास बैठे व देवदेवेश अव्यय श्रीविष्णुजी की आराधना करनेलगे १८ लोक के पितामह ब्रह्माजी गन्ध पुष्पादिकोंसे नित्य पूजाकरने लगे द्वादश वा सप्त संख्याओं से नित्य श्रीहरि की पूजा ब्रह्माजी करते १९ फिर हे मुनिश्रेष्ठ ! उस तीर्थ का माहात्म्य न कहसके श्रीसह्यामलकग्राम में अव्यय देवताओं के देव व ईश श्रीविष्णुजी की २० आराधना करने से बारहमूर्तियों की पूजा करने के लिये बारह ब्रह्मा होगये व उस वृक्ष की जड़ से विष्णुके चरण से एक पश्चिममुख को तीर्थ निकला २१ वह पुण्य पापनाशन चक्रनाम तीर्थ होगया चक्रतीर्थ में स्नान करके मनुष्य सब पापों से छूटता है २२ व बहुत सहस्रों वर्षतक जाके ब्रह्मलोक में पूजित होता है वहीं एक

शंखतीर्थ भी हुआ उसमें स्नान करके मनुष्य वाज-
पेययज्ञ का फल पाता है २३ पौषमास में जब पुष्यार्क-
योग पड़ता है तब उस तीर्थ की यात्रा का दिन होता
है पूर्वकाल में गङ्गाजलसे भरीहुई ब्रह्माजी की कूँड़ी
उस पर्वतपर गिरपड़ी थी २४ जहां पर्वतपर वह
ब्रह्माजी की कूँड़ी गिरीथी वहां एक अशुभ हरनेवाला
तीर्थ होगया उस तीर्थ का कुण्डिकातीर्थ नाम हुआ
उसके समीप एक शिलागृहभी बनगया २५ उस तीर्थ
में जैसेही कोई मनुष्य स्नान करता है वैसेही सिद्ध
होजाताहै व जो मनुष्य तीन रात्रि वहां व्रत करके फिर
स्नानकरता है २६ वह सब पापों से विनिर्मुक्त हो
ब्रह्मलोक में जाके औरों से पूजित होता है कुण्डिका
तीर्थ से उत्तर व पिण्डतीर्थ से दक्षिण २७ तीर्थों में
गुह्य व उत्तम ऋणमोचन तीर्थ है तीन रात्रि वहां
रहकर जो स्नान करता है २८ हे ब्रह्मन्! वह तीनों
ऋणोंसे छूटजाता है इसमें संशय नहींहै व पिण्डस्थान
में जो अपने पितरोंका श्राद्धकरता है २९ व पितरों
के लिये सुन्दरपिण्ड बनाकर देता है उसके पितर
अच्छीतरहसे तृप्तहोके पितृलोकको जातेहैं इसमें कुछ
भी संशय नहीं है ३० व वहीं एक पापमोचनतीर्थ है
उसमें जो पांचदिन रहके स्नानकरता है सब पापोंको
क्षयकरके विष्णुलोकमें जाके मोदित होताहै ३१ व वहीं
बड़ीभारी धारा जो शिरपरधारण करता है वह सबयज्ञों
का फल पाके स्वर्गलोकमें पूजित होताहै ३२ वहीं
एक धनुःपातनाम महातीर्थ है उसमें जो स्नानकरता

है वह आयुर्योग फलपाके स्वर्गलोकमें पूजितहोता है ३३ व वहींशरबिन्दुतीर्थमें स्नानकरके मनुष्य इन्द्र-लोक को जाताहै व सह्यपर्वतपर वाराहतीर्थ में जो स्नान करता है ३४ व एकदिनरात्रि वहांबसता है वह वैष्णुलोक में जाके पूजितहोताहै व सह्यहीपर एक आकाशगंगा नाम उत्तमतीर्थ है ३५ उसमें शिलाके नीचे से श्वेतमृत्तिका निकलाकरतीहै उसमें जो मनुष्य स्नान करता है हे द्विजवरोत्तम ३६ सब यज्ञोंका फल पाके विष्णुलोकमें जाके पूजितहोताहै हे ब्रह्मन्! आम-लसह्यपर्वत से जो २ जल निकलताहै ३७ वहां तीर्थ ही जानो व उसमें स्नानकरने से पापों से छूटजाता है इससे जैसेही सह्यपर्वतपर कोई गया व स्नान किया कि सब पापों से छूटगया ३८ सह्यपर्वतपर उत्पन्न इन पुण्यतीर्थोंमें जो मनुष्य नरोंके इन्द्र श्रीहरिको सुन्दर पुष्प भक्तिसे देताहै वह पापसे छूट श्रीविष्णुजीमें प्रवेश करताहै ३९ अन्य तीर्थोंके जलोंमें एकबारका स्नान करना बहुतहै व गंगाजी में तो बार २ स्नानकरना चाहिये क्योंकि गङ्गा सर्वतीर्थमयी हैं व श्रीहरि सर्वदे-वमय हैं ४० गीता सर्वशास्त्रमयी है व सब धर्म दयापर है हे विप्र! इसरीतिसे तुमसे उत्तम क्षेत्रोंका माहात्म्य कहा ४१ व श्रीसह्यामलकग्राम के तीर्थों में स्नान करनेका माहात्म्य व फलभी कहा हे द्विजसत्तम! तीर्थों काभी जो तीर्थ है वह वह है जो देवदेव श्रीविष्णुजी के चरणके नीचे से निकला है ४२ दोनों जल सहस्र अश्वमेधयज्ञों के तुल्य हैं सो वे दोनों वेदवादीलोग

चक्रतीर्थ को बताते हैं इससे उसमें स्नान करने से मनुष्य फिर नहीं जन्मलेते व श्रीमधुसूदनजी के पादों के प्रणाम करके भी जन्म नहीं पाते ॥ ४३ ॥

हरिगीतिका ॥

गङ्गा प्रयाग सुपुण्य पुष्कर यमुन कुरुजांगल घने।
नैमिषरु काशी आदिजल सबबहुतकालन अघहने॥
पर हरिचरण जल तुरतही हरि पाप पावनही करै।
यासोंनिरन्तरसकलजन हरिचरणजलपीकैतरै॥४४॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेतीर्थप्रशंसाकरणे षट्षष्टितमोऽध्यायः ॥ ६६ ॥

सरसठवां अध्याय ॥

दो० सरसठयें अध्याय महँ, मानसतीर्थ बखान।
अरुअगस्त्यजलदानाविधि,ग्रन्थसमाप्तिसमान॥ १ ॥

सूतजी भरद्वाजजी से बोले कि हे द्विजसत्तम! इस प्रकार पृथ्वी से उत्पन्न भौम सब तीर्थ तुमसे हमने कहे परन्तु मानसी तीर्थ विशेष फलदायक होते हैं १ मन निर्मल रखना तीर्थ है व रागादिकों से व्याकुल न होनाभी तीर्थ है सत्य तीर्थही है सबके ऊपर दया करना भी तीर्थही है व इन्द्रियों को जीतना तीर्थहै २ गुरुकी शुश्रूषा तीर्थ व माताकीसेवा तीर्थ है अपने धर्मका करना तीर्थ व अग्निकी उपासनाकरना अर्थात् होमकरना तीर्थहै ३ इतने तो पुण्यतीर्थ हैं अब हमसे इस समय व्रत सुनो दिन रात्रि में एकहीबार भोजन करना व्रत है व दिनभर कुछ न खाना कुछ दिनरहेका भोजन वा दोघड़ी रात्रिबीतेका भोजन नक्तव्रत कहाता

है ४ पूर्णमासी व अमावास्याको एकबार भोजनकरे क्योंकि इनदोनों तिथियोंमें एकबार भोजनकरनेसे प्राणी पुण्यगति पाता है ५ व चतुर्थी, चतुर्दशी व सप्तमीको नक्तव्रत करे व अष्टमी और त्रयोदशीको भी क्योंकि इनमें नक्तव्रत करने से वाञ्छित फल मिलता है ६ हे मुनिश्रेष्ठ! नरसिंहजीकी अच्छे प्रकार पूजा करके एकादशी के दिन उपवास करने से सब पापों से करनेवाला छूटता है ७ जिसदिन रविवासर को हस्तनक्षत्र हो उस दिन सौर नक्तव्रत करनाचाहिये व उस दिन स्नानकर सूर्य के मध्य में श्रीविष्णु का ध्यानकर सब रोगों से छूटता है ८ जब अपने से दूनी छाया दिन में हो उसी का सौरनक्त नाम जानो रात्रि में भोजन करने का नक्त नहीं नाम है ९ गुरुवारयुक्त त्रयोदशी तिथि में प्रहर भर दिन चढ़े के लगभग तिल तण्डुल जल से देवों ऋषियों व पितरों का तर्पण करके १० व नरसिंहजी की पूजाकरके जो उपवास करता है वह सब पापों से छूटके विष्णुलोक में जाकर पूजित होता है ११ हे महामुने! जब अगस्त्यमुनि उदय को प्राप्त हों तो सात रात्रियों तक पूजाकरके महात्मा अगस्त्यजी को अर्घ्य देनाचाहिये १२ शंख में जलभर श्वेतपुष्प व अक्षत छोड़ श्वेत पुष्पादिकों से पूजित अगस्त्यजी को नीचे लिखेहुये मन्त्र से अर्घ्य दे ॥ १३ ॥

श्लोकौ ॥

काशपुष्पप्रतीकाश अग्निमारुतसम्भव ।
मित्रावरुणयोःपुत्र कुम्भयोने नमोऽस्तुते ॥ १४ ॥

आतापी भक्षितो येन वातापी च महासुरः।
समुद्रश्शोषितो येन सोऽगस्त्यः प्रीयताम्मम ॥१५॥

अर्थात्

दो० काशपुष्पसमकांतियुत, अग्नि पवन सम्भूत।
मित्रावरुणतनूज घट, भव प्रणमत हैं पूत ॥१।१४॥
आतापिहि भक्षण कियो, अरु वातापि महान।
जोशोष्यहुजलनिधिप्रसन,सोअगस्त्यभगवान२।१५॥

इसतरह जो कोई अगस्त्यजीकी दक्षिणादिशा की ओर मुख कर अगस्त्यजी को जलदान करता है वह सब पापों से छूटकर दुस्तर अन्धकार को तरता है १६ हे महामुनि, भरद्वाज ! मुनियों के समीप हमने तुमसे इस प्रकार नरसिंहपुराण कहा १७ (सर्ग) सृष्टि (प्रतिसर्ग) ब्रह्मादिकों की सृष्टि (वंश) मनु आदि राजाओं व ऋषियों का वंश (मन्वन्तर) स्वायम्भुवादि १४ (वंशानुचरित) सूर्यवंशी सोमवंशी राजाओं के चरित यह सब इस पुराणमें क्रमसे हमने कहा १८ यह पुराण प्रथम ब्रह्माजी ने मरीच्यादि ऋषियों से कहा था व मरीचिजी ने फिर अन्य सब ऋषियों से कहा तब मार्कण्डेयजीने भी सुना १९ फिर मार्कण्डेय जीने नागकुलमें उत्पन्न राजा से कहा फिर नरसिंहजी के प्रसाद से धीमान् श्रीव्यासजी ने पाया २० उनके प्रसाद से हमने पाया सो सब पाप नाशनेवाला यह नरसिंहजी का पुराण हमने तुमसे २१ मुनियों के समीप कहा तुम्हारे लिये स्वस्ति हो अब हम जाते जो कोई पवित्र हो यह उत्तमपुराण सुनता है २२

माघमासमें प्रयागमें स्नान करने का फल पाता है व जो कोई श्रीनरहरिकी भक्तिसे नित्य यह पुराण सुनाता है २३ सब तीर्थों का फल पाके विष्णुलोक में जाके पूजित होता है ब्राह्मणों के साथ इसे सुन महामुनि भरद्वाजजी ॥ २४ ॥

चौपाई ॥

सूतहि पूजि तहां मुनिसङ्गा । बसे जहां जनपावन गङ्गा ॥
सबमुनिगे जहँतहँ यह गावा । सर्वपापहर पुण्यप्रभावा १। २५
जो पुराण यह सुनतसुनावत। है प्रसन्न त्यहि हरि अपनावत ॥
देवदेव जब होत प्रसन्ना । सर्वपाप क्षयकरत ससन्ना २। २६
क्षीणपाप बन्धन सों लोगा । पावत मुक्ति रहित सब शोगा ॥
यामहँ नहिं सन्देह कछूका । सुनत पुराण पाप दो टूका३।२७॥

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेमानसतीर्थकथनन्नाम सप्तषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६७ ॥

[illegible]सठवां अध्याय ॥

दो० अरसठयें अध्याय म[illegible]ही फलस्तुतिसूत ।
सो सुनिमनगुनियहिपढ़हु, करिनिजमनमजबूत॥१॥

चौपाई ॥

बोले सूत सुनहु मुनिराया । यह नरसिंहपुराण सुनाया
सर्व पापहर पुण्यप्रदायक । दुःख [illegible] भायक१।
सकल [illegible]

जो पढ़िहैं सुनिहैं यहि केरो । पूर्ण अर्द्ध वा श्लोकसुटेरो ३।२
तिन्हें पापबन्धन नहिं कबहूँ । होत कहत मुनिकैचितसबहूँ ॥
यह विष्णवर्पित सकल पुराणा । पुण्यसर्वकामद परमाणा ३।३
करि हरिभक्ति पढ़ें जो सुनईं । तिनके फल सुनिये हम भनईं॥
शतजन्मार्जित पापसमूहा । छूटत तुरत करत बहु हूहा ४।४
अरु सहस्रकुल सुतते प्राणी । जाहिं परमपद रूपा न बाणी ॥
काह तीर्थ का धेनुप्रदाना । का तप का मख किये विधाना ५।५
जो प्रतिदिन हरितत्पर होई । सुनत पुराण सकल अघ खोई॥
जो उठि प्रात कबहुं नर कोई । पढ़े पद्य वीसक मन गोई ६।६
ज्योतिष्टोम यज्ञफल पाई । पूजित होवत हरिपुर जाई ॥
यह पवित्र अरु पूज्य पुराना । अज्ञानी सों कबहुं न भाना ७।७
विष्णुभक्त विप्रनके लायक । याकर श्रवण सकलसुखदायक॥
यहि पुराणकर श्रवण महाना । यहांवहां सब सुखदबखाना ८।८
श्रोता अरु पाठकगणकेरे । त्वरित पापनाशत नहिं देरे ॥
यहिमहँ कहा बहुत अवभाने।सुनहु मुनीश्वर करहु प्रमाने ९।९
श्रद्धासों वा श्रद्धाहीना । उत्तमसुनै पुराण प्रवीना ॥
भरद्वाजआदिकमुनिवृन्दा।भेक्तकृत्याद्विजाग्न्यविनिन्दा१०।१०
हर्षितह्वै किय सूत सुपूजा । मनसों छोड़ि सकलविधि दूजा॥
गेसबनिजनिजआश्रमकाहीं।सुमिरतसुमिरतहरिमनमाहीं ११।११

इति श्रीनरसिंहपुराणेभाषानुवादेऽष्टषष्टितमोऽध्यायः॥६८॥

हरिगीतिका ॥

ऽनवशशि १९४७शरदऽसितरविदशमिभाद्रसुमाससैं ।

भाषानुवाद महेशदत्त प्रसाद हरि हिय बास मैं ॥
किय पाय परम निदेश नवलकिशोरजी को पावनो ।
नरसिंह विशद पुराण केरो श्रवण सुखद सुहावनो ॥ १ ॥

शार्दूलविक्रीडितम् ॥

संवत्सरसपयोधिनन्दविधुगेपक्षेऽवलक्षेरवौ ।
भाद्रेशाहजहांपुरेनरहरेर्हिव्यम्पुराणंयमे॥
भाषावद्धमकार्य्यपण्डितसुदेक्षाम्यन्तुताद्धिरा ।
रामार्चेप्सुमहेशदत्तसुकुलैराज्ञापितैश्श्रीमता ॥ २ ॥

दो० स्वस्ति श्रीशुभगुणसदन, मुंशीनवलकिशोर ।
दानमान बुधजनन को, करत सदा नहिं थोर ॥ ३ ॥
यद्यपिगुणमण्डितसकल, पण्डितपण्डितआप ।
मानितवर भूपालके, पर अमान गत दाप ॥ ४ ॥
मान देत गुणलेत कहि, देत मधुर वर बैन ।
तासों सुनि मन गुनि भले, होत बुधन मन चैन ॥ ५ ॥
सो शोचत बहुकालसों, सकल पुराण समूह ।
भाषा माहिं प्रचारनो, करवावन करि ऊह ॥ ६ ॥
बहुत कराये जगतहित, छपवाये ते भूरि ।
स्वल्पमूल्य पर दीनहित, भेजिदेत बहु दूरि ॥ ७ ॥
तिन मोहूँ को आदरी, आज्ञाकरी बहोरि ।
तुम नरसिंहपुराण की, भाषा करहु निचोरि ॥ ८ ॥
जासों संस्कृत पठितनर, थोड़ेही यहि देश ।
भाषा पाठक बहु यही, भाषा करन निदेश ॥ ९ ॥

दोवे। सुकुलवहोरण रामतनय वर धीर धीरमणि नामा।
तासुइन्द्रमणिसुत तासुत विश्राम रामगुण धामा॥
तासुतनुज श्रीरजावन्द सुखकन्द द्विजन में ठीके।
अवधरामशुभनामसकलसुखधामतासुसुतनीके॥१०॥
विप्र महेशदत्त सुत ताके वारहवङ्कि प्रदेशा।
वहिरालयजनपद गोमतितट धनावली कृतवेशा॥
मैं उनकी आज्ञाधरि शिरपर श्रीनरसिंहपुराना।
भाषाकीनयथामतिवहुविधिकरिकैनिजचितध्याना ११
प्रतिश्लोक प्रतिचरण वहुरि प्रतिपद भाषांतरकीनी।
तदपि भूल जो होइ कहूँ बुध देखहिं दृष्टि प्रवीनी॥
पढ़ें सुधारि सकल निज मतिसों मोपर करें सनेहू।
जासों भ्रान्ति धर्म पुरुषनको भूलत सव न सँदेहू॥१२॥

समाप्तमिदन्नरसिंहपुराणम्॥